शहीद-ग्रन्थ-माला

गदर पार्टी का इतिहास

लेखक

प्रीतमसिंह पंछी

सम्पादक

बनारसीदास चतुर्वेदी

१९६१

आत्माराम एण्ड संस

काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

दो शब्द

श्री प्रीतमसिंह पंछी द्वारा लिखित 'गदर पार्टी का इतिहास' नामक पुस्तक मैंने प्रारम्भ से अन्त तक पढ़ी और लेखक के परिश्रम की मैं प्रशंसा करता हूँ। इसके साथ ही मुझे श्रद्धेय डॉ० खानखोजे महोदय की भूमिका भी पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। चूंकि गोपनीयता क्रान्तिकारी आन्दोलनों के लिए परम आवश्यक थी, और परिणामस्वरूप वे एक दूसरे से भली-भाँति परिचित भी न हो पाते थे, इसलिए यह सर्वथा स्वाभाविक ही है कि क्रान्तिकारियों द्वारा लिखे हुए विवरणों में एकांगीपन की झलक दीख पड़े।

दुर्भाग्य की बात है कि क्रान्ति के इतिहास के मसाले को संग्रह करने का कार्य इतने वर्ष बाद प्रारम्भ हुआ है, जबकि अनेक कार्यकर्ता इस लोक में नहीं रहे और उनके साथ बहुत-सी घटनाओं का वृत्तान्त भी सदा के लिए विलीन हो गया! जिन लोगों ने गदर पार्टी के इतिहास लिखे हैं अथवा अन्य आन्दोलनों के विषय में ग्रन्थों की रचना की है, उसमें उन्होंने अपने-अपने दृष्टिकोण को ही प्रधानता दी है।

यद्यपि श्री प्रीतमसिंह जी ने उपयोगी तथ्यों को संकलित कर दिया है, तथापि मुझे यह कहना पड़ेगा कि कुछ आवश्यक बातें छूट

भी गई हैं और एकाध ऐसी घटनाएँ, जिनका वृत्तान्त आना जरूरी था, नहीं आ सकीं। उदाहरण के लिए, सिंगापुर के विद्रोह वाला अध्याय लीजिए। उस अध्याय में लिखा गया है कि केवल एक मुस्लिम फौज थी, जिसने विद्रोह किया था। चूंकि मैंने स्वयं सिंगापुर में घूम-घूमकर सैकड़ों सिपाहियों को एकत्र किया था और उनके सामने भाषण भी दिया था, जिसकी प्रति अन्यत्र प्रकाशित की जा रही है, इसलिए प्रत्यक्षदर्शी होने के कारण मैं अधिकारपूर्वक कह सकता हूँ कि वहाँ उस समय एक राजपूत पलटन थी, दो सिख फौजें थीं और दो कम्पनी रंगड़ मुसलमानों की थीं, जो अपने को रंगड़ राजपूत कहते हैं। इसी प्रकार की अन्य भूलें भी इस ग्रन्थ में रह गई हैं, जिनका परिमार्जन तभी हो सकता है, जब इस आन्दोलन से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्तियों की, जो अब भी जीवित हैं, अनुभूतियों को लिपिबद्ध कर लिया जाय। खासतौर पर उन महानुभावों के संस्मरण महत्त्वपूर्ण होंगे, जिन्होंने प्रारम्भ से अन्त तक इसमें सक्रिय भाग लिया था।

इस अवसर पर मैं एक बात अवश्य कह देना चाहता हूँ, वह यह कि इस महान् यज्ञ में जिन तथाकथित छोटे-से-छोटे कार्यकर्ताओं ने अपने कर्त्तव्य का पालन किया, वे भी उसी प्रकार गौरव के अधिकारी हैं, जिस प्रकार उनके सुविख्यात नेता; बल्कि मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि इस संग्राम में जिन सैकड़ों भाइयों ने अपने जीवन को बलिदान कर दिया, वे हम लोगों से, जो अब तक जीवित हैं, कहीं अधिक वन्दनीय हैं।

अनेक बड़े नेताओं में, जो अब शासनारूढ़ हो गए हैं, एक कुप्रवृत्ति पाई जाती है। वे मामूली सिपाहियों की उपेक्षा करने लगे

हैं। जिन सीढ़ियों से वे चढ़े हैं, उन्हीं को धकेलने में वे अपने गौरव की वृद्धि समझते हैं! इस प्रसंग में मुझे विश्व-कवि शेक्सपीयर की कविता का एक अंश याद आ रहा है, जिसे मैंने बहुत वर्ष पहले पढ़ा था—"When he ascended the uppermost round, he began to scorn those base degrees by which he did ascend."

अर्थात्—'जब वह सर्वोच्च सीढ़ी पर पहुँचा तो नीचे की सीढ़ियों के प्रति, जिनकी मदद से वह ऊपर पहुँचा था, घृणा करने लगा।'

यह प्रवृत्ति कृतघ्नतापूर्ण तो है ही, साथ ही हमारे भविष्य की दृष्टि से भी हानिकारक सिद्ध होगी। जो सेनाध्यक्ष अपने भूतपूर्व सिपाहियों की भक्ति को साथ नहीं रख सकता, उसे किसी भावी संकट में नवीन योद्धा किस प्रकार प्राप्त हो सकेंगे?

अन्त में एक खतरे से मैं पाठकों को सावधान कर देना चाहता हूँ, वह यह कि जब से क्रान्तिकारियों के गौरव में वृद्धि होने लगी है, अनेक मनचले व्यक्ति उनके सम्बन्ध में कपोल-कल्पित कथाएँ छपा-छपाकर अपने स्वार्थ की सिद्धि करने लगे हैं। इस प्रकार कला और कल्पना की वेदी पर सत्य का बलिदान हो रहा है! मैंने अपने इस जीवन में कितने ही प्रतिष्ठित साथियों को फाँसी चढ़ते हुए देखा है और स्वाधीनता-संग्राम के कितने ही सिपाहियों के बलिदान का भी मैं साक्षी हूँ। यह अत्यन्त दुर्भाग्य की बात है कि इन शहीदों की कीर्ति-रक्षा के लिए अब तक कोई सुसंगठित प्रयत्न नहीं किया गया। आत्माराम एण्ड संस के श्री रामलाल जी पुरी ने 'शहीद-ग्रन्थ-माला' के कार्य को हाथ में लेकर निस्सन्देह एक अत्यन्त प्रशंसनीय यत्न

प्रारम्भ किया है।

अपने क्रान्तिकारी संगी-साथियों से मेरी विनम्र प्रार्थना है कि वे इस अवसर से लाभ उठायें और अपनी-अपनी अनुभूतियों को लिपिबद्ध कराके प्रकाशनार्थ श्री बनारसीदास चतुर्वेदी (९९, नार्थ एवेन्यू, नई दिल्ली) के पास भेज दें। एक बात का हमें ख्याल रखना है—वह यह कि किसी भी हालत में हम सत्य के साथ कंजूसी न करें और न किसी अत्युक्ति से काम लें। जिस महान् नाटक में हम लोगों को अपने-अपने पार्ट अदा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, वह स्वयं इतना महत्त्वपूर्ण है कि उसमें अत्युक्ति करने की आवश्यकता ही नहीं। साथ ही हमें इकतरफा बयान देने से भी बचना चाहिए। स्वाधीनता-संग्राम में जिन लोगों ने हमारे से भिन्न उपायों का अवलम्बन किया, उनके कार्य की उपेक्षा करने या उसे हिकारत की निगाह से देखने की नीति को हमें तिलांजलि दे देनी चाहिए।

स्वाधीनता-संग्राम का इतिहास तो तभी लिखा जा सकता है, जब सर्वप्रथम सम्पूर्ण मसाले को विधिवत् संग्रह कर लिया जाय और यह काम दो-चार आदमियों का नहीं। इसके लिए तो देश के भिन्न-भिन्न भागों में बीसियों कार्यकर्ताओं को उद्योग करना पड़ेगा। सरकार के द्वारा तथा निजी तौर पर भी कुछ प्रयत्न इस दिशा में हुए हैं, यद्यपि वे अधूरे और एकांगी ही हैं। यह आशा करना कि सरकार इस कार्य को पूरा कर सकेगी, निरर्थक ही होगा। हाँ, यदि सरकार से मसाला संग्रह करने के कार्य में कुछ आर्थिक सहायता मिल सके, तो उसे सहर्ष स्वीकार कर लेना चाहिए।

एक बात और भी निवेदन करनी है, वह यह कि इस यज्ञ को हमें राजनैतिक वाद-विवादों से ऊपर उठकर सभी दलों के कार्य-

कर्ताओं के सहयोग से पूरा करना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि हमारे कुछ साथी साम्प्रदायिक संस्थाओं में चले गए हैं और कुछ साम्यवादी भी बन गए हैं। पर उनके वर्तमान राजनैतिक रंग से हमारा कोई सरोकार नहीं। हमें तो उनके जीवन के केवल उसी भाग को चित्रित करना है, जिसमें वे सशस्त्र क्रान्ति अथवा सत्याग्रह द्वारा मातृभूमि की गुलामी की जंज़ीरों को काट रहे थे।

सुना है शीघ्र ही क्रान्तिकारियों की एक परिषद् दिल्ली में होने वाली है। उसमें भाग लेने वाले भाइयों से मैं विनम्रतापूर्वक आग्रह करूंगा कि वे अपनी अनुभूतियों के विषय में एक-दो लेख लिखकर लायें। खास तौर पर उन छोटे-से-छोटे कार्यकर्ताओं के जीवन-वृत्तान्तों को जनता जानना चाहती है, जिन्होंने सर्वथा निःस्वार्थपूर्वक अपने जीवन को स्वाधीनता की वेदी पर बलिदान कर दिया था। कविवर दिनकर जी के शब्दों में—

कलम आज उनकी जय बोल
जो चढ़ गए पुण्य वेदी पर
लिए बिना गर्दन का मोल।
साक्षी हैं जिनकी महिमा के
सूर्य, चन्द्र, भूगोल, खगोल ॥
कलम आज उनकी जय बोल।

—पं० परमानन्द (झाँसी)

भूमिका

'लाल-बाल-पाल' ने भारत स्वातंत्र्य युद्ध की कल्पना भारतीयों को सिखलाई। सभी तरीकों से भारत की स्वाधीनता प्राप्त करना यह गुरुवर तिलक महाराज का गदरी जवानों के लिये मंत्र था। रैंड के ऊपर आक्रमण करने वाले वीर चाफेकर के कृत्य का समर्थन करने के कारण लोकमान्य को कड़ी कैद भुगतनी पड़ी। चाफेकर जी के पराक्रम को भारतीय स्वतंत्रता का सम्पादन करने वाली गुप्त संस्था का प्रथम कार्य माना जाना चाहिए। बान्धव समाज की स्थापना किसी गुप्त संस्था के द्वारा युद्ध करके भारत की स्वाधीनता सम्पादन करने के लिये ही हुई थी। उसकी शाखाएँ महाराष्ट्र, बंगाल और पंजाब में फैली हुई थीं। वर्धा की तरफ से हनुमन्त नायडू, लक्ष्मण शर्मा आदि बान्धव लाहौर गये थे। लाहौर में प्राध्यापक पूरनसिंह से उन्होंने बम बनाना सीखा था। लाहौर में तथा गुरुकुल कांगड़ी में भी गुप्त बान्धव समाज स्थापित हुए थे। उनको बाहर से लाला लाजपत-रायजी की मदद मिलती थी और भाई परमानन्द, सूफी अम्बाप्रसाद, अजीतसिंह, पंडित काशीराम आदि बान्धव इस क्रान्ति-कार्य की तन-मन-धन से सेवा करते थे। फिर बंगाल का विभाजन हुआ। अनुशीलन-समिति की सहायता बंगाल को मिली और गोपनीय ढंग से लड़कर भारत को आजाद करने वाली पार्टी बढ़ने लगी। सन् १९०६-

१९०७ से बान्धव समाज ने अपने क्रान्ति-सेवक रणशास्त्र और युद्ध सम्बन्धी दूसरे विषय सीखने के लिए जापान, अमेरिका को भेजने की कोशिश की और उस कार्य में उनको यश भी प्राप्त हुआ। चीन, जापान में डा० सनयट सेन के चीनी क्रान्तिकारियों से भारतीय बन्धुओं ने सहयोग लिया। सेगान, शांघाय, हांगकांग और टोकियो में भारत स्वातंत्र्य पार्टी आजादि-ए-हिन्दुस्तान स्थापित हुई। वहाँ पर गुप्त रीति से प्रचार-कार्य उन्होंने प्रारम्भ किया और फिर थोड़े से लोग सन् १९०७ में अमेरिका में गए। वहाँ पर सैनिक विद्यालय (मिलिटरी अकेडेमी) और कैलिफोर्निया की सेना में विस्फोटक प्रयोग करके शस्त्र-विज्ञान के विषय में व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किया। १९१० में मैक्सिको सोशलिस्ट और किसानों की क्रान्ति सेना में मिलकर क्रान्ति युद्ध का अनुभव लिया गया। पोर्टलैंड के नजदीक लम्बर मिलों में बहुत से पंजाबी भाई लकड़ी चीरने का काम करते थे। पंडित काशीराम मिल में ठेकेदार थे और सबकी सहायता करते थे। उनकी मदद से आजादि-ए-हिन्द पार्टी स्थापित हुई। सियाटल में अलार्का, युकोन, पैसिफिक Explosion हुआ।

क्रान्तिकारी बान्धवों को वहां जाने की स्फूर्ति मिली। इस तरीके से कैलिफोर्निया, आरेगन और वाशिंगटन स्टेट में भारत स्वातंत्र्य पार्टी का प्रचार जोर से शुरू हुआ। वहां से वेनकोवर इत्यादि स्थानों में जाकर उन्होंने कार्य प्रारम्भ किया।

कनाडा और अमेरिका इमिग्रेशन के एशियाई भारत विरोधी कानून से यह भारत स्वातंत्र्य सम्बन्धी गुप्त प्रचार बढ़ता चला। फिर भाई परमानन्द और हरदयाल अमेरिका आये। लाला हरदयाल के आग्रह

पर आजादि-ए-हिन्दुस्तान या भारत स्वातंत्र्य पार्टी का नाम 'गदर पार्टी' हुआ और इसी नाम से आगे का सब प्रचार होने लगा। गदर प्रचार पंजाबी (गुरुमुखी), हिन्दी, उर्दू, मराठी और गुजराती भाषा में भी शुरू हुआ लेकिन पंजाबी बान्धवों की संख्या सबसे ज्यादा होने के कारण पंजाबी अखबार द्वारा ही सर्वोत्तम प्रचार हो सका। पंडित काशीराम और भाई सोहनसिंह ने ही आजादि-ए-हिन्दुस्तान और फिर 'गदर पार्टी' बनाने के लिए पहले से ही मदद की थी। पंडित काशीराम ने अपनी सब सम्पत्ति गदर पार्टी को दे दी थी और वह पिंगले आदि के साथ भारत-स्वातंत्र्य का ध्यान करते-करते फाँसी पा गए।

गदर का इतिहास हजारों देशभक्तों तथा सैकड़ों शहीदों का इतिहास है। इस इतिहास का पूरा-पूरा ज्ञान किसी एक व्यक्ति के लिए असम्भव था। कोई भी ऐसा एक व्यक्ति नहीं, जिसे सब इतिहास पूर्ण रूप से ज्ञात हो। जिसने जो कार्य किया उसे ही वह बतला सकता है, तो भी गदर पार्टी का इतिहास लिखने का यह प्रयत्न प्रशंसनीय है। परन्तु इसके अलावा भाई सोहनसिंह भकना, टुण्डीलाट भाई भगवानसिंह और बहुत से गदरी अभी भी जिन्दा हैं। उनसे पूछकर और अमेरिका, भारत, कैलिफोर्निया, सानफ्रान्सिस्को और शिकागो में गदरियों के जो मुकदमे कोर्ट में हुए और जिनका रिकार्ड सरकारी दफ्तरों में अभी भी मौजूद है, उन सबको इकट्ठा करके ही गदर के विस्तृत इतिहास की कल्पना की जा सकती है।

गदर पार्टी के इतिहास में बर्लिन कमेटी, कान्सटेटीनोपल कमेटी, सूफी अम्बाप्रसाद जी की शीराज कमेटी, राजा महेन्द्रप्रताप, मौलवी बरकतुल्ला आदि द्वारा अफगानिस्तान में अस्थायी भारत राज्य की

स्थापना और अस्थायी राज्य-सेना, ईरान की सरहद, बलूचिस्तान, तथा सीमा प्रदेश में हमारी भारत स्वातन्त्र्य सेना (गदर आर्मी) द्वारा जनरल डायर और जनरल साइक्स की अंग्रेजी सेना से किया हुआ युद्ध, और मृत्यु के कुछ दिन पहले लोकमान्य तिलक द्वारा गदरियों को दिया हुआ आखिरी उपदेश आना चाहिए। लाला हरदयाल, भाई परमानन्द, श्यामजी कृष्ण वर्मा, मैडम कामा और लोकमान्य तिलक का गदरियों से जो घनिष्ट सम्बन्ध था, गदरी उसे कभी नहीं भूल सकते। गदरियों ने अंग्रेजों से लड़कर प्रथम स्वतन्त्र भारत की स्थापना की थी, बाद में नेताजी सुभाष ने उसे बढ़ाया और अन्त में महात्मा गांधी जी के प्रयत्न से सर्वमान्य प्रस्तुत स्वाधीनता प्राप्त हुई।

गदरियों का इतिहास एक अप्रकाशित इतिहास है, जैसाकि मैं कह चुका हूं। एक गदरी को उसका जो हाल मालूम है उसे दूसरा गदरी नहीं जानता, यह कार्य इतना विशाल है। गदरियों ने यह कार्य आत्मविज्ञापन के लिए अथवा धन की लालसा से कभी नहीं किया, केवल मातृभूमि को—भारत को—स्वाधीनता दिलाने के लिए भारत की सेवा में प्राणार्पण करना ही गदरियों का उद्देश्य था। इस भारत स्वातन्त्र्य के लिए संयुक्तराज्य अमेरिका में दस हजार गदरियों की सेना इकट्ठी की गई थी और तदर्थ बहुत-सी युद्ध-सामग्री, राइफलें, कारतूसें वगैरह अमेरिका में खरीदे गए थे। इस गदरी सेना को शस्त्रास्त्रों के साथ भारत की ओर लाने के हेतु से आनि लारसन और माव्हेरिक नाम के दो बड़े जहाजों की व्यवस्था की गई थी। इस प्रबन्ध को करने के बाद मैक्सिको, चीन, जापान, सुमात्रा, जावा, स्याम आदि देशों की तरफ से भारत के और गदरियों को लाने की व्यवस्था हुई थी। यही नहीं, कलकत्ता,

तथा ब्रह्मदेश तक इस क्रान्तिसेना ने आकर भारत स्वातन्त्र्य का प्रचार-कार्य भी किया था। समुद्र पर और पर्वतमय प्रदेश में तथा रेगिस्तान में जाकर उन्होंने अपने देश के लिए प्राणार्पण किए थे। गोलियों के शिकार कितने बने, इसका कोई हिसाब ही नहीं। अमानुषिक अत्याचार के कारण सैकड़ों ही गदरी पागल हो गए। उनका जीवन नष्ट हो गया। निस्सन्देह यह कहना सत्य होगा कि गदरियों ने ही भारत स्वातंत्र्य के लिए प्रथम प्रयत्न किया था। अमेरिका में गदरियों का आन्दोलन केवल भारतीय मजदूरों का था। उनकी बिल हें वुड (उस समय के अमेरिकन मजदूर नेता), गलिक अमेरिकन (आयरिश क्रान्ति पत्र), फ़लोरेस मागोन (मेक्सिकन सोशलिस्ट नेता), एमिलियानोझापाता (मेक्सिकन किसान नेता) और दूसरों नेताओं ने बहुत मदद की थी। भारतीय स्वाधीनता के लिए ऐसा प्रयत्न अभी तक कभी नहीं हुआ। इस प्रयत्न में अमेरिका जैसे दूर-दूर के देशों के लोगों ने हमारे देश की स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करने और शहीद होने का मन्त्र गदरियों को दिया। मेरे जैसा सेवक तो यावज्जीवन ऐसे सच्चे देशभक्तों की वन्दना करता रहेगा।

श्री प्रीतमसिंह जी पंछी और आतमाराम एण्ड संस का यह प्रयत्न प्रशंसनीय है। गदर पार्टी की ओर से मैं उन दोनों को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। गदर का इतिहास निस्सन्देह एक पवित्र इतिहास है और मुझे विश्वास है कि जनता द्वारा इसका हार्दिक स्वागत होगा।

लॉ कालिज होस्टल,
नागपुर
१० जुलाई, १९६१

गदर का एक विनम्र सेवक,
पांडुरंग
(पांडुरंग सदाशिव खानखोजे)

सम्पादकीय

बन्धुवर प्रीतमसिंह जी पंछी द्वारा लिखित गदर पार्टी के इतिहास के बारे में जो कुछ कहना था, उसे श्रद्धेय डॉ० खानखोजे और आदरणीय पं० परमानन्दजी ने अधिकारपूर्वक लिख दिया है। हमारे लिए यह बड़े सौभाग्य की बात है कि उस महान् नाटक के ये दोनों कलाकार अब भी हमारे बीच में मौजूद हैं। दोनों की भूमिकाओं ने इस पुस्तक के गौरव को बढ़ा दिया है और इस प्रकार हमारे बोझ को हल्का कर दिया है, फिर भी शिष्टाचार के तौर पर हमें दो-तीन बातें कहनी हैं। पहली तो यह कि भारतीय स्वाधीनता संग्राम के जिस अध्याय का विवरण इस पुस्तक में दिया गया है, उस पर अब भी एक विस्तृत खोजपूर्ण ग्रन्थ लिखने की आवश्यकता है। सच पूछा जाय तो उस भावी ग्रन्थ के लिए यह एक ढाँचा-मात्र है। कैसे दुर्भाग्य की बात है कि अभी तक हमारे इतिहास-लेखकों का ध्यान इस आवश्यक विषय की ओर नहीं गया।

अभी उस दिन हम बब्बर आन्दोलन के एक जन्मदाता बाबा सुन्दरसिंहजी से बातचीत कर रहे थे तो उस समय भी हमारे मन में यह सवाल उठा कि हमारे लेखकों और इतिहास-प्रेमियों ने स्वाधीनता-संग्राम के वास्तविक इतिहास की इतनी उपेक्षा क्यों की है। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाएगा, प्रत्यक्षदर्शी लोगों की संख्या

घटती जाएगी और उनके साथ ही बहुत-सा उपयोगी मसाला भी नष्ट होता जाएगा।

जब से शहीदों के श्राद्ध-रूपी यज्ञ में कुछ भाग लेने का अवसर हमें मिला है, कितने ही वयोवृद्ध सैनिकों के, जिन्होंने स्वाधीनता-संग्राम में उल्लेख-योग्य पार्ट अदा किया था, दर्शन का सौभाग्य भी हमें प्राप्त हुआ है—लाला हनुमन्तसहाय जी, श्री लालचन्द फलक, डॉ० खानखोजे, श्री अमीरचन्द बम्बवाल और बाबा सुन्दरसिंह। इनके अतिरिक्त पं० सुन्दरलाल जी तथा पं० परमानन्द जी (झांसी) से तो हमारा बहुत वर्षों से परिचय रहा है और श्रद्धेय राजा महेन्द्रप्रताप जी से तो सन् १९२३ से पत्र-व्यवहार भी। आदरणीय श्री जोगेश चटर्जी कई वर्ष से राज्य-सभा में हमारे साथ ही हैं। पिछली कान्फ्रेन्स में जो वयोवृद्ध क्रान्तिकारी आए थे, उनके भी दर्शन करने का अवसर हमें मिला था।

इनकी बाद की पीढ़ी के कई क्रान्तिकारियों के भी हम कृपापात्र हैं; यथा श्री मन्मथनाथ गुप्त, श्री भगवानदास माहौर, सदाशिव जी, श्री सुरेन्द्रनाथ पाण्डेय, श्री विजयकुमार सिन्हा, शिव वर्मा तथा श्रीमती सुशीलामोहन और श्री सुशीला आजाद। हमें आशा थी कि पिछली कान्फ्रेन्स के बाद ऐतिहासिक मसाला संग्रह करने का काम विधिवत् प्रारम्भ हो सकेगा, पर वह आशा पूर्ण नहीं हुई।

कुछ लोगों को यह भी उम्मीद थी कि शायद सरकार से इस विषय में कुछ आर्थिक सहायता मिल जाय, पर वह पूरी नहीं हुई। बहुत कुछ सोच-विचार के बाद हम तो इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि हमें सरकारी मदद की प्रतीक्षा कदापि न करनी चाहिए। सभी सरकारें क्रान्ति-विरोधी होती हैं और वे यह नहीं चाहतीं कि किसी

भी ऐसे आन्दोलन को स्थायित्व प्रदान किया जाय, जिसके प्रकाश में स्वयं उनके कारनामों के फीके पड़ने की सम्भावना हो। हम अपनी सरकार को खास तौर पर दोषी नहीं ठहराते, पर इतना तो हम अवश्य ही कहेंगे कि वह भी इस साधारण नियम का अपवाद नहीं। हम यह मानते हैं कि हमारी सरकार अन्य आवश्यक कामों में व्यस्त है और उससे अधिक आशा करना अनुचित होगा। एक बात और भी है। सरकारी मशीन के चक्कर में पड़कर इतिहास का कचूमर ही निकल जाता है और अधिकांश में उसकी स्वाधीनता नष्ट हो जाती है।

हमें व्यवहार-बुद्धि से काम लेना चाहिए और स्वाधीनता-संग्राम के इतिहास के मसाले को संग्रह करने और इतिहास लिखने का काम सर्वथा गैर-सरकारी ढंग पर ही करना चाहिए। हमारे सौभाग्य से जो पुराने क्रान्तिकारी अब भी हमारे बीच में मौजूद हैं, उनसे उनके अनुभव तुरन्त लिखा लेने चाहिएँ। इन अनुभवों को हम पत्रिकाओं के विशेषांकों के रूप में छाप सकते हैं और आगे चलकर उनके आधार पर ऐतिहासिक ग्रन्थ भी तैयार किए जा सकते हैं।

गदर पार्टी का इतिहास एक अद्भुत नाटक है, जिसके पात्र बारी-बारी से हमारे सामने आते हैं और अपना पार्ट अदा करके चले जाते हैं। कल्पित नाटकों को मंच पर खेले जाते हुए देखकर लोग आँसू बहाते हैं, पर इस नाटक की, जहाँ सच्ची घटनाएँ वर्णित हैं, और जिसमें हमारे सैकड़ों भाइयों का बलिदान हुआ है, अब तक उपेक्षा ही हुई है! सबसे बड़े दुर्भाग्य की बात यह है कि इस नाटक के महान् कलाकारों को भी प्रायः भुला दिया गया है। अन्य किसी भी देश में स्वाधीनता प्राप्ति के बाद उनका उचित सम्मान किया जाता,

और उनके कारनामों का परचा-परचा सुरक्षित कर लिया जाता, पर इस अभागे देश में वह सब उपयोगी मसाला नष्ट होने दिया जा रहा है !

हमारे जो नवयुवक लेखक चिरस्थायी साहित्य की रचना करना चाहते हैं, उनसे हम कहेंगे कि वे इस विषय को अपना लें और स्वाधीनता-संग्राम के सैनिकों के जीवन-चरित तथा रेखाचित्र प्रस्तुत करना प्रारम्भ कर दें। यह एक ऐसी खान है, जिसमें उन्हें सैकड़ों हीरे और जवाहर मिलेंगे। निस्सन्देह हमारे शासकों में भी कितने ही ऐसे हैं, जो स्वाधीनता-संग्राम के सैनिक रह चुके हैं। उनकी हम वन्दना करते हैं, पर यह कहने में हमें कुछ भी संकोच नहीं कि उनसे भी कहीं अधिक वन्दनीय हैं वे सिपाही, जो स्वाधीनता की वेदी पर बलिदान हो गए। जो शासन कर रहे हैं, उन्होंने तो एक प्रकार से अपने त्याग की हुण्डी भुना ली है, पर उन सैनिकों के विषय में क्या कहा जाय, जिन्होंने हँसते-हँसते अपनी जिन्दगी को कुर्बान कर दिया और जिनके कृतघ्न देशवासी उनके नाम भी भूल गए ? चिरस्थायी कीर्ति प्राप्त करने के लिए इससे उत्तमतर उपाय और क्या हो सकता है कि उन वीरात्माओं के जीवन-चरित लिखे जाएँ ? इस ग्रन्थ में ऐसे अनेक सैनिकों का वर्णन है।

पिछले महायुद्ध में यूरोपीय क्षेत्रों में जितने अमेरिकन सिपाही मारे गए थे, करोड़ों डालर खर्च करके अमेरिकन सरकार ने उनके अवशेषों और विवरणों को यूरोप से मँगाकर सुरक्षित कर लिया है। आयरलैण्ड में तो पार्लियामेण्ट के पास ही शहीदों और सैनिकों के विषय में एक संग्रहालय है, जहाँ उनकी प्रत्येक चीज बड़े यत्न के साथ सुरक्षित कर ली गई है। एक तो वे लोग हैं, जिन्होंने अपने बलिदानी

वीरों का इतना सम्मान किया है, और दूसरे हम, जिन्होंने दिल्ली में सेण्ट्रल जेल के उन ऐतिहासिक खण्डहरों को भी नष्ट-भ्रष्ट कर दिया, जहाँ कई देशभक्तों को फाँसी हुई थी और जहाँ कितनों ही को बरसों तक अनन्त यातनाएँ भोगनी पड़ी थीं।

निराशा के इस घोर अन्धकार में आशा की एक उज्ज्वल किरण हमें दीख पड़ती है—वह यह कि शहीदों का विषय साधारण जनता में दिनों-दिन लोकप्रिय बनता जा रहा है। आजाद और भगतसिंह की शहादत के ३०-३० वर्ष बाद भी उनके रंगीन चित्र बाजारों में धड़ाधड़ बिकते नजर आते हैं। शहीदों के विषय में कितनी ही किताबें छप रही हैं, जिनमें कुछ कपोल-कल्पित भी हैं ! फिर भी उन्हें जनता का आश्रय मिल रहा है, जो इस बात का सूचक है कि साधारण जन-समाज अब भी बलिदानों की घटनाओं से प्रभावित है और इसकी कथाओं को बार-बार पढ़ना चाहता है।

हमारा देश स्वाधीन हो चुका है; पर उस स्वाधीनता की रक्षा के लिए ही यह आवश्यक है कि स्वार्थ-त्याग तथा बलिदानों के वृत्तान्त निरन्तर नवयुवकों के सम्मुख रहें। अभी भी इस देश को भूख, अज्ञान और रोगों के विरुद्ध भयंकर युद्ध करना है और उस निःशस्त्र युद्ध में जितनी वीरता और जितने धैर्य की आवश्यकता होगी, वह किसी भी दशा में क्रान्तिकारियों के शौर्य से कम नहीं।

लोग पूछते हैं कि सरकार शहीदों का संग्रहालय कब तक बनायेगी ? इस प्रकार का प्रश्न हमारी कमजोरी का सूचक है। जो लोग सरकार को माई-बाप समझते हैं, वे बाल-बुद्धि हैं। बच्चों की-सी अकल वाले उन प्रश्नकर्ताओं की समझ पर हमें तरस आता है। सारा काम सरकार पर छोड़ देने से हम अपने-आपको पंगु ही बना

लेंगे। लुँज-पुँज या निष्क्रिय बनने का सबसे सरल रास्ता यही है। स्वेच्छापूर्वक और पारस्परिक सहयोग से जो भी कार्य इस देश में होंगे, वही हमारे लिए कल्याणकारी सिद्ध होंगे।

'शहीद ग्रन्थ माला' का यह पाँचवाँ पुष्प पाठकों के सामने है। इसका छठा ग्रन्थ होगा—सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी शचीन्द्रनाथ सान्याल का 'बन्दी जीवन', जो कम-से-कम पाँच सौ पृष्ठों का होगा। वह एक ऐसा ग्रन्थ है, जिसकी प्रतीक्षा इतिहास-प्रेमी पाठक बहुत दिनों से करते रहे हैं।

इन थोड़े से शब्दों के साथ हम श्री पंछी जी की पुस्तक 'गदर पार्टी का इतिहास' को पाठकों के सम्मुख उपस्थित करते हैं।

२९-८-१९६१
९९, नार्थ ऐवेन्यू,
नई दिल्ली

—*बनारसीदास चतुर्वेदी*

क्रम

१

रोजी की तलाश में

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में जिन कारणों से पंजाबी किसान विदेशों की ओर जाने के लिए बाध्य हुए, वे आर्थिक थे। खेती के नये साधनों से और अन्न की अन्तर्राष्ट्रीय माँग से समृद्धि का एक नया दौर आया। जहाँ इस समृद्धि से लोगों के जीवन का स्तर ऊँचा उठा, वहाँ किसानों की जरूरतों में भी वृद्धि हुई। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी शासन-काल में जनसंख्या भी खूब बढ़ी, परिणामस्वरूप खेती-बाड़ी पर निर्भर रहने वालों की संख्या भी बढ़ गई। खेती करने वालों की यह बढ़ती अधिकतर पंजाब के मैदानों में ही हुई थी।

कनाडा और अमेरिका जाने वाले किसानों में अधिक संख्या केन्द्रीय पंजाब के किसानों की थी। इसका कारण यह हो सकता है कि इन्हें मुगल साम्राज्य के विरुद्ध टक्कर लेने और सिख-राज्य के जंगी अभियानों में बढ़-चढ़कर भाग लेने के ताजे अनुभवों ने कुछ अधिक साहसी बना दिया हो, क्योंकि इसमें कोई संदेह नहीं कि उन दिनों अपढ़, अनजान लोगों के लिए विदेशों को जाना अंधे कुएँ में छलांग मारने के समान था। जो लोग पहले अमेरिका या कनाडा गए, उन्हें न तो उन देशों की भाषा का ज्ञान था, और न

वे वहाँ के निवासियों की स्थिति के बारे में ही कुछ जानते थे। उन्होंने विदेशों को चल पड़ने में वही उमंग दिखाई, जो उनके पुरखों ने दो हजार साल पहले मध्य एशिया से अपनी भेड़-बकरियों सहित पंजाब तथा अन्य देशों को चल देने में दिखाई थी।

अमेरिकन तथा कनाडियन अधिकारियों के अनुसार भारतीय श्रमिकों की सबसे पहली टोली १८९५ और १९०० के मध्य में अमेरिका महाद्वीप में उतरी। एक मनचला सिख, जो आस्ट्रेलिया जा चुका था और अंग्रेजी बोलना जानता था वह और उसके इने-गिने साथी सबसे पहले प्रशान्त महासागर को पार करके कनाडा के वैनकोवर बन्दरगाह पर उतरे। कुछ सैनिक सिख १८९७ ई० में इंगलैंड डायमण्ड जुबली में भाग लेने के लिए गए थे। जब वे लौटते समय कनाडा से होकर गुजरे तो उनमें से कुछ वहीं रह गए। पर कनाडा तथा अमेरिका जाने वाले मार्गदर्शकों की अधिक संख्या उन लोगों की थी, जो मलाया, हांगकांग, शंघाई तथा चीन के अन्य बन्दरगाहों, फिलिपाइन, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड और फिजी गए पंजाबियों में से थे। चीन की बक्सर-घटना के समय तथा इससे कुछ पहले, बहुत से पंजाबी इन देशों के पुलिस विभाग में या वाचमैन के रूप में नौकरी करते थे। बक्सर-घटना के समय वे अंग्रेजों के अतिरिक्त अन्य यूरोपवासियों के सम्पर्क में आये और उन्हें पता लगा कि संसार के दूसरे भागों में उनके लिए आर्थिक उन्नति के अच्छे साधन जुट सकते हैं।

अमेरिका और कनाडा से हांगकांग, शंघाई और फिलिपाइन आदि बन्दरगाहों से प्रतिदिन जहाज आते। जहाजी यात्रियों से भी वे अमेरिका, कनाडा की समृद्धि की बढ़ी-चढ़ी बातें सुनते। इन बातों

का उन पर जादू-सा असर होता। भारत में मुश्किल से आठ-दस आने रोजाना मजदूरी मिलती थी, वहाँ इससे बीस से पचास गुना अधिक अर्थात् दो से लेकर पाँच डालर तक रोज कमाये जा सकते थे।

भारतीयों की जो पहली टोली कनाडा गई, उसे नये देश के बारे में जानकारी न होने के कारण, काम की तलाश में कितने ही दिन इधर-उधर पैदल भटकना पड़ा। कनाडावासी भारतीयों के सम्बन्ध में कुछ भी अनुभव नहीं रखते थे, लेकिन वे अधिक सोच-विचार में पड़ने के बजाय निर्णय करने वाले लोग थे। इसलिए उन्होंने भारतीयों की काम करने की शक्ति परखने के लिए, उन्हें कुछ कर दिखाने का अवसर दिया।

सबसे पहले उन्हें काम पर लगाने वाले कारखाने के मालिक ने उनके काम से खुश होकर लकड़ी चीरने वाले दूसरे कारखानेदारों से भारतीय श्रमिकों को रखने की सिफारिश की, और इस तरह उनकी मजदूरी ढूँढने की समस्या किसी हद तक हल हो गई। फिर उन्हें रेलों की पटरियाँ बनाने, ट्राम लाइनों की मरम्मत, भवन-निर्माण, दूध के लिए पशु रखने की कम्पनियों, फल तोड़ने तथा अन्य किसानी धन्धों में काम मिलने लगा। ब्रिटिश कोलम्बिया में जंगल बहुत काटे जाते थे। जमीन में वृक्षों की जो जड़ें रह जाती थीं, उन्हें मशीनों से साफ करना महंगा पड़ता था। भारतीय श्रमिक शारीरिक श्रम कर सकते थे, इसलिए जड़ें खोदने के काम पर वे विशेष रूप से लगाए जाने लगे।

पहले तो कनाडा में ऐसे श्रमिकों की संख्या बहुत थोड़ी थी। लेकिन जब उन्होंने कनाडा में प्रचलित मजदूरी के बारे में अपने

रिश्तेदारों और जानकारों को ख़बर भेजी, तो कनाडा जाने वाले भारतीयों को संख्या बढ़ने लगो। स्वामी रामतीर्थ के व्यक्तित्व और उनके अमेरिका के दौरे ने भी भारत के पढ़े-लिखे वर्ग में अमेरिका और कनाडा के सम्बन्ध में दिलचस्पी पैदा कर दी। कई भारतीय विद्यार्थी अध्ययन के लिए अमेरिका और कनाडा जाने लगे। वहाँ की स्थिति के बारे में भारतीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित उनके पत्रों ने भारतीयों का ध्यान अमेरिका और कनाडा की ओर खींचा। कनाडा के बारे में १९०७ में स्थापित हुए कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार कनाडा के कारखानेदारों ने, जो सस्ते मजदूर चाहते थे; और जहाजों की कम्पनियों ने, जो यात्रियों के यातायात को बढ़ाकर लाभ उठाना चाहती थीं, भारतीयों को कनाडा जाने की प्रेरणा देने के लिए कनाडा की समृद्धि के सम्बन्ध में भारतीय पत्रों में प्रचार किया। नतीजा यह हुआ कि जहाँ सन् १९०५ में कनाडा जाने वाले भारतीयों को संख्या केवल ४५ थी, वह सन् १९०८ में बढ़कर २६२३ हो गई। जाने वालों में से बहुतों को अपनी जमीनें बेचने या बन्धक रखने के लिए मजबूर होना पड़ा। कई ने तो अपनी पत्नियों के आभूषण और पशु तक बेच डाले!

भारतीय श्रमिक छोटी-छोटी टोलियों में कनाडा के बहुत बड़े भाग में बिखर गए, पर उनकी अधिकतर संख्या कनाडा के ब्रिटिश कोलम्बिया के भाग में इकट्ठी हो गई। सरदार के० एम० पणिकर के अनुसार कनाडा में भारतीयों की संख्या ५१७५ तक पहुँच गई थी।

कनाडा अंग्रेजी साम्राज्य का अंग था, इसलिए आरम्भ में अधिकांश भारतीय कनाडा ही गए। लेकिन अमेरिका में भी मजदूरी

बहुत मिलती थी। कनाडा के मुकाबले अमेरिका के प्रशान्त महासागर के किनारे का मौसम पंजाबियों के अधिक अनुकूल था, और साथ ही वहाँ जातिभेद भी कम था। इसलिए बाद में भारतीयों को कनाडा के बजाय अमेरिका जाना अधिक रुचिकर लगा। तत्पश्चात् कनाडा में न घुसने देने के लिए ऐसे नियम बना दिए गए कि १९०९ में केवल ६ भारतीय कनाडा में दाखिल हो सके। १९०७-८ के बाद से ही सभी भारतीय कनाडा के बजाय अमेरिका ही जाने लगे। यहाँ तक कि कनाडा गए भारतीयों की बहुत बड़ी संख्या भी अमेरिका आ गई, क्योंकि कनाडा-वासियों और वहाँ की सरकार की ओर से ऐसी परिस्थितियाँ पैदा कर दी गईं जिनसे भारतीयों के लिए कनाडा में रहना असम्भव हो गया। सन् १९१३ में अमेरिका गए भारतीयों की संख्या ५,००० थी। इनमें से कुछ विद्यार्थी भी थे।

अमेरिका में पढ़ाई के लिए गए भारतीय विद्यार्थियों की अधिक संख्या ऐसी थी, जो मध्यम श्रेणी से सम्बन्ध रखते थे। जहाँ तक योग्यता और साहस का प्रश्न है, उनमें कोई कमी नहीं थी, पर अर्थाभाव के कारण उन्हें अपना खर्च चलाने के लिए पढ़ाई के साथ-साथ कोई काम भी करना पड़ता था। उन विद्यार्थियों में से अधिकतर उद्योग-धन्धों की शिक्षा प्राप्त करने के लिए गए थे।

अमेरिका गए हुए पहले भारतीय मजदूरों की अधिकांश संख्या पैसिफिक रेल-लाइन (Western Pacific Railway) में काम करने लगी। बाद में कुछ ऑकलैण्ड (Oakland) लोहे के कारखाने में मजदूरी करने लगे। लेकिन भारतीय मजदूरों में से अधिकांश किसान थे, इसलिए उन्होंने खेतों में काम की तलाश शुरू की। सबसे पहले कैलेफोर्निया में सटाकख के समीप वुडलैण्ड आइलैण्ड

नामक फार्म ने भारतीय मजदूरों को ऐसपैरेगस घास और शकरकंदी के खेतों में काम पर लगाया। खेती के काम में भारतीयों की दिलचस्पी देखकर खेतों के मालिकों का ध्यान उनकी ओर खिचा और वे पंजाबी मजदूरों को प्राथमिकता देने लगे। पंजाबी किसान धीरे-धीरे कामचलाऊ अंग्रेजी बोली के जानकार बन गए और उनमें से कई ने पट्टे पर भूमि लेकर अपनी खेती-बाड़ी शुरु कर दी। कई तो दक्षिण की ओर इम्पीरियल वैली में चले गए। कुछ उत्तर में सैकरेमैण्टो की घाटी में कपास और धान की खेती सफलतापूर्वक करने लगे।

लाला लाजपतराय ने अमेरिका के भारतीय श्रमिकों के सम्बन्ध में लिखा है—"मेरे हृदय में उनके लिए सम्मान की भावना है। साधारणतः वे अच्छे स्वभाव के अतिथि-सत्कार करने वाले और विशाल-हृदय रखने वाले देश-भक्त हैं...प्रशांत महासागर के पश्चिमी किनारे के हिन्दू मजदूर (जिनमें हिन्दू-मुसलमान दोनों शामिल हैं) कुल मिलाकर सुन्दर, कड़ा परिश्रम करने वाले, सादगी, ईमानदारी और अच्छे स्वभाव के हैं। मेरे दिल में उनके लिए प्रेम और सहानुभूति है।"

पर इसके बावजूद इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि भारतीय श्रमिक अमेरिकी समाज में घुले-मिले हुए नहीं थे। एक तो अमेरिकी समाज से उनका बहुत कम वास्ता पड़ता था, दूसरे अमेरिका में जातीय भेद-भाव के कारण भारतीयों को अच्छा भी नहीं समझा जाता था।

प्रारम्भिक दिनों में कनाडा के भारतीयों ने संगठित होने का प्रयत्न किया। सन् १९०७ ई० में वैनकोवर (कनाडा) में 'खालसा

दीवान सोसायटी' कायम की गई, जिसका उद्देश्य धार्मिक, शिक्षा सम्बन्धी तथा सामाजिक कार्यों को बढ़ावा देना था। इस सोसायटी ने २५,००० डालर से वैनकोवर में गुरुद्वारे का निर्माण कराया। इसी तरह विक्टोरिया (कनाडा) में संत तेजासिंह ने गुरुद्वारा बनवाया। लगभग इसी समय श्री ज्वालासिंह ठट्टियाँ और संत विसाखासिंह ददेहर के पुरुषार्थ से अमेरिका में 'पैसिफिक कोस्ट खालसा दीवान सोसायटो' स्थापित की गई। सटाकख (कैलेफोर्निया, अमेरिका) में गुरुद्वारा बनवाया गया। उक्त दोनों सोसायटियों के उद्देश्य तो मिलते-जुलते थे, पर वे सर्वथा एक दूसरे से स्वतन्त्र थीं। ये गुरुद्वारे सिखों के धार्मिक-केन्द्र होने के अतिरिक्तअमेरिका-निवासी सभी भारतीय श्रमिकों की सामाजिक और बाद में राजनैतिक जागृति के केन्द्र बने; क्योंकि कनाडा तथा अमेरिका-निवासी भारतीयों का दृष्टिकोण संकीर्ण नहीं था। अतः इन गुरुद्वारों में कनाडा वासी तथा ईसाई मिश्नरी भी भाषण दिया करते थे।

इन केन्द्रों के अलावा श्री हरनामसिंह 'काहरी साहरी' सीएटल (Seattle, U. S. A.) में सन् १९१० से विद्यार्थियों के लिए एक बोर्डिंग हाऊस और वैनकोवर में भी एक छात्रावास तथा रात्रि-स्कूल चलाते रहे।

प्रारम्भ में अमेरिका से कनाडा गए भारतीयों ने आर्थिक दृष्टि से पर्याप्त उन्नति की। भारतीय जनता के जीवन-स्तर को देखते हुए अमेरिका हो या कनाडा दोनों स्थानों पर गए भारतीयों ने काफी प्रगति की। अमेरिका तथा कनाडा के स्वतन्त्र वातावरण में वहाँ के निवासियों पर इस आर्थिक उन्नति का अच्छा प्रभाव भी पड़ा।

२

भारतीय : विदेशियों की दृष्टि में

अमेरिका और कनाडा में जाकर बसे हुए भारतीयों पर विदेशियों की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप गदर पार्टी ने जन्म लिया। गदर पार्टी आन्दोलन को पूरी तरह से समझने के लिए यह जान लेना आवश्यक है कि अमैरिका की उस समय की परिस्थितियों का भारतीयों पर क्या प्रभाव पड़ा।

यद्यपि आगे चलकर रूस की बोलशेविक क्रांति ने प्रगतिशील मूल्यों की परख की कसौटी को एकदम बदल दिया लेकिन उससे पहले अमेरिका संसार-भर में प्रगतिशील देशों में अग्रणी माना जाता था। सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी के यूरोप में राजनैतिक तथा धार्मिक विचारों को लेकर सुधारकों में परस्पर की खींचातानी बहुत तेज थी। जो स्वतन्त्र विचारधारा रखने वाले लोग प्राचीन राजनैतिक या धार्मिक विचारों का दबाव मानकर अपनी राजनैतिक परिस्थिति से समझौता करना सहन न करते, वे अक्सर अमेरिका, विशेषकर इसके उत्तर-पूर्वी भाग मे जाकर शरण ले लेते। सन् १६२० में जॉन रोबिन्सन के नेतृत्व में आए पिलग्रम फादर्स (The Pilgrim Fathers) सन् १६८१ में विलियम पैन के नेतृत्व में आए क्वेकर्स (Quakers)

कुछ प्रसिद्ध उदाहरण हैं। यह समझा जाता है कि यूरोप से अमेरिका आये वाशिन्दों में अधिक संख्या प्रगतिशील विचार रखने वाले लोगों की थी, इसी कारण 'जमीर की आजादी' के विचार अमेरिकी समाज में काफी घर कर गए थे। इसका कुछ अनुमान इस बात से लग सकता है कि एक लाख के लगभग वाशिन्दे ऐसी बस्तियों में बस गए, जिनमें धार्मिक विचारों के प्रभाव में साम्यवाद के आदर्श को अमली रूप देने का प्रयत्न किया गया।

अमेरिका के उत्तरी भाग की आर्थिक और अन्य परिस्थितियाँ भी प्रगतिशील गतिविधियों के लिए अनुकूल थीं। प्रारम्भ में खेती के लिए योग्य भूमि की कोई सीमा न थी, इसलिए किसी का राजनैतिक, सामाजिक या आर्थिक दबाव सहने के लिए बाध्य नहीं होना पड़ता था। जो भी इच्छुक होता, वह नई भूमि आसानी से लेकर अपना पृथक् अड्डा कायम कर सकता था। इसलिए, पुराने विचारों को लेकर कायम की हुई धार्मिक तथा सामाजिक संस्थाएँ (Institutions) टूट रही थीं। यूरोप से अमेरिका आने वाले लोगों की अधिक संख्या किसानों या खेतो में काम करने वाले साधारण मजदूरों की थी और अमेरिका के उत्तर-पूर्वी भाग की भूमि इस किस्म की नहीं थी कि जिसमें बहुत ज्यादा पूँजी लगाकर गुलामों की सहायता से कपास, तम्बाकू आदि सुदूर देशों में बिक सकने वाली चीजों की बड़े पैमाने पर खेती-बाड़ी की जा सकती। परिणाम यह हुआ कि अमेरिका का उत्तर-पूर्वी भाग धार्मिक तथा स्वतन्त्र विचारधारा और व्यक्तिगत विचारों का गढ़ बन गया। यह तो आवश्यक ही था कि इस धार्मिक तथा सामाजिक प्रगतिशील उमंग का प्रभाव राजनैतिक स्तर पर भी पड़ता। राजनैतिक स्वतन्त्रता और

पंचायती उमंग ने जो अमेरिका के उस उत्तर-पूर्वी भाग से आरम्भ हुई थी, आगे चलकर अमेरिका की राजनैतिक स्वतन्त्रता का रूप धारण कर लिया, और इसका प्रभाव सारे देश पर पड़ा। अमेरिकी स्वतन्त्रता की प्रसिद्ध घोषणा ४ जुलाई, १७७६ को हुई—"सब लोग बराबर पैदा किए गये हैं और प्रत्येक को स्वतन्त्रता का अधिकार है।" यह केवल प्रचार-मात्र नहीं था, वरन् प्रगतिशील अमेरिकी भावना का प्रतीक था, जिसने उस समय संसार पर बहुत प्रभाव डाला। अमेरिका की प्रगतिशील विचारधारा का इससे अधिक गहरा प्रभाव संसार में उस समय हुआ, जब अब्राहम लिंकन के नेतृत्व में, हब्शी गुलामों को स्वतन्त्र कराने के हेतु उत्तरी अमेरिका ने दक्षिण अमेरिका के साथ युद्ध लड़ा और हब्शी गुलामों को श्वेतों के समान जबरदस्ती राजनैतिक अधिकार दिलाए। यह ठीक है कि हब्शी गुलामों को स्वतन्त्र कराने की भावना के पीछे अमेरिका के उत्तरी भाग के छोटे किसान मालिकों और मजदूरों के अपने आर्थिक स्वार्थ भी काम करते थे, क्योंकि उन्हें भय था कि कहीं गुलाम रखने का प्रबन्ध अमेरिका के दूसरे भागों में फैलकर उनके आर्थिक तथा राजनैतिक स्वार्थों को हानि न पहुँचाए, तथापि हब्शी गुलामों को स्वतन्त्र कराना उस युग की गति के अनुसार एक क्रांतिकारी कदम था।

इसके विपरीत दक्षिण अमेरिका में साम्राज्यवादी भावना इतनी प्रबल थी कि उसके सम्बन्ध में बहुत अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं। अमेरिका के दक्षिणी भाग में प्रारम्भ से ही पूँजी और हब्शी गुलामों को काम में लाए जाने से बड़े पैमाने पर खेती कराने वाले जागीरदार तत्वों का जोर था। पूँजीवादी प्रबन्ध के कारण उत्तरी भाग में भी आर्थिक और सामाजिक दूरी दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई।

अमेरिकी पूँजी बढ़कर अड़ौस-पड़ौस के देशों में बिखरने लगी और इसने डॉलर साम्राज्य (Dollar Imperialism) का रूप धारण कर लिया। केवल इतना ही नहीं, डॉलर साम्राज्य ने अमेरिकी सरकार को राजनैतिक साम्राज्य की ओर धकेल दिया।

अमेरिका गए भारतीयों पर इन दोनों विचारधाराओं और उनकी प्रतिक्रिया का प्रभाव पड़ना आवश्यक था, पर चूँकि अमेरिका गए भारतीयों की संख्या बहुत कम थी और वे अमेरिकनों के बुनियादी आर्थिक या सामाजिक लाभों के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा नहीं थे, इसीलिए साम्राज्यवादी भावनाओं का उन पर बहुत कम प्रभाव पड़ा। इस दृष्टिकोण से केवल यही जान लेना काफी है कि सन् १८९५ से (जब अंग्रेजों और वैनजुएला के मध्य अमेरिका ने हस्तक्षेप करके 'मुनरो' की घोषणा के अनुसार अमेरिका महाद्वीप में अमेरिका की संरक्षकता मानने के लिए अंग्रेजों को बाध्य किया) अमेरिकन सरकार ने अंग्रेजों के साथ यह नीति तय कर ली थी कि दोनों एक-दूसरे के लाभों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे। इस नीति के अनुसार यह सम्भव है कि अमेरिका की सरकार की भीतरी सहानुभूति अंग्रेजों के साथ रही हो और वह छिपे तथा टेढ़े ढंग से अमेरिका में अंग्रेज-विरोधी भारतीयों के आन्दोलन के विरुद्ध अंग्रेजों की सहायता करने के लिए तैयार हो। सम्भवतः अमेरिका की सरकार ने अंग्रेजी-साम्राज्य की छिपी प्रेरणा पर ही लाला हरदयाल को गिरफ्तार किया था, और १९१७ ई० में गदर पार्टी आन्दोलन के सम्बन्ध में सानफ्रांसिसको तथा शिकागो के दो मुकदमे चलाये थे। इतना मानते हुए भी एक बात स्पष्ट है, वह यह कि प्रगतिशील परम्परा या लोकमत के प्रभाव के कारण अमेरिका की

सरकार ने गदर पार्टी आन्दोलन के विरुद्ध सीधा औरखुले आम हस्तक्षेप करने से सदा संकोच किया। गदर पार्टी के दृष्टिकोण के अनुसार यह साधारण बात नहीं थी। अमेरिका की सरकार और वहाँ के निवासी यदि कनाडा की सरकार तथा कनाडावासियों जैसा रुख धारण करते, तो गदर पार्टी आन्दोलन कभी भी जड़ न पकड़ पाता। इसमें कोई संदेह नहीं कि अमेरिका के स्वतन्त्र विचारों के वातावरण का भारतीयों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। इसका एक मुख्य कारण यह भी था कि अंग्रेजी साम्राज्य के गुलाम भारत की तथा अमेरिका की परिस्थितियों में जमीन-आसमान का अन्तर था। लाला हरदयाल ने अमेरिका के सम्बन्ध में लिखा है—

"अमेरिका के झण्डे के नीचे कोई भी विचार तथा काम के ऊँचे मण्डल में उड़े बिना नहीं रह सकता। संसार के इतिहास में सबसे बड़े पंचायती राज्य का भव्य झण्डा कायरता, पराधीनता, निराशा तथा उदासीनता को इस तरह जला देता है, जैसे अग्नि सोने की मिलावट को जलाकर कुन्दन बना देती है।"

लाला हरदयाल के स्वभाव की यह एक कमजोरी थी कि वह एक ओर जल्दी झुक जाते थे और उनका उक्त कथन इस बात का सबूत है। भाई परमानन्द लिखते हैं—

"अमेरिका में प्रत्येक स्थान पर आदमी की समानता पाई जाती है। रेलों में एक ही क्लास है······पश्चिमी स्टेटों में समानता के सिद्धान्त पर बहुत अमल होता है। उदाहरण के लिए कालिजों में सहायकों (Attendants) को वही वेतन मिलता है, जो प्रोफेसरों को प्रारम्भ में मिलता है। अन्तर केवल इतना होता है कि प्रोफेसर विद्या-दान देकर ख्याति प्राप्त कर लेते हैं।"

जब अमेरिका गए पढ़े-लिखे भारतीयों पर वहाँ की परिस्थितियों का ऐसा प्रभाव पड़ा तो भारतीय श्रमिक, जो अधिक पढ़े-लिखे भी नहीं थे, उन पर इससे भी अधिक असर पड़ना स्वाभाविक ही था। देश-विदेशों की यात्रा से आँखें खुलती हैं और विचारों में विशालता आती है। यही कारण था कि उन्हें खुले वातावरण तथा नई सभ्यता का पहला अनुभव अमेरिका में जाकर हुआ। स्वतन्त्रता तथा पराधीनता का अन्तर भी उन्हें स्पष्ट दिखाई देने लगा। इसका नतीजा यह हुआ कि अब वे एक भारतीय के रूप में सोचने लगे। उनके दिलों में एक नई भावना तथा नया उत्साह पैदा हो गया। अमेरिका और कनाडा गए भारतीयों में इस तरह जो राष्ट्रीय जागरण तथा देश-भक्ति की नई भावना पनपी, उसकी मजबूती की तुलना भारत के किसी राजनीतिक आन्दोलन से करना संभव नहीं। तत्कालीन अंग्रेजी राज्य के किसी भी भारतीय को उस भावना की गहराई पर विश्वास नहीं हो सकता, जिसे भारत से बाहर अमेरिका जैसे स्वतन्त्र देश के वातावरण का निजी अनुभव न रहा हो। गदर पार्टी का इतिहास इसका साक्षी है।

जनरल स्वेम वेस्ट इण्डीज के गवर्नर थे और ब्रिटिश सरकार की तरफ से कनाडा के भारतीयों के सम्बन्ध में विचार करने के लिए भेजे गए थे। वैनकोवर (कनाडा) के पत्र 'दी वर्ड' के १४ दिसम्बर, सन् १९०८ ई० के अंक में उनके साथ एक भेंट का हाल प्रकाशित हुआ था। जनरल स्वेम ने कहा था—

"भारतीयों की एक बात महत्त्वपूर्ण है यानी औरों के साथ घुल-मिल जाना है। इसका एक उदाहरण इस प्रदेश से जातीय भेद-भाव का उड़ जाना जिससे प्रकट होता है कि वे किस तरह एक-

दूसरे की सहायता करते हैं।"

लाला हरदयाल जब यूरोप से पहली बार अमेरिका गए, तो वहाँ के भारतीयों में हुए परिवर्तन को देखकर हैरान रह गए। गदर पार्टी बनाने या इस दिशा में कोई कदम उठाने से बहुत पहले उन्होंने अमेरिका गए भारतीय श्रमिकों के सम्बन्ध में लिखा था—

"उनमें शीघ्र ही देश-भक्ति की उत्कट भावना पैदा हो जाती है। यह भावना अपने देशवासियों की सेवा, जन-साधारण के कामों में रुचि, धार्मिक जागरण, देश लौटकर स्वतन्त्र काम करने की इच्छा और उनमें सबके लाभ के लिए आर्थिक सहायता देने को हमेशा तैयार रहने से प्रकट होती है। इसलिए भारतवासियों को विदेशों की यात्रा से आर्थिक तथा नैतिक लाभ मिलता है। प्रत्येक भारतीय परिवर्तित नए आदमी का रूप धारण कर लेता है। उसमें स्वाभिमान जाग उठता है। वह देखता है कि अंग्रेजों के अतिरिक्त दूसरी शक्तियाँ भी हैं। यहाँ की यात्रा के दौरान में जो परिवर्तन आता है, वह प्रकट करता है कि यात्री के मन की तह में सामाजिक भलाई के लिए वह आग और उत्साह मौजूद है, जिससे हमारी दुर्बलताओं तथा दुःख-पीड़ाओं को भस्मीभूत किया जा सकता है।"

अमेरिका तथा कनाडा-निवासी भारतीयों में फैले जागरण से उनमें एक सामाजिक भावना भी पैदा होने लगी और वे अपने आचार और व्यवहार को ऊँचा उठाने का प्रयत्न करने लगे। उन बातों से उनके मन में घृणा पैदा होने लगी, जिनसे उन पर किसी प्रकार का लांछन आता हो, या जिन बातों से वे विदेशियों की दृष्टि में हीन समझे जाते हों। पहनावे की ओर वे विशेष रूप से ध्यान देनें

लगे। जो भी नया आदमी भारत से आता, वे कोट-पैण्ट लेकर उसे जहाज पर मिलते और उसे अमेरिकन सभ्यता के अनुसार व्यवहार में आने वाली वे सब बातें सिखा देते, जिनका वहाँ पर प्रचलन था। सफाई की दृष्टि से प्रत्येक भारतीय का कमरा खूब सजा हुआ होता। उसमें राष्ट्रीय नेताओं के चित्र टँगे होते। शराब की आदत प्रतिदिन कम होती जा रही थी। मिनॉर्क मिल में लगभग ढाई सौ भारतीय काम करते थे। सारा दिन कड़ा परिश्रम करने पर भी रात्रि के समय वे घर पर अंग्रेजी पढ़ा करते या फिर शहर के रात्रि-स्कूलों में पढ़ने चले जाते थे। दूसरे कारखानों में काम करने वाले भी ऐसा ही करते थे।

लाला हरदयाल ने अमेरिका के भारतीयों की सामाजिक भावना की जो सराहना की, उसका उल्लेख हम कर चुके हैं। 'दी वर्ड' पत्र के १४ दिसम्बर, १९०८ के अंक में प्रकाशित भेंट में जनरल स्वेम ने यह भी बताया—"कनाडा में पंजाबियों की एकता के कारण कुछ ही लोग गरीब हैं।"

संसार-प्रसिद्ध भारतीय पत्रकार संत निहालसिंह कनाडा के भारतीयों के सम्बन्ध में लिखते हैं—

"उन सबको एक सामाजिक सूत्र ने एक साथ बाँध रखा था। कोई भी भारतीय, जो बेकार होता और जिसे पैसे की आवश्यकता होती, कभी किसी कनाडावासी या सरकार के पास सहायता के लिए नहीं जाता था। उसके देश-भाई उसका गुजारा चलाने में सहायता करते, बिना यह पूछे कि उसकी जाति और धर्म क्या है........मेरा निजी अनुभव है कि कई बार तीस से चालीस प्रतिशत लोग बेकार रहे हैं, पर उनकी संयम से गुजारा करने की

खूबी और एक-दूसरे के काम आने की भावना ने उन्हें बाधाओं से पार कर दिया......"

कैलीफोर्निया में कुटुम्ब की भांति रहने की एक मिसाल प्रसिद्ध थी। श्री ज्वालासिंह ठट्टियाँ और संत विसाखासिंह ददेहर एक फार्म ठेके पर लेकर अपनी खेती करते थे। बाद में भाई संतोखसिंह भी इन्हीं के साथ आकर मिल गए। इस फार्म में सदा लंगर (भण्डारा) लगा रहता। कैलीफोर्निया जाने वाला प्रत्येक भारतीय, जो देश से नया आया होता और जिसके पास होटल में ठहरने के लिए पैसे न होते या जो बीमार पड़ जाता, वह अनिश्चित अवधि के लिए यहाँ आ टिकता। इसी प्रकार हरेक जगह बेरोजगार भारतीय भाइयों की सहायता की जाती। विद्यार्थियों की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था। यही कारण था कि विद्यार्थी अपने भारतीय श्रमिक के बहुत निकट आ गये थे।

अमेरिका की कुछ अन्य परिस्थितियाँ भी थीं, जिन्होंने अमेरिका गए भारतीयों में राष्ट्रीय जागरण और एकता से पैदा हुई उक्त भावना को पनपाया और बाद में एक राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप देने का प्रयत्न किया।

इंगलैंण्ड से स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले अमेरिका में दो लाख के लगभग जर्मन और इतने ही आयरिश आकर बस गए थे। १८४६ में आयरलैण्ड और जर्मनी के एक प्रदेश में आलुओं की फसल नष्ट हो गई, इसलिए अधिक जर्मन तथा आयरिश अमेरिका आने के लिए मजबूर हो गए। १८५० में अमेरिका की दो करोड़ तीस लाख की आबादी में से दस लाख आयरिश नस्ल के थे, जो अंग्रेजों के विरुद्ध सदियों पुरानी घृणा भी अपने साथ अमेरिका लेते आए थे।

अंग्रेजों के साथ आयरलैण्ड का संघर्ष सदियों से चला आ रहा था। अमेरिका में बसे आयरिशों के पास सभाओं तथा पत्रों का काफी जाल था, जिसे वे अंग्रेजों के विरुद्ध प्रचार के लिए प्रयोग में लाते थे। १९०४ में अंग्रेजों ने जर्मनी के विरुद्ध खुले-आम फ्रांस और रूस के साथ मिलकर गुट बना लिया। जर्मनी और इस गुट के बीच संघर्ष की तैयारियाँ होने लगीं। जर्मन राज्य की बस्तियों का मंत्री डा० डरनबर्ग अमेरिकी जर्मनों में जर्मनी के पक्ष में लोकमत जुटाने अमेरिका आया। अंग्रेज विरोधी इन तत्वों ने भी अमेरिका गए भारतीयों को अंग्रेजों के विरुद्ध उकसाया। दूसरे अमेरिका की आर्थिक स्थिति ने भी टेढ़े ढंग से भारतीयों की राष्ट्रीय भावना को उग्र बनाने में योग दिया। आरम्भ में अमेरिका में खेती के उपयुक्त भूमि इतनी थी कि जितनी भी कोई सम्भाल सकता, वह सम्भाल लेता। इसलिए खेती करने के लिए अच्छे अवसर थे। खेतिहरों की भी बड़ी माँग थी, जिसे पूरा करने के हेतु विदेशियों के लिए अमेरिका-प्रवेश के द्वार खुले थे। उद्योग की उन्नति ने श्रमिकों की इस कमी को और भी बढ़ा दिया। १९१० तक खेती और उद्योग-धन्धों में काम करने वालों की संख्या समान हो गई। और आगामी दस वर्षों में उद्योग-धन्धों में काम करने वालों की संख्या खेती-बाड़ी का काम करने वालों से अधिक हो गई। सभी उद्योग-धन्धों में मजदूरों की इतनी अधिक आवश्यकता थी कि बहुत से पश्चिमी राज्यों ने दूसरे देशों से मजदूर लाने के लिए पृथक् विभाग कायम किए हुए थे। दूसरी ओर यूरोप में जनसंख्या बहुत अधिक बढ़ गई थी, और आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं थी। इसलिए नेपोलियन की हार से लेकर १९१४ के

युद्ध तक, यूरोप से आकर अमेरिका में बसने वालों की एक बाढ़-सी आ गई। १९१४ से पहले दस बरसों में यह संख्या दस लाख वार्षिक तक पहुँच गई। इसमें यूरोप के हरेक देश और हरेक श्रेणी के लोग शामिल थे। कई बार अमेरिका में आर्थिक संकट के झटके आने लगते थे। इस संकट के लिए बाहर से अमेरिका में आकर बसने वालों को कारण समझा जाता था, पर इसका सारा दोष एशियाई लोगों पर थोपा जाता था।

आर्थिक संकट के दिनों में कई स्थानों पर भारतीयों को शिकार बनाया गया। उन पर आक्रमण किए गए। विलहैम (Oragon state) के कस्बे में मार-पीट के अतिरिक्त भारतीय श्रमिकों को और अधिक कष्ट पहुँचाने के लिए ट्रामों में भरकर जंगल में छोड़ा गया, और उनका सामान लूट लिया गया। इन आक्रमणों का कारण आर्थिक था, क्योंकि इनमें प्रमुख भाग गोरे मजदूरों ने लिया। जब आर्थिक संकट का जोर कुछ कम हो जाता, तो यह आक्रमण भी अपने आप बन्द हो जाते। इन आक्रमणों ने अमेरिका के भारतीयों को झकझोर दिया। इन घटनाओं के सम्बन्ध में कोई पूछताछ भी नहीं की गई। पर सबसे अधिक जिस बात ने भारतीयों को झकझोरा, वह थी गोरों की एशिया के लोगों के विरुद्ध नस्ली भेद-भाव की घृणित नीति।

१८८० से पहले यूरोप से अमेरिका आने वाले अधिकतर आयरलैण्ड, इंगलैण्ड, जर्मनी तथा केण्डेनेविया के लोग थे। इसके पश्चात् पूर्वी और दक्षिणी-पूर्वी यूरोप के लोगों की संख्या आती थी। एंग्लो-सैक्सन नस्ल के अमेरिकन अपने आपको सभ्यता और विद्या में बढ़कर तथा अमेरिका के पुराने निवासी समझते थे, और

१८८० के पश्चात् पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी यूरोप से आए नये लोगों को सभ्यता और विद्या के लिहाज से घटिया समझते थे। एंग्लो-सैक्सन नस्ल के अफ्रीकी नहीं चाहते थे कि पूर्वी तथा दक्षिण-पूर्वी यूरोप के लोग अमेरिका आयें। परन्तु अमेरिका के विकास के लिए अधिक से अधिक लोगों की आवश्यकता थी।

नस्ली तथा जातिगत भेद-भाव की भावना जब पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी यूरोपियन लोगों के विरुद्ध प्रकट होने से नहीं रह सकी, तो यह स्वाभाविक था कि इसका प्रभाव एशियाई लोगों के विरुद्ध भी पड़ता, जिनसे एंग्लो-सैक्सन नस्ल के अमेरिकनों का दूर का भी रिश्ता नहीं था।

चीनी मजदूरों ने रेलें, सड़कें बनाने और आरम्भ में कैलीफोर्निया को आबाद करने में काफी भाग लिया था। १८५१ से १८९० तक २९०,६१० चीनी अमेरिका के पश्चिमी किनारे के प्रदेशों में आए। इतने चीनियों के जमा हो जाने पर अमेरिकन मजदूरों के नेताओं ने उनके विरुद्ध आन्दोलन छेड़ दिया, क्योंकि अमेरिका के मजदूरों में मजदूर श्रेणी की अन्तर्राष्ट्रीय एकता की भावना नहीं थी। इस आन्दोलन के फलस्वरूप कई स्थानों पर चीनियों के विरुद्ध दंगे-फसाद भी हुए।

इसके पश्चात् शीघ्र ही इसी भांति का आन्दोलन जापानियों के विरुद्ध भी आरम्भ किया गया। अमेरिका में जापानियों के अस्तित्व को भी आर्थिक तथा सांस्कृतिक खतरा समझा गया। पर जापानियों की पीठ पर उनकी शक्तिशाली सरकार थी। इसलिए जापानियों को जो हानि हुई अमेरिका की सरकार को उसको मुआवजा देना पड़ा।

अमेरिका में भारतीय श्रमिकों की संख्या कुछ हजार से अधिक नहीं थी; और वे दस-दस, बीस-बीस की टोलियों में अमेरिका के अलग-अलग भागों में बिखरे हुए थे। इसलिए उन्हें चीनी-जापानियों की तरह अमेरिकन मजदूरों के संगठित विरोध का निशाना नहीं बनना पड़ा। इसके अलावा भारतीय अधिकतर खेती-बाड़ी से सम्बन्धित काम करते थे। साथ ही भारतीय श्रमिकों की संख्या बहुत ज्यादा बिखरी होने के कारण उन पर यह आरोप नहीं लगाया जा सकता था कि वे अमेरिकन मजदूरों के लिए आर्थिक होड़ का कारण थे। अमेरिकनों की भारतीयों के विरुद्ध दबी हुई घृणा का कारण तो नस्ली पक्षपात ही था।

अमेरिका तथा कनाडा गए भारतीयों को सबसे अधिक वह तानेबाजी अखरती थी जो उनकी प्राचीनता को लेकर की जाती। भारतीयों से अक्सर पूछा जाता कि भारत की जनसंख्या कितनी है ? जवाब मिलता कि तीस करोड़। फिर पूछा जाता कि भारत में अंग्रेज कितने हैं ? यह बताने पर कि सवा लाख के लगभग हैं, अमेरिकन ताना देते कि तुम भेड़ें हो या आदमी ?

एक बार एक भारतीय सज्जन होटल में चाय पी रहे थे। वहाँ कुछ अमेरिकन विद्यार्थी भी आ पहुँचे और एक एलबम, जिसमें हरेक देश के झंडों के चित्र थे, खोलकर भारतीय से पूछने लगे कि तुम्हारे देश का झंडा कौन-सा है। भारतीय ने एलबम उलटकर यूनियन जैक पर अंगुली रख दी। विद्यार्थी हँस दिए, और कहने लगे कि यह तो अंग्रेजों का झण्डा है। भारतीय को यह मानना पड़ा कि भारत का कोई अपना झण्डा नहीं है। इस पर एक अमेरिकन विद्यार्थी ने कहा कि तुम जिन्दा ही क्यों हो ? हम

तो पराधीनता का जीवन जीने की बजाय मौत का आलिंगन करना पसन्द करते हैं !

श्री सोहनसिंह भकना (जो गदर-पार्टी के पहले प्रधान बने) काम की तलाश में घूम रहे थे कि एक भारतीय को अपनी जान-पहचान के कारखानेदार के पास ले गए। उसने पहले तो बहुत सम्मान किया। पर जब आने का कारण बताया गया, तो वह क्रोध में आकर कहने लगा कि मेरा दिल करता है कि तुम्हें गोली से उड़ा दूँ। कारण पूछने पर उसने बताया कि तुम्हें शर्म नहीं आती। मुट्ठी-भर गोरों की गुलामी करते हो। मैं तुम्हें बन्दूकें और गोलियाँ देता हूँ। पहले अपना देश स्वतन्त्र कराकर आओ, फिर जहाज पर तुम्हारा स्वागत करने वाला मैं पहला आदमी होऊँगा।

इसमें सन्देह नहीं कि ऐसी तानेबाजी आम बात थी। गदर-पार्टी आन्दोलन सम्बन्धी चले मुकदमों में इसका जिक्र आता है। हो सकता है कि इस तानेबाजी की तह में कुछ अमेरिकनों के दिल में पराधीनता के विरुद्ध सच्ची घृणा भी हो। लेकिन इस प्रकार की तानेबाजी नस्ली पक्षपात को प्रकट करने का एक बढ़िया ढंग था, क्योंकि ताना मारने वाला नैतिक तौर पर ऊँचाई पर लगता, और भारतीय निरुत्तर हो जाते थे।

तानेबाजी के अलावा भारतीयों से अक्सर दुराव रखा जाता। सीमान्त विभाग के अधिकारी भारतीयों को अमेरिका में न उतरने देने के लिए कई प्रकार के ढंग प्रयोग में लाते। उन्हें कई होटलों में स्थान ही न दिया जाता। भारतीयों को यह बात भी अखरती कि चीनी-जापानियों के साथ उनसे कहीं अच्छा सलूक किया जाता था; क्योंकि उनके देश स्वतन्त्र थे।

अमेरिकनों की इस भेद-भाव की नीति से भारतीयों के हृदय पर गहरा आघात लगा; और इसी ने उनके दिलों में देश-भक्ति की भावना को मजबूत किया।

सन्त निहालसिंह ने लिखा था :

"पराधीनता तथा दुर्बलता ने सदियों से दबाए रखा है। पर अमेरिका गए भारतीयों में यह चीज नहीं है। वे स्वाभिमानी और जवां-मर्द हैं। वे उस कुत्ते की भाँति नहीं, जो उसी हाथ को चाटता है, जो उसे चाबुक लगाए और इस तरह जालिम को बुरा व्यवहार जारी रखने के लिए हौसला बढ़ाए।"

गदर पार्टी आन्दोलन के विकास-क्रम को समझने के लिए इस बात को याद रखना आवश्यक है कि अमेरिका और कनाडा के भारतीय श्रमिकों का राजनीतिक जागरण किसी एक व्यक्ति, समूह या दल से प्रेरणा लेकर पैदा नहीं हुआ। यह तो अमेरिका व कनाडा की राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों से सीधे-सादे भारतीयों पर हुई प्रतिक्रिया का फल था। अमेरिका-कनाडा की परिस्थितियाँ हरेक भारतीय श्रमिक को झकझोर कर जगा रही थीं।

एक बार भाई परमानन्द ने श्री करतारसिंह सराबा से पूछा कि उसे देश लौटकर क्या मिला? अमेरिका में वह अच्छा जीवन बिता रहा था; और अब जेल में पड़ा सड़ रहा है।

करतारसिंह सराबा ने उसी क्षण उत्तर दिया—"अमेरिका में मेरे लिए जीना दूभर हो गया था। जब अमेरिकन कोई अपमान की बात करते थे तो मेरा दिल जलकर राख हो जाता था। मैं असल में मरना चाहता था, और यहाँ मरने आया हूँ।"

श्री करतारसिंह सराबा के ये शब्द अमेरिका गए उस समय के बहुत से भारतीयों की मनः स्थिति का आभास कराते हैं।

गदर पार्टी आन्दोलन के विकास तथा क्रान्तिकारियों की लगन को समझने के लिए यह याद रखना जरूरी है कि अमेरिका गए लगभग प्रत्येक भारतीय को ही नस्ली भेद-भाव या उनके राष्ट्रीय स्वाभिमान पर चोट करने वाला कोई न कोई निजी कड़ुवा अनुभव अवश्य हुआ, इसलिए उनके मनों में एक गहरी राष्ट्रीय भावना और अंग्रेज सरकार के विरुद्ध घृणा पैदा हो गई।

भारतीय श्रमिकों की यह देश-भक्ति प्रारम्भ में राजनीतिक जानकारी प्राप्त करने, देश से पत्र मँगवाने और विद्यार्थियों के लिए छात्रवृति का प्रबन्ध करने के रूप में प्रकट हुई।

गदर पार्टी आन्दोलन के सम्बन्ध में चले मुकदमों में भी जिक्र आता है कि गदर पार्टी कायम होने से श्री ज्वालासिंह अट्टियाँ ने अपनी ओर से छात्रवृति देकर भारतीय विद्यार्थियों को पढ़ाई के लिए अमेरिका बुलवाने का प्रबन्ध किया था। बाबू तारकानाथ दास, श्री जी० डी० कुमार और श्री हरनामसिंह 'काहरी साहरी' ने भारतीय श्रमिकों में देश-भक्ति की उमंग पैदा करने के लिए एक सभा कायम की, जो कुछ महीने तक एक पत्र भी निकालती रही। इसी प्रकार भारतीयों में देश-भक्ति का प्रचार करने के लिए अस्टोरिया (ऑरेगन राज्य) में हिन्दुस्तानी एसोसियेशन कायम हुई। फिर कुछ पंजाबी देशभक्तों ने देश के लिए अपना जीवन अर्पित करने का प्रण कर लिया।

इनमें कुछ लोग ऐसे भी थे, जो पहले ही पंजाब के अँग्रेज-विरोधी आन्दोलनों से प्रभावित हो चुके थे। श्री सोहनसिंह भकना

सिक्खों के कूका आन्दोलन में बारह बरस तक भाग लेते रहे थे। कूका आन्दोलन ने ही उनके दिल में देशभक्ति की भावना उत्पन्न की थी। पंजाब में चले १९०७ के राष्ट्रीय जागरण आन्दोलन से प्रभावित कुछ व्यक्ति भी थे—श्री ठाकुरदास, रामचन्द्र पेशावरी आदि।

किन्तु देश-भक्ति की इस पैदा हो रही गहरी भावना के बावजूद अमेरिका के भारतीयों का अभी कोई केन्द्रीय संगठन नहीं था।

३

संघर्ष का सूत्रपात

भारतीयों के संघर्ष क सूत्रपात कनाडा से हुआ। कनाडा में खेती-बाड़ी और उद्योग-धन्धों की गति धीमी थी, इसलिए मजदूरों की उतनी माँग नहीं थी जितनी अमेरिका में थी। अमेरिकी समाज अलग-अलग यूरोपियन तत्वों से बना था, जिनकी यूरोप में अक्सर टक्कर होती रहती थी। अमेरिका के एंग्लो-सैक्सन नस्ल के प्राचीन निवासी पूर्वी तथा दक्षिण-पूर्व से आए नए यूरोपियनों को पसन्द नहीं करते थे। यूरोप से हर वर्ष नए लोग आ रहे थे और उनकी सबसे पहली चिन्ता नए देश में पैर जमाने की होती थी। इसलिए अमेरिका में एशियाईयों के विरुद्ध नस्ली भेद-भाव को स्पष्ट रूप से प्रकट होने में समय लगा। किन्तु कनाडा में अँग्रेज और फ्रांसीसी दो जातियों की ही बहु-संख्या थी। सन् १६०० से १६१४ के समय तक दोनों का जर्मनी के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा बना हुआ था। कनाडा में अंग्रेज तथा फ्रांसीसियों में भेदभाव था, पर एशियाईयों के विरुद्ध संयुक्त मोर्चा बनने के रास्ते में यह बाधा नहीं थी। इंगलैण्ड और फ्रांस की एशिया में बस्तियाँ भी थीं, इसलिए अंग्रेज तथा फ्रांसीसी, भले ही वे कनाडा में आकर बस गए थे, एशियाईयों विशेषतया भारतीयों

को गुलामों के समान तुच्छ समझते थे। कनाडा गए भारतीयों में से काफी लोग उन्नति करके दुकानों तथा भूमि के मालिक बन गए थे। इनमें से कुछ व्यापार और ठेकेदारी भी करने लगे थे। कनाडा वाले यह क्यों सहन करते कि भारतीय आर्थिक-क्षेत्र में उनका मुकाबला करें। और फिर कनाडा ने अमेरिका की भाँति 'स्वतन्त्रता, समानता और 'एकता' की शानदार परम्परा भी कायम नहीं की थी।

दोनो देशों के मध्य सबसे बड़ा अन्तर यह था कि कनाडा में जातिभेद और आर्थिक कारणों से राजनीतिक कारण ही प्रमुख थे। परन्तु भारतीयों के विरुद्ध घृणा और भेदभाव की तह में, दोनों देशों में अधिक या कम जातिभेद अवश्य काम कर रहा था। पर भारत अमेरिका के अधीन नहीं था, इसलिए भारतीयों में राजनीतिक जागृति उत्पन्न होने से अमेरिकनों को सीधी ठेस नहीं लगती थी जिससे कि अमेरिका की सरकार को उनके विरुद्ध कोई विशेष कदम उठाने के लिए मजबूर होना पड़ता। इसके विपरीत कनाडा अंग्रेजी राज्य का एक उपनिवेश था, यद्यपि भारत उसके सीधे कब्जे में नहीं था, तो भी उसके स्वार्थ अंग्रेजी शासन के साथ जुड़े हुए थे। भारतीय स्वतन्त्र देशों से स्वतन्त्र विचारों को लाकर भारत में उनका प्रचार करें, इससे अंग्रेजों के स्वार्थों को हानि पहुँचती थी। जनरल स्वेम ने अपने प्रेस इण्टरव्यू में यह माना कि राजनीतिक दृष्टि से भारतीयों का यहाँ या किसी भी गोरा बस्ती में रहना इसलिए अनुचित है कि वे गोरों का भेद जान लेते हैं। ये आदमी लौटकर भारत में जाते हैं और गुलामी के बन्धनों से मुक्ति के विचारों का प्रचार करते हैं जिससे राज्य और कानून की मशीनरी उलट सकती हैं।"

इसलिए अंग्रेजी साम्राज्य के स्वार्थों को ध्यान में रखकर कनाडा की सरकार और उसके कठपुतलों ने भारतीयों को कनाडा से निकाल बाहर करने और प्रवेश पर पाबन्दी की नीति अपनाकर अमेरिका महाद्वीप में भारतीयों के राजनीतिक संघर्ष को तुरन्त ठोस रूप देने का प्रयत्न किया।

जब तक भारतीय इक्के-दुक्के कनाडा में आते रहे, कनाडा वालों ने उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। पर जब भारतीय लगभग प्रत्येक जहाज में बीस या इससे अधिक की टोलियों में आने लगे, तो 'हिन्दू खतरे' का नारा उठने लगा। कई कनाडावासियों को यह खतरा दिखाई देने लगा कि कहीं भारतीय ब्रिटिश कोलम्बिया में न छा जाएँ। लेखकों, भाषण-कर्त्ताओं और मजदूर यूनियन के नेताओं ने मिलकर आने वाले भारतीयों के विरुद्ध आन्दोलन खड़ा कर दिया। उन्हें बदनाम करने के लिए हरेक प्रकार के झूठ गढ़े गए और हथकण्डे खेले गए। छोटी-छोटी बातों को बढ़ाकर पेश किया गया, और लोगों के झुण्डों को कनाडा से भारतीयों को निकालने के लिए भड़काया गया। कनाडा के संसद-सदस्य मि० एच० एच० स्टीफिन्स ने अलग-अलग संगठनों में भाषण देने के लिए बढ़-चढ़कर भाग लिया। वह भारतीयों और उनकी संस्कृति के विरुद्ध प्रचार करने के लिए फिलेडलफिया तक जा पहुँचे। भारत में रह चुके टोरण्टो विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर ने पत्रों को लिखा कि जो भारतीय यहाँ प्रवेश कर भी चुके हैं—उन्हें वापस भेज दिया जाए। 'मौंट्रीयल सटार' नाम के पत्र को ब्रिटिश कोलम्बिया के एक सम्वाददाता ने लिखा—"इस बात की कोई परवाह नहीं कि ये लोग (भारतीय) अंग्रेजी राज्य के नागरिक हैं या इन्होंने अंग्रेजों

की लड़ाईयों में भाग लेकर मैडल लिए हुए हैं। ब्रिटिश कोलम्बिया के निवासी इसे गोरों की बस्ती कायम रखना चाहते हैं। हम इन लोगों को नहीं चाहते और न ही रखने का इरादा रखते हैं। भले ही अंग्रेजी सरकार और बादशाह जार्ज यह चाहते हों।" एक रिपोर्ट के अनुसार टोरण्टो के एक प्रसिद्ध मजदूर नेता मि० जेम्ज सिम्पसन ने कहा कि अगर टोरण्टो के धर्म-प्रचारकों ने सिक्खों का साथ दिया, जो अपने परिवार यहाँ लाना चाहते हैं तो संगठित मजदूर गिरजों की संस्थाओं से भी टक्कर लेंगे।

सन् १९०७ में कनाडा आने वाले भारतीयों की संख्या एक हजार से ऊपर हो गई। भारतीयों ने इतनी आर्थिक उन्नति की कि उनकी दो बड़ी कम्पनियाँ—जमीन, खान, सम्पत्ति सम्बन्धी तथा अन्य व्यापार करती थीं। पन्द्रह से बीस तक भारतीयों के दफ्तर थे, जो जायदाद की क्रय-बिक्रय का काम करते थे। उनकी सफलता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि उनमें से सिर्फ एक का काम तीन लाख तक का था। भारतीयों की इस आर्थिक उन्नति ने कनाडा वालों के अन्दर ईर्ष्या पैदा कर दी। यह ईर्ष्या भी उनके विरुद्ध घृणा के कारणों में से एक थी। पर असली सबसे बड़ा कारण जातिगत भेद-भाव था, जो अंग्रेजी साम्राज्य के स्वार्थों के रूप में पैदा हुआ। मजदूर संगठनों ने भारतीयों के लिए काम ढूँढना मुश्किल बना दिया। भारत के विरुद्ध जातीय भेद-भाव की आग इतनी तेज हो गई कि तीन सरकारी एजेन्सियाँ भी इसमें खुले तौर पर भाग लेने लग गईं। विक्टोरिया की म्युनिसिपल कमेटी ने यह निर्णय किया कि भारतीयों को काम पर न लगाया जाय। सन् १९०६ में (जब कनाडा आए भारतीयों की संख्या केवल ३८७ थी)

भारतीय यात्रियों की एक टोली जहाज पर वैनकोवर पहुँची, जिसमें से कितनों को कनाडा उतरने के योग्य माना गया, किन्तु वैनकोवर के मेयर ने भारत विरोधी तत्वों को शुरू करने के लिए आज्ञा दी कि इन भारतीय यात्रियों को जहाज से न उतरने दिया जाय। तीन-चार दिन तक पुलिस की नाकाबन्दी रही, और यात्रियों को न उतरने दिया गया। क्योंकि यह पेशाबन्दी गैर-कानूनी थी, इसलिए अधिकारी वर्ग डर गया। चौथे दिन अपने आप ही पुलिस वहाँ से चली गई, और भारतीय शहर में घुस आए। सी० एफ० एण्ड्रूज ने लिखा है कि भारतीयों पर हमले भी किए गए।

सन् १९०७ के अन्तिम दिनों में वैनकोवर में एशियाइयों के विरुद्ध बलवे हुए। भीड़ ने क्रोध में आकर जापानियों की बहुत सारी सम्पत्ति बरबाद कर दी। पर भारतीयों को नहीं छेड़ा गया। जब एशियाइयों के विरुद्ध आन्दोलन का बहुत जोर था, तो कनाडा सरकार ने यह मौका देखकर अपना एक मत्री कनाडा में जापानियों की रोक-थाम के सम्बन्ध में समझौता करने के लिए जापान भेजा। मजदूर-विभाग के उपमंत्री मि० डब्लू० एल० मैकेन्जी किंग को कनाडा में भारतीयों का प्रवेश रोकने के सम्बन्ध में बातचीत करने इंगलैण्ड भेजा गया। मि० किंग न तो भारत आए और न ही भारतीयों से बातचीत की। मि० किंग की रिपोर्ट का परिणाम यह हुआ कि ९ मई, सन् १९०७ को प्रिवी कौंसिल ने निम्नलिखित आज्ञा निकाली—

"आज की तारीख से और बाद में कनाडा में सिर्फ वही प्रवेश कर सकेंगे, जो देश से जिसके वे असली निवासी और नागरिक हैं, सीधी यात्रा द्वारा कनाडा आएँगे।"

भारत से सीधे कनाडा जहाज नहीं जाते थे, इसलिए इस आज्ञा का परिणाम यह हुआ कि भारतीयों का कनाडा में प्रवेश बिलकुल बन्द हो गया। सन् १९११ में कनाडा की सीमा में ११,९३२ चीनी और २,९८६ जापानी दाखिल हुए। पर इस दौरान सिर्फ एक भारतीय को कनाडा उतरने दिया गया। 'मौंट्रीयल विटनस' नाम के कनाडियन पत्र ने लिखा—

"अमेरिका ने जातिभेद और पक्षपात सम्बन्धी बेहद प्रसिद्धि हासिल की है, लेकिन हम अपने पड़ोसियों से अधिक सख्त हैं। बहुत से भारतीय अमेरिका के विश्वविद्यालयों में पढ़ते हैं, पर हमारे विश्वविद्यालयों में वे जाने क्यों नहीं आ सकते...यह बड़ी अजीब बात है कि सारे एशियाइयों में से हमारे शासन के सह-नागरिक (हमशहरी) भारतीयों को ही इस अपमानजनक व्यवहार का निशाना बनाया गया है। देश में हजारों चीनी-कुटुम्ब प्रत्येक सदस्य का कर देकर आ रहे हैं। कई नियमों के अनुसार उनके परिवार भी आ सकते हैं। जापानी कर दिए बिना आ सकते हैं। शर्त यह है कि प्रत्येक के पास पचास डालर हों। उनके परिवार भी आ सकते हैं...कुछ महीने पहले उसी जहाज, जिस पर छः भारतीय स्त्रियाँ आईं—सोलह जापानी स्त्रियाँ वेनकोवर पहुँची। जापानियों के आने का किसी को कोई अफसोस न हुआ, पर क्योंकि भारतीय स्त्रियाँ अपने पतियों के पास जाना चाहती थीं। हमारे लोगों की एक श्रेणी को यह बुखार चढ़ गया कि कनाडा को गोरों का देश बनाए रखना है। भारतीय स्त्रियों को कनाडा की सरकार ने सिर्फ रहम के आधार पर जहाज से उतरने दिया।"

कनाडा की सरकार के कानून-कायदों पर ठीक तरह से अमल

नहीं होता था। जो भारतीय अपने परिवार को मँगवाने और उसके कनाडा में प्रवेश के सम्बन्ध में मुकदमा लड़ने के लिए बहुत-सा धन खर्च करने को तैयार होता, वह अपना परिवार वहाँ मँगवाने में सफल हो जाता। श्री बलवन्तसिंह ने (तीसरा षड्यन्त्र) केस अपने बयान में बताया कि उन्हें कैसे अपने परिवार के लिए कनाडा का टिकट लेने की कोशिश में भटकना पड़ा। पुलिस कमिश्नर कलकत्ता को मिले और भारत सरकार के मंत्री को भी लिखा, लेकिन परिणाम कुछ न निकला। अन्त में जुलाई, १९११ में परिवार-सहित हांगकांग चले गए। पर वहाँ भी टिकट नहीं मिला। अगस्त में सानफ्रांसिस्को इस विचार से गए कि अमेरिका होते हुए कनाडा में प्रवेश कर सकें। सानफ्रांसिस्को में भी उन्हें नहीं उतरने दिया गया। कारण यह बताया गया कि पहले वे कनाडा में रह चुके हैं और वहाँ पर उनकी जमीन भी है। उन्हें मजबूर होकर हांगकांग लौटना पड़ा। इस यात्रा में श्रीभागसिंह तथा श्रीहाकिमसिंह के परिवार भी श्री बलवन्तसिंह के साथ थे। उन दिनों वैनकोवर के भारतीयों ने ओटावा सरकार के पास प्रतिनिधि मण्डल भेजा था, और माँग की थी कि भारतीयों को परिवार-सहित कनाडा आने की आज्ञा दी जाए। २५ दिसम्बर को कनाडियन पैसेफिक रेलवे का मैनेजर श्री बलवन्तसिंह से मिला। उसने बताया कि उसे श्रीबलवन्तसिंह, श्रीभागसिंह और उनके परिवारों का वैनकोवर की टिकटें देने की हिदायत मिली है। २१ जनवरी, १९१२ को यह सज्जन वैनकोवर पहुँचे। पुरुषों को जहाज से उतरने दिया गया, पर उनकी पत्नियों तथा बच्चों को भारी जमानतें लेकर अपने पतियों और पिताओं के पास जाने की आज्ञा इस शर्त पर दी गई कि वे ६ फरवरी, १९१२

को हाजिर हों। उस तारीख तक अगर उनके पक्ष में निर्णय न हुआ तो उन्हें कनाडा से निकाल बाहर किया जाएगा। ३० अप्रैल को आज्ञा हुई कि इन औरतों और बच्चों को कनाडा से निकाल दिया जाए। उन्हें अपने वारिसों से पृथक् करके हवालात में बन्द कर दिया गया। बन्दियों को न्यायालय में उपस्थित करने की अर्जी दी गई। स्त्रियों तथा बच्चों को रात के बारह बजे छोड़ा गया। १० मई को मुकदमा शुरू हुआ, पर स्थगित हो गया। भारतीयों के वकील मि० ए० एम० हारपर का दावा था कि भारतीय स्त्रियों और बच्चों को हिरासत में लेना गैर-कानूनी है। कुछ समय बाद सरकार ने मुकदमा वापस ले लिया। भारतीय स्त्रियों तथा बच्चों को रहम के आधार पर कनाडा में रहने दिया गया।

कनाडा में रह रहे भारतीयों पर ऐसे पक्षपातपूर्ण व्यवहार का जो प्रभाव पड़ा, उसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। विशेषकर चीनियों और जापानियों के परिवार आसान शर्तें पूरी करके आ सकते थे। चीनी-जापानियों के मुकाबले में भारतीयों के साथ इस व्यवहार का एक ही मतलब हो सकता था कि उन्हें स्वतन्त्र देशों का वातावरण मिलने से अंग्रेजी स्वार्थों को ठेस पहुँचती थी।

जनरल स्वेम ने कहा—"मैं भारतीयों को जबर्दस्ती निकालने का सख्त विरोधी हूँ, क्योंकि इससे भारत में परिस्थिति खराब हो सकती है।"

हुण्डोरास योजना सन् १६०८ में तैयार की गई। यह किसने तैयार की, इसका किसी को पता नहीं। पर इसका ध्येय था कि साँप भी मर जाय और लाठी भी न टूटे। अर्थात् भारतीयों को कनाडा

से निकाल भी दिया जाए, और कनाडा की सरकार के सिर बद-
नामी का टीका भी न लगे। ओटावा सरकार का एक अफसर मि०
हापकिन्स वैनकोवर आया और उसने भारतीयों की पेशकश की कि
वे कनाडा की बजाए ब्रिटिश हुण्डोरास चले जाएँ। उसने भारतीयों
को हुण्डोरास सम्बन्धी बड़े सब्जबाग दिखाए। भारतीयों की
एक बैठक बुलाई गई जिसमें ओटावा का कमिश्नर भी शामिल था।
कमिश्नर ने कहा कि सरकार की इच्छा उन भारतीयों को हुण्डो-
रास भेजने की है, जिन्हें कनाडा में काम नहीं मिलता। इसी हेतु
इन्स्पेक्टर हापकिन्स, कमिश्नर तथा भारतीयों के प्रतिनिधि श्री
शामसिंह और नागरसिंह १५ अक्तूबर, १९०८ में हुण्डोरास गए।

मध्य अमेरिकी द्वीप की इस बस्ती हुण्डोरास में भारतीयों के
प्रतिनिधि को तीस भारतीय मिले, जो भारतीय मजदूरों की उस
टोली में से बचे थे, जो बीस साल पहले इकरारनामे के अनुसार
वहाँ पर मजदूरी करने आए थे। इन मजदूरों ने देखा कि हुण्डोरास
की परिस्थिति उससे बिलकुल भिन्न थी जो उन्हें बताई गई थी।
हुण्डोरास में रह रहे मजदूर भारत लौटने के लिए बहुत उतावले
थे। हुण्डोरास जाने वाले भारतीयों को आठ डालर महीना और दो
सेर आटा, दो सेर चावल, आधा सेर चीनी, एक सेर दाल, आधा
सेर वनस्पति घी, साढ़े तीन छटांक नमक और ढाई छटांक मसाला
एक सप्ताह का राशन पेश किया गया। कनाडा में भारतीय चालीस
से साठ डालर महीना कमाते थे।

भारतीय प्रतिनिधि हुण्डोरास की परिस्थिति को एकदम भांप
गए और उनके साथ गए कनाडियन अफसरों को भी इस बात का
पता चल गया। भारतीय प्रतिनिधियों के लौटने पर एक बैठक की

गई, जिसमें १५०० के लगभग भारतीय, मि० हापकिन्स, ओटावा के कमिश्नर, बन्दरगाह का हैल्थ आफिसर डा० मुनरो, एक मिश्नरी, एक वकील और एक पत्र-प्रतिनिधि शामिल थे। भारतीय प्रतिनिधियों ने हुण्डोरास की परिस्थिति के बारे में बताते हुए कहा कि वहाँ पर मलेरिया और पीला बुखार बहुत है। अगर वर्षा न हो, तो पानी मोल बिकने लगता है। हुण्डोरास में मजदूरी आठ से बारह डालर है। उन्होंने यह रहस्य भी खोला कि प्रतिनिधियों को रिश्वत की एक भारी रकम इसलिए पेश की गई कि वे हुण्डोरास के पक्ष में रिपोर्ट दें। पर प्रतिनिधियों ने ऐसी कमीनी हरकत करने से साफ इन्कार कर दिया। उन्होंने एकमत होकर हुण्डोरास योजना को ठुकरा दिया।

उधर भारतीयों को हुण्डोरास भेजने की पूरी तैयारी कर ली गई थी। जब सरकार ने देखा कि हुण्डोरास-योजना के विरुद्ध भारतीय एकमत हैं, तो उसने जबरदस्ती भारतीयों को हुण्डोरास भेजने का फैसला किया। उन्हें एक निश्चित तारीख पर बन्दरगाह पर आ जाने की आज्ञा निकाली गई। हुआ यह कि, भारतीयों ने बन्दरगाह पर जाने की बजाय हथियार खरीद लिए, और जान की बाजी लगा देने का फैसला करके गुरुद्वारे में जमा हो गए। भारतीयों की इस दृढ़ता को देखते हुए अफसर ढीले पड़ गए और उन्होंने उनके साथ जबर्दस्ती करने का इरादा छोड़ दिया।

इन्हीं परिस्थितियों ने भारतीयों को संगठित होने के लिए मजबूर किया। वैनकोवर का गुरुद्वारा जिसकी कमेटी के प्रधान श्री भागसिंह और ग्रन्थी बलवन्तसिंह थे, भारतीयों के इस आन्दोलन (R esistance movement) का केन्द्र बन गया। इस आन्दो-

लन को असाम्प्रदायिक बनाए रखने और चलाने के लिए 'यूनाइटेड इण्डियन लीग' बनाई गई जिसमें सभी धर्मों के लोग सम्मिलित हुए, परन्तु इसका केन्द्र वैनकोवर का गुरुद्वारा ही रहा। मि० रहीम ने, जो उक्त लीग के 'हिन्दुस्तानी' पत्र के सम्पादक थे, लीग के उद्देश्यों का प्रचार करने में बढ़-चढ़कर भाग लिया। जून, १९१३ में एक और 'संसार' नाम का पत्र निकाला गया।

स्वतन्त्र देश के वातावरण ने कनाडा के भारतीय श्रमिकों में राजनीतिक जागृति पैदा कर दी थी। उनमें अपनी पराधीनता और अंग्रेजों के विरुद्ध भावना पैदा होनी आवश्यक थी। कनाडा की सरकार और इसके कर्मचारियों की ओर से उन्हें कनाडा से खदेड़ने के षड्यन्त्रों और दबाव ने उनके दिलों में अंग्रेज-विरोधी भावना को और भी तीव्र कर दिया। पर उनमें राजनीतिक जागृति नई-नई होने के कारण वे अंग्रेजों की राजनीतिक चालों का मुकाबला कर सकने की शक्ति नहीं रखते थे, इसलिए उन्होंने कनाडा, इंगलैण्ड और भारत की सरकार के पास प्रतिनिधि-मण्डल भेजकर अपने कष्ट-निवारण का रास्ता चुना।

कनाडा में भारतीयों के बसने का सवाल सन् १९२१ में लन्दन में हुई इम्पीरियल कान्फ्रेंस में उठाया गया। इसी समय भारतीयों ने कनाडा के गवर्नर-जनरल के पास अपने परिवार कनाडा मँगवाने की अनुमति के लिए अपील की। उस तरफ से निराश होकर भारतीयों ने ब्रिटिश कोलम्बिया के अधिकारियों के पास दर्खास्त दी। वहाँ से जवाब मिला कि यह मामला कनाडा की केन्द्रीय सरकार के हाथ में है। फिर भारतीयों ने कनाडा की संसद में अपील की। पर वहाँ भी कोई बात बनती न देखकर उन्होंने प्रो० तेजासिंह

रेवरैण्ड एल० डब्लयू हाल, डा० सुन्दरसिंह तथा श्री राजासिंह को ओटावा सरकार के पास एक प्रतिनिधि-मण्डल के रूप में भेजा। प्रतिनिधि-मण्डल ने 'यूनाइटेड इण्डिया लीग' और 'खालसा दीवान सोसायटी', वैनकोवर की तरफ से २६ नवम्बर, १६११ को ओटावा सरकार के गृह-मंत्री मि० रौगर्ज के सम्मुख निम्नलिखित माँगें पेश कीं—

"कनाडा के भारतीयों में नब्बे प्रतिशत से भी अधिक सिख हैं, जिन्होंने अंग्रेजी राज्य की बहुत सेवा की है। हमारी माँग है कि कनाडा में रहने वाले भारतीयों की पत्नियों और बच्चों को कनाडा में प्रवेश करने दिया जाए। दूसरी पाबन्दी, जिसका हटाया जाना आवश्यक है, वह कनाडा में लगातार सीधी यात्रा द्वारा पहुँचने की है।

कनाडा में बसने वाले भारतीय अच्छे नागरिक और श्रमजीवी सिद्ध हुए हैं। कनाडा में आकर बसी किसी भी जाति के लोगों से अगर उनका मुकाबला किया जाय तो वे किसी से कम नहीं हैं।

हम सरकार के साथ इस बात के लिए पूर्ण सहयोग करने को तैयार हैं कि बुरे लोगों के साथ कैसे पेश आया जाय। हम यह जमानत देने के लिए भी तैयार हैं कि कोई भी भारतीय 'पब्लिक फण्ड' की सहायता पर निर्भर नहीं करेगा।

हमारी यह भी माँग है कि कनाडा आने वाले भारतीयों से जो प्रति व्यक्ति दो सौ डालर दिखाने की शर्त है, इसे कम करके दूसरी जातियों के समान किया जाय।

हमारी दर्खास्त है कि कनाडा आने वाले विद्यार्थियों, व्यापारियों तथा यात्रियों पर से पाबन्दी हटाकर उनके साथ उसी तरह व्यवहार

किया जाय, जैसा दूसरी जातियों की इन श्रेणियों के साथ किया जाता है।"

प्रतिनिधि मण्डल कनाडा के बड़े मंत्री से भी मिला। अनेक मुलाकातों के बाद गृह-मंत्री ने यह आश्वासन दिया कि ब्रिटिश राज्य के नागरिक माने जाने की दर्खास्त पर सहानुभूति के साथ विचार किया जाएगा। ऑनरेबल मिस्टर रोगर्ज ने यह भी मान लिया कि परिवारों के सम्बन्ध में दर्खास्त पर शीघ्र विचार किया जाना चाहिए। भारतीयों की कनाडा-प्रवेश समस्या पर विचार-विमर्श करने के लिए उसने मि० बलेयर को विशेष अधिकारी बना कर भेजा। भारतीय दृष्टि से तो मि० बलेयर की रिपोर्ट ने इस समस्या को और भी उलझा दिया।

जब प्रतिनिधि मण्डल को ओटावा गए साल से ऊपर हो गया—और कई चुनौतियों के बावजूद कनाडा की सरकार ने कोई संतोषजनक निर्णय नहीं किया, तो कनाडा के भारतीयों की वैनकोवर के 'डोमीनियन हॉल' में सभा हुई। उसमें निर्णय किया गया कि ब्रिटिश और भारत सरकार के पास प्रतिनिधि मण्डल भेजा जाए।

यह प्रतिनिधि मण्डल ४ मार्च, १९१३ को मौंट्रीयल और सेंट जौन के रास्ते इंगलैण्ड के लिए चला। वहाँ पहुँचते ही प्रतिनिधि-मण्डल ने उपनिवेश आबादियों के मंत्री मि० लीऊस हारकोर्ट से मुलाकत की दर्खास्त दी, लेकिन उसने प्रतिनिधि मण्डल को मिलने से इन्कार कर दिया। इंगलैण्ड में प्रतिनिधि मण्डल ने सर विलियम वैडरबरन, सर हैनरी काटन, सर मच्छन्दर जी भावनगरी, सर के० जी० गुप्ता और संसद के कई सदस्यों के साथ मुलाकात की। एक सभा कैम्ब्रेज हॉल और एक कारवसन हॉल लन्दन में

हुई, जिसके सभापति सर मच्छुन्दर जी भावनगरी थे। सभा में प्रस्ताव पास करके अखबारों को प्रकाशनार्थ भेजे गए। इसके पश्चात् प्रतिनिधि मण्डल मि० गोखले से मिलने के लिए भारत को रवाना हो गया।

मद्रास में प्रतिनिधि मण्डल मि० नेटसन से मिला। बम्बई में सर फीरोजशाह मेहता और मि० वाशन से मिला, जिन्होंने पंजाब जाकर प्रयत्न करने की सलाह दी। लाहौर की भारत बिल्डिग में सभा की गई, जहाँ कनाडा के सवाल को लेकर श्री मेहरसिंह चावला, मियाँ जलालुद्दीन और चौधरी रामभज दत्त की एक कमेटी बनाई गई। और भी कई सभाएं की गईं। फिर प्रतिनिधि मण्डल पंजाब के लेफ्टीनेण्ट गवर्नर सर माईकल ओडवायर से मिला, तत्पश्चात् प्रतिनिधि मण्डल से सर कुँवर हरनामसिंह, ऑनरेबल कुँवर दलजीतसिंह, सर जोगिन्द्रसिंह, पण्डित मदनमोहन मालवीय, बनर्जी तथा वायसराय की कौंसिल के कई सदस्यों से भेंट की। प्रतिनि‍ि-मण्डल ने वायसराय से भी मुलाकात की। मण्डल के सदस्य कांग्रेस में कराँची अधिवेशन में भी शामिल हुए। वहाँ कनाडा के प्रवासी भारतीयों के पक्ष में प्रस्ताव पास कर के वायसराय को भेजा गया। मुस्लिम लीग ने भी ऐसा ही एक प्रस्ताव पास किया। पत्रों और सभाओं द्वारा प्रतिनिधि मण्डल ने अपनी माँगों के लिए काफी प्रचार किया। इस सारी भागदौड़ का अंग्रेजों की साम्राज्यवादी मशीनरी पर कोई असर नहीं पड़ा। अन्त में निराश होकर प्रतिनिधि मण्डल ९ अप्रैल, १९१४ को हांगकांग लौट आया।

अंग्रेज चाहते थे कि भारतीय कनाडा से वापस लौट जाए, पर वे भारत में सिख पलटनों की बगावत के भय से उन्हें जबर्दस्ती

नहीं निकालना चाहते थे। उन्होंने टेढ़े-मेढ़े ढंग तथा सामाजिक दबाव से काम लेकर भारतीयों को कनाडा छोड़ने पर मजबूर कर दिया। १९१९ में उनकी संख्या सिर्फ चौथाई अर्थात् १२०० रह गई।

इस अर्द्ध-सरकारी दबाव के दाँव-पेचों का प्रयोग करने वाला इम्मीग्रेशन विभाग का एक अधिकारी मि० हापकिन्स था। यह आदमी कनाडा में कैसे और कब प्रकट हुआ, यह किसी को मालूम नहीं। कनाडा के भारतोयों को सन्देह था कि मि० हापकिन्स को भारत या ब्रिटिश सरकार की ओर से वहाँ भेजा गया था। वह भारतीयों में फूट डलवाने और उनके सम्बन्ध में जासूसी करने में विशेष रूप से दिलचस्पी लेता था। तीसरे षड़यन्त्र केस के सरकारी गवाह बेलासिंह ने स्वयं माना था कि वह सन् १९०८ में इम्मीग्रेशन विभाग को खबरें पहुँचाया करता था। इसी मुकदमे में एक अन्य सरकारी गवाह मंगलसिंह ने भी यह माना कि वह मि० हापकिन्स के पास खबरें पहुँचाता था। उसे इम्मीग्रेशन विभाग के अधिकारियों की ओर से वापस देश भेजा गया और मि० हापकिन्स ने उसे कहा क वह अगर भगवानसिंह से जापान में मिले तो सूचित करे कि भगवानसिंह वहाँ पर क्या करता है। इससे साफ जाहिर है कि मि० हापकिन्स और उसकी पीठ थपथपाने वाली शक्तियों की दिलचस्पी सिर्फ कनाडा तक ही सीमित नहीं थी।

इस तरह कनाडा के भारतीयों को कानूनी संघर्ष के लिए मजबूर किया गया। उन्होंने अपना प्रतिनिधि मण्डल भारत तथा इंगलैण्ड भेजकर देख लिया कि उसका कोई परिणाम नहीं निकला है। इससे अंग्रेजी साम्राज्य के इरादे का पता चल गया। जब कनाडा के भारतीयों की यह मानसिक दशा थी, उसी समय श्री भगवानसिंह

सन् १६१२ के लगभग कनाडा आए। वह पीनांग और हांगकांग में ग्रन्थी (सिख पुरोहित) रह चुके थे, और वाणी के धनी थे। उनके आने के बाद वैनकोवर के गुरुद्वारे में हर सप्ताह बैठकें होतीं, जिनमें बताया जाता कि हरेक भारतीय जब दूसरे को मिले तो 'वन्देमातरम्' कहे। माँगें माँगने का समय निकल गया। अब तो अपने अधिकारों के लिए हथियार उठाने का समय आ गया है।

पहले षड्यंत्र केस की रिपोर्ट के अनुसार—"प्रसिद्ध बागी भगवानसिंह सन् १६१२ के अन्त या १६१३ के प्रारम्भ में कनाडा आया। उसने आते ही अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध धुआँधार भाषणों का सिलसिला आरम्भ कर दिया। वह तीन महीने रहा और भारतीयों के दिलों में बगावत की चिनगारी फेंक गया। भगवानसिंह को निर्वासित कर दिया गया।"

उस समय कनाडा के भारतीयों में कितना जोश भरा जा चुका था, इसका अन्दाज इसी बात से हो सकता है कि जब कनाडा में यह खबर फैली कि भगवानसिंह को निर्वासित किया जा रहा है, तो भारतीयों ने उसे जबर्दस्ती छुड़वाने का कार्यक्रम बनाया। लेकिन यह योजना सफल इसलिए नहीं हो पाई कि उन्हें पता ही नहीं चलने दिया गया कि भगवानसिंह को कहाँ पर रखा गया था।

प्रवासी भारतीयों का यह जोश और राष्ट्रीय जागृति अस्थायी नहीं थी, बल्कि इसने स्थायी रूप धारण कर लिया था। श्री भगवान सिंह की वैनकोवर की यात्रा के बाद, कनाडा के भारतीयों का संघर्ष एक नया मार्ग पकड़ चुका था। गदर पार्टी की स्थापना और उसके सिलसिलेवार विकास को समझने के लिए इन बातों की ओर विशेष ध्यान देना आवश्यक है कि श्री भगवानसिंह गदर पार्टी कायम होने

से कुछ वर्ष पहले कनाडा में आए। उन्होंने भारतीयों को क्रान्ति का सन्देश दिया, जो बाद में लाला हरदयाल ने अमेरिका के भारतीयों को दिया।

तीसरे षड्यन्त्र केस के फैसले से प्रकट है कि कैसे सन् १६०८ से लेकर कनाडा में अंग्रेज-विरोधी भावना ने जोर पकड़ा। सन् १६११ में श्रीभागसिंह, सोहनलाल पथिक आदि ने सभाओं में भाषण दिए कि अगर उनके परिवारों और बच्चों को कनाडा में नहीं उतरने दिया गया तो वे भारत लौटकर अंग्रेजों को अपने देश से निकाल बाहर करने के लिए संघर्ष करेंगे। कनाडा की परिस्थितियों के विरुद्ध भारतीयों का क्रान्तिकारी उभार पंजाबी किसान के स्वभाव और रुचियों के अनुसार एक महान् प्रतिक्रिया थी।

४
गदर पार्टी की स्थापना

आर्थिक संकट का शिकार होकर भारतीय, विशेषत: पंजाबी किसान, विदेशों को जाने के लिए मजबूर हुए थे। वहाँ उन्हें जो कड़ुवा अनुभव हुआ, उसने उनके दिलों में क्रान्तिकारी भावना को जन्म दिया और वे अपनी सारी मुसीबतों की जड़ पराधीनता को अपने कन्धों से उतार फेंकने के लिए संघर्षशील दिखाई देने लगे।

पहले षड्यन्त्र केस के फैसले में यह बात स्पष्ट तौर से मानी गई है कि सन् १९१३ के आरम्भ में उत्तरी अमेरिकी द्वीप के पश्चिमी किनारे की रियासतों (Pacific Coast States) में कुछ जोशीले तत्त्व मौजूद थे। वही तत्त्व जिन्हें लाला हरदयाल ने १९१३ में सुलगाना शुरू किया था। सर माईकल ओडायर ने भी लिखा—"लाला हरदयाल सन् १९११ के आरम्भ में अमेरिका आया, और उसने बर्कले, कैलीफोर्निया में अपना आसन जमा लिया। जहाँ पर आबाद भारतीयों में क्रान्तिकारी आन्दोलन की जड़ पहले से ही मौजूद थी। लाला हरदयाल को क्षेत्र तैयार मिला।"

अमेरिका-कनाडा गए अंग्रेज विरोधी इन भारतीय तत्त्वों ने गदर पार्टी आन्दोलन का रूप कैसे धारण किया, इसके सम्बन्ध में कई

भ्रान्तियाँ हैं। पर हमें गदर पार्टी सम्बन्धी चले मुकदमों से इसके बारे में ठीक पता चलता है। पहले मुकदमे में दर्ज है कि यह षड्-यन्त्र अमेरिका के पश्चिमी किनारे से आरम्भ हुआ। वैनकोवर और सानफ्रांसिस्को इसके दो बड़े केन्द्र थे। आरम्भ में वैनकोवर केन्द्र था, पर अन्त में सानफ्रांसिस्को ने इसके महत्व को कम कर दिया।

नन्दसिंह के बयान से हमें पता चलता है कि १९१२ के अन्त में भगवानसिंह ने बगावत की चिनगारी फेंकी। नवाबखान के अनुसार भी पता चलता है कि वैनकोवर में सन् १९११-१२ में तथा-कथित राजनैतिक मामलों पर बड़ी दिलचस्पी से विचार-विनियम होता था।

ऐसे ही समय लाला हरदयाल सानफ्रांसिस्को पहुँचा। लगता है कि वह आदमी १९१२ के अन्त या १९१३ के आरम्भ में पहले-पहल सानफ्रांसिस्को में प्रकट हुआ और इस शहर में नास्तिकता पर भाषण दिए। उसके भाषण में परमानन्द और ठाकुरदास मौजूद थे। उसने नवाबखान को समझाया कि उसका इरादा नास्तिकता का प्रचार करके किसी धुँधले तरीके से ईसाईयों में फूट डलवाने का है।

उसके सानफ्रांसिस्को आने का परिणाम यह हुआ कि उसके श्रोताओं में राजनीतिक विचार भरे गए······

राजद्रोह की आग धीरे-धीरे कैलोफोर्निया और ऑरगन में फैलने लगी।

पहला परिणाम यह हुआ कि अस्टोरिया (ऑरगन) में सन् १९१२ के अन्त या १९१३ के आरम्भ में 'हिन्दुस्तानी एसोसिएशन' स्थापित की गई। एक सभा में मुंशीराम, करीमबख्श, नवाबखान, केसरसिंह, बलवन्तसिंह और करतारसिंह ने भाषण दिए। श्री केसर

सिंह को प्रधान और बलवन्तसिंह को मंत्री चुना गया।

'हिन्दुस्तानी एसोसिएशन' के उद्देश्य निम्नलिखित थे—

१. भारत से देशी भाषाओं के पत्र मँगवाने का प्रबन्ध करना;

२. भारत से अमेरिका में विद्याध्ययन के लिए नवयुवकों को बुलाना, ताकि वे राष्ट्र-सेवा के लिए तैयार हो सकें;

३. राजनीतिक विचार-गोष्ठियों का आयोजन करना।

इसका परिणाम यह हुआ कि सदस्य अपने देश के बारे में सोचने लगे।

नवाबखान हमें यह भी बताता है कि 'हिन्दुस्तानी एसोसिएशन' का लगभग वही उद्देश्य था जो बाद में स्थापित हुई 'हिन्दी एसोसिएशन' का था। वह कहता है कि इसका उद्देश्य प्रत्येक धर्म के भारतीयों की एकता, विद्या को बढ़ाना और अँग्रेजी सरकार का विरोध करना था।

न सिर्फ अस्टोरिया में ही इस प्रकार की सोसाइटी स्थापित हुई, बल्कि पोर्टलैण्ड (ऑरगन) में एक इण्डियन एसोसिएशन भी काम करती थी। इससे स्पष्ट है कि सन् १९१३ के आरम्भ में पश्चिमी किनारे की रियासतों में क्रान्तिकारी जोश के चिह्न मौजूद थे। लाला हरदयाल के अमेरिका-आगमन की बात जब सारे भारतीयों में फैलने लगी तो श्री बालिराम, रामरखा, ठाकुरदास और अमरसिंह आदि ने मई, १९१३ में लाला हरदयाल को सेंट जॉन आने का निमंत्रण दिया। ऑरगन स्टेट में लाला हरदयाल की यात्रा का यह आरम्भ था। वह भाई परमानन्द के साथ वहाँ पहुँचे। भाई परमानन्द तो लौट गए, पर लाला हरदयाल सात दिन सेंट जॉन रहे। जहाँ उन्होंने भाषण दिए, और 'गदर' नाम का पत्र निकालने को

सुझाव रखा। तत्पश्चात् लाला हरदयाल ब्राईडलवेल (ऑरगन) गए। वहाँ एक सभा में पत्र निकालने का सुझाव रखकर सात-आठ सौ डॉलर चन्दा भी इकट्ठा किया।

अगले दिन वह सेंट जॉन लौट आए। लिंटन, पोर्टलैण्ड और आस-पास के शहरों से भारतीयों की एक सभा बुलाई गई। चन्दा इकट्ठा हुआ। सानफ्रांसिस्को से पत्र निकालने का निर्णय किया गया। सेंट जॉन, लिंटन और ब्राईडलवेल में चन्दा इकट्ठा करने के लिए समितियाँ कायम की गईं।

'हिन्दुस्तानी एसोसिएशन' ने लाला हरदयाल को अस्टोरिया लाने के लिए श्री करीमबख्श और श्री केसरसिंह को अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजा। वे लाला हरदयाल और श्री सोहनसिंह को साथ लेकर आए।

अस्टोरिया में एक महत्त्वपूर्ण सभा की गई, जिसमें लाला हरदयाल और श्री रामचन्द ने भाषण दिए। दोनों ने भारत से अंग्रेजी सरकार को खदेड़ने पर बल दिया। चन्दा एकत्र किया गया। सानफ्रांसिस्को से 'गदर' अखबार निकालने का पक्का फैसला किया गया। क्रान्तिकारियों की संस्था का नाम 'हिन्दुस्तानी एसोसिएशन ऑफ दी पैसिफिक कोस्ट' और प्रेस का नाम 'युगान्तर प्रेस' रखा गया। यह भी निर्णय किया गया कि भारत तथा दूसरे देशों में 'गदर' अखबार मुफ्त बाँटा जाय। उसी शाम को प्रीतिभोज हुआ, जिसमें लाला लाजपतराय और दूसरों का क्रान्तिकारी साहित्य बाँटा गया। प्रीतिभोज के बाद, लाला हरदयाल ने कई प्रमुख भारतीयों से बातचीत की। १६०७ के प्रसिद्ध बागी सरदार अजीतसिंह को अमेरिका लाने के लिए चन्दा इकट्ठा किया गया।

अगले दिन लाला हरदयाल ने अपने भाषण में कहा कि भारतीय अब अंग्रेजी सरकार का तख्ता उलट देने के लिए कटिबद्ध हो गए हैं। अस्टोरिया से लाला हरदयाल वीना (ऑरगन) और वहाँ से सेंट जॉन होते हुए सानफ्रांसिस्को लौट आए।

गदर पार्टी के पहले प्रधान श्री सोहनसिंह भकना के अनुसार 'हिन्दी एसोसिएशन' बाद में गदर पार्टी के नाम से प्रसिद्ध हो गई। पण्डित जगतराम भी पहले षड्यन्त्र केस के अपने बयान में मानते हैं कि 'गदर' अखबार के नाम को लेकर ही वहाँ के लोगों ने गदर पार्टी का नाम दे दिया, जो हमने भी सुविधाजनक समझते हुए मान लिया—पहले षड्यन्त्र केस के फैसले से यह स्पष्ट है कि गदर अखबार और गदर आन्दोलन की अन्य कार्रवाईयाँ 'हिन्दी एसोसिएशन ऑफ दी पैसिफिक कोस्ट' चलाती थी।

'गदर' ने स्वयं भी लिखा कि संघर्ष की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि अखबार निकाले जाएँ। पुस्तकें छपवाकर भारत में भेजी जाएँ, फौजी कवायद सीखी जाय, और विदेशी कौमों से सहायता के लिए अपील की जाय। इसी उद्देश्य को लेकर हिन्दुस्तानी एसोसिएशन 'ऑफ दी पैसिफिक कोस्ट' संस्था स्थापित की गई है जिसकी पोर्टलैण्ड, अस्टोरिया, सेंट जॉन, सेकरेमैण्टो, सराक्टन, ब्राईडलवेल और अन्य स्थानों पर शाखाएँ हैं। 'गदर' अखबार से ही यह बात स्पष्ट होती है कि आन्दोलन का संचालन करने वाली 'हिन्दुस्तानी एसोसिएशन ऑफ दी पैसिफिक कोस्ट' थी। सानफ्रांसिस्को मुकदमें में लिखा है कि जब हरदयाल अमेरिका छोड़ गया, तो उस समय जापान में रह रहे भगवानसिंह तथा मौलवी बरकतुल्ला सानफ्रासिस्को आए और उन्होंने श्री रामचन्द के साथ

मिलकर गदर पार्टी का चार्ज ले लिया। श्री भगवानसिंह को प्रधान और मौलवी बरकतुल्ला को उपप्रधान चुना गया।

'हिन्दुस्तानी एसोसिएशन आफ दी पैसिफिक कोस्ट' अर्थात् गदर पार्टी की स्थापना के सम्बन्ध में कई भ्रांतियाँ हैं।

सबसे बड़ी भ्रांति यह है कि गदर पार्टी की स्थापना के पीछे लाला हरदयाल से मिलकर जर्मनी या उस के एजण्टों द्वारा किया गया षड्यन्त्र था।

रौलट रिपोर्ट में यह उल्लेख है—

"सानफ्रासिस्को में जो सरकारी मुकदमा २२ नवम्बर, १९१७ को आरम्भ हुआ, उसमें इस्तगासे की ओर से पेश की गई गवाही के अनुसार जर्मन एजेण्टों और यूरोप में भारतीय क्रांतिकारियों के साथ मिलकर हरदयाल ने १९११ से पहले अमेरिका में एक आन्दोलन चलाने की योजना बनाई थी; और इस योजना के अनुसार कैलिफोर्निया में गदर पार्टी कायम की।"

भारत में गदर पार्टी आन्दोलन सम्बन्धी चले मुकदमों में से एक में भी यह जिक्र नहीं आया कि गदर पार्टी की स्थापना के पीछे जर्मनी या उसके एजेण्टों का हाथ था। यद्यपि ये अदालतें अंग्रेजी साम्राज्य की उस मशीनरी का अंग थीं, जिसके कर्मचारी गदर पार्टी के क्रांतिकारियों को जर्मनी का एजेण्ट कहकर बदनाम करते थे। तीसरे मुकदमे के फैसले में, भारत में गदर पार्टी आन्दोलन के असफल होने के बाद, जर्मनी के साथ गदर पार्टी के पैदा हुए सम्बन्धों का खोलकर ब्यौरा दिया है। पर उसमें यह भी स्पष्ट तौर से माना है कि गदर पार्टी की स्थापना में जर्मनी के हाथ होने का प्रमाण नहीं मिलता।

इस प्रकार यह स्पष्ट है, कि गदर पार्टी के साथ जर्मनी का सम्बन्ध जोड़ना केवल एक मिथ्या प्रचार था।

जहाँ तक अमेरिका-कनाडा गए भारतीय श्रमिकों के राष्ट्रीय जोश व उभार का सवाल है, कनाडा में ही पहले यह जोश उभरा और चमका; पर दोनों देशों की राजनीतिक पृथकता के कारण बाद में इसका पक्का अड्डा अमेरिका बन गया।

इसलिए 'गदर पार्टी' चाहे बाद में कायम हुई, पर कनाडा-अमेरिका के भारतीय श्रमिकों में अंग्रेजी साम्राज्य के विरूद्ध उठे राष्ट्रीय उभार को समूचे तौर पर गदर पार्टी आन्दोलन का नाम देना ही ठीक है, क्योंकि एक तो इस राष्ट्रीय उभार ने 'गदर पार्टी' को जन्म दिया, न कि गदर पार्टी ने इसको ; दूसरे जिस आन्दोलन का गदर पार्टी कारण बनी, वह कनाडा के भारतीयों की तरफ से गदर पार्टी बनने से पहले जारी किए गए आन्दोलन का भविष्य में जारी रहने वाला अमल था। गदर पार्टी सम्बन्धी सारे मुकदमों में इस सचाई को माना गया है। रौलट रिपोर्ट में तो यहाँ तक लिखा है कि कनाडा से भारतीयों का जो प्रतिनिधि-मण्डल इंगलैण्ड तथा भारत में आया था, उसने क्रांति का बीज बोने की दृष्टि से भारत की स्थिति को जाँचा। एक अंग्रेज लेखक ने तो यह भी लिखा है कि इस प्रतिनिधि-मण्डल ने यूरोप और भारत के क्रांतिकारियों के साथ सम्बन्ध पैदा किए, और ऐसा भी अनुमान है कि काबुल के अमीर को भी टटोलने की कोशिश की गई। यह पता लगाना कठिन है कि यह धारणा किस आधार पर बनी है।

पंजाब के पुलिस अधिकारियों के गदर सम्बन्धी लिखे सरकारी समाचार के शुरू में ही सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि यह

आम प्रचलित धारणा निर्मूल है कि लाला हरदयाल के दिल में यूरोप जाकर देश-भक्ति की भावना जगी। लाला हरदयाल के जो कागज-पत्र सी० आई० डी० के हाथ लगे उनसे जाहिर होता है कि कम से कम सन १६०५ से उन्होंने अपने लिए क्रांति का मार्ग चुन लिया था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अमेरिका जाने से पहले ही लाला हरदयाल के दिल में अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध घृणा के बीज बोए जा चुके थे।

भाई परमानन्द के अनुसार लाला हरदयाल यूरोप में अपनी राजनीतिक उद्देश्य-सिद्धि न देखते हुए निराश हो गए थे। यूरोप में उनकी राजनीतिक उद्देश्य-सिद्धि के लिए परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं थीं यह इस बात से सिद्ध होता है कि उन्होंने एक बार कहा था : "सरदार अजीतसिंह फ्रांस में बैठे बेकार समय खो रहे हैं।" पर अमेरिका के भारतीयों के सम्बन्ध में लाला हरदयाल ने लिखा : "भारतवासियों को सिर्फ निराशा के काले बादल दिखाई देते हैं, और लगता है कि सूर्य सदा के लिए छिप गया है। किन्तु मैंने वह आशा की झलक देखी है, जो उन्हें दिखाई नहीं देती। यूरोप विशेषकर अमेरिका में सदाचार, दृढ़ता, त्याग तथा कड़ा श्रम देखा है। वहाँ मैंने देखा है कि हमारे देश के लोग परिस्थितियों के विपरीत होते हुए भी ऊँची से ऊँची खूबियाँ पैदा कर सकते हैं और ठोस काम कर सकते हैं। जहाँ बातें कम और काम अधिक, भविष्य के सम्बन्ध में हवाई सपने कम और वर्तमान में सफलता-प्राप्ति अधिक......" अमेरिका गए भारतीयों के बारे में लाला हरदयाल की यह धारणा सन १९११ के आरम्भ की है।

पंजाब पुलिस के अधिकारियों की गदर षड्यन्त्र सम्बन्धी

लिखित रिपोर्ट के अनुसार लाला हरदयाल जनवरी, १९११ तक मार्टनीक नाम के द्वीप (वेस्ट इण्डीज) में रहे। फरवरी, १९१२ में सटेनफोर्ड (कैलीफोर्निया) यूनिवर्सिटी में भारतीय दर्शन तथा संस्कृत के प्रोफेसर नियुक्त किए गए। लेकिन इसी वर्ष सितम्बर में इस पद से त्याग-पत्र देकर बर्कले आ गए। ऐसा लगता है कि वह आरम्भ में विद्यार्थियों के क्लब कायम करने, अराजकता सम्बन्धी भाषण देने, और सारे भारतीयों में, विशेषकर नवयुवकों में बगावत फैलाने में लग गए। सन् १९१३ में अमेरिका-भर में बिखरे पड़े भारतीय श्रमिकों की ओर ध्यान दिया और उन्हें अंग्रेजों के विरुद्ध उकसाना शुरू कर दिया।

भाई परमानन्द लिखते हैं कि पैरिस में अपना राजनीतिक ध्येय प्राप्त होता न देखकर लाला हरदयाल तपस्या करने के लिए अलजीरिया (अफ्रीका) चले गए। अलजीरिया का वातावरण पसन्द न आने के कारण वापस पैरिस लौट आए और तपस्या का संकल्प लेकर ही वहाँ से वेस्ट इण्डीज के मार्टनीक द्वीप में चले गए। फिर वह भाई परमानन्द की प्रेरणा से हारवर्ड (अमेरिका) लौट आए। हारवर्ड की जलवायु अनुकूल न होने के कारण वहाँ से कैली-फोर्निया चले गए। पर कुछ महीनों के बाद तपस्या करने का विचार फिर जोर मारने लगा, और वहाँ से होनोलुलू चले गए। होनोलुलू से वापस सानफ्रांसिस्को (कैलीफोर्निया) आए। यहाँ भाई परमानन्द ने उन पर तपस्या का विचार त्याग देने के लिए जोर डाला और उनसे हिन्दू दर्शन पर भाषण दिलवाने का प्रबन्ध किया। तत्पश्चात् बर्कले यूनिवर्सिटी के भारतीय विद्यार्थियों ने इसी विषय पर लाला हरदयाल के भाषण करवाए, जिन्हें सुनकर बर्कले यूनिवर्सिटी का

कि उनका झुकाव भले ही समाजवाद या साम्यवाद की ओर था या अराजकतावाद की ओर; पर जब भी उनके विचार राजनीति को ओर मुड़े तो इनकी तह में अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध गहरी घृणा रही। और वास्तव में उनकी रुचि अंग्रेजी साम्राज्य पर चोट करने के लिए क्रान्ति का मार्ग ढूंढने की दिखाई देती।

सितम्बर, १६१२ और मई, १६१३ के बीच के सात-आठ महीने ऐसे हैं कि लाला हरदयाल के विचारों तथा सरगर्मियों की कोई स्पष्ट तस्वीर नहीं मिलती। इससे यही सिद्ध होता है कि उन्हें इस दौरान में अपने उद्देश्य के लिए कोई ठोस सफलता नहीं मिली, जो सरकार और लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती। आगे चलकर अमेरिका के भारतीयों के अत्यधिक उत्साह ने लाला हरदयाल को निडर होकर आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन दिया। लाला हरदयाल ने उनकी नब्ज को भाँपकर उनकी भावनाओं के अनुसार क्रान्तिकारी कार्यक्रम पेश किया।

गदर पार्टी की स्थापना के सम्बन्ध में यह बात बिलकुल ठीक है कि अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध उमंग का जो फल पक चुका था, वह लाला हरदयाल के छूते ही उनको झोली में आ गिरा। गदर पार्टी के समूचे विकास की ओर देखते हुए यह बात स्पष्ट है कि कनाडा-अमेरिका के भारतीयों के राष्ट्रीय उभार ने इस आन्दोलन का रूप धारण कर लिया। श्री हरनामसिंह 'टुण्डीलाट' से एक ऐसी घटना का पता चला है, जो इतिहास में कहीं नहीं लिखी गई। इस घटना से उस समय अमेरिका में बसे भारतीयों के अंग्रेज सरकार के विरुद्ध जोश का पता चलता है। जब लाला हरदयाल ने ऑरगन स्टेट का दौरा करते समय एक स्थान पर अंग्रेजों को निकाल बाहर

करने और इसी उद्देश्य को लेकर एक अखबार निकालने का सुझाव रखा, तो एक भारतीय ने उठकर कहा कि अखबार निकालने में समय क्यों खोते हो ? बात तो हम समझ ही गए हैं। जहाज चलते हैं। चलो चलें, और अपने देश से अंग्रेजों को निकालें।

किसी भी आन्दोलन के पीछे किसी-न-किसी महान् व्यक्ति का हाथ तो होता ही है। गदर पार्टी की स्थापना में लाला हरदयाल के व्यक्तित्व ने बड़ा काम किया। उनकी विद्या-बुद्धि ने बर्कले यूनिवर्सिटी के संस्कृत के प्रोफेसर को भी मोह लिया था। योग्यता, सादगी और त्याग के कारण उन्होंने यूनिवर्सिटी और कैलीफोर्निया के पत्रों में भी बड़ा सम्मान प्राप्त किया। अमेरिका के अखबार उन्हें 'हिन्दू सन्त' की उपाधि से विभूषित करते रहे। गदर पार्टी आन्दोलन के लिए की गई लाला हरदयाल की सेवाएँ असाधारण हैं; और स्वातन्त्र्य संग्राम के इतिहास में उनका स्थान सुरक्षित है।

५

गदर पार्टी का विधान

गदर पार्टी का उद्देश्य, उसके नियम-उपनियम और पार्टी-मेम्बरों के कर्त्तव्य एक समिति द्वारा काफी सोच-विचार के बाद तैयार किए गए।

आदर्श—आजादी तथा समानता।

नियम-उपनियम—(१) आजादी का हरेक इच्छुक, बिना जाति या देश भेद के 'हिन्दुस्तानी एसोसिएशन' में शामिल हो सकता है।

(२) गदर पार्टी के हरेक सिपाही का परस्पर कौमी रिश्ता होगा, न कि धार्मिक। न ही कभी गदर पार्टी में धार्मिक चर्चा को स्थान दिया जाएगा। कोई भी धार्मिक विचारों को लेकर गदर पार्टी में शामिल नहीं हो सकेगा। प्रत्येक भारतीय, भारतीय होता हुआ, और प्रत्येक मनुष्य, मनुष्य के नाते इसका सदस्य बन सकेगा।

(३) खाने-पीने की सबको खुली छूट होगी। भले ही कोई माँस खाए या सब्जी, गाय या सूअर, हलाल या झटका। उसकी आजादी में हस्तक्षेप करने का किसी को अधिकार नहीं होगा।

(४) एसोसिएशन का राष्ट्रीय गीत 'बन्देमातरम्' होगा।

सिपाही का कर्त्तव्य—

(१) संसार के किसी भी भाग में, जहाँ कि पराधीनता के

विरुद्ध युद्ध छिड़े, गदर पार्टी के सिपाही का कर्त्तव्य होगा कि वह आजादी तथा समानता के समर्थकों की तन, मन, धन से सहायता करे।

(२) भारत की आजादी के लिए तन, मन, धन तथा जैसी भी कुर्बानी करनी पड़े, गदर पार्टी का सदस्य उससे मुँह नहीं मोड़ेगा।

(३) भारत में से अंग्रेजी राज्य खत्म करके पंचायती राज्य कायम करना हरेक सदस्य का पहला कर्त्तव्य होगा।

(४) असफलता का मुँह देखने पर भी अपने आदर्श से पीछे न हटना, जब तक कि गदर पार्टी का एक सदस्य भी जिन्दा है। अपने कार्य को सतत् जारी रखना उसका कर्त्तव्य है।

पहले षड्यन्त्र केस का फैसला इन शब्दों से प्रारम्भ होता है—

'जहाँ भी कोई सरकार हो, वहाँ कुछ बेचैनी होती है। भले ही उस बेचैनी का कारण उचित हो या अनुचित। पर जिस षड्यन्त्र के सम्बन्ध में मुकदमा चल रहा है, उसके मनोवैज्ञानिक कारणों के बारे में विचार करना हमारा काम नहीं।" इसका मतलब यह हुआ कि जजों ने गदर आन्दोलन पैदा होने के कारणों तथा उसके उद्देश्य और ध्येय के बारे में विचार करने में हिचकिचाहट दिखाई है। पहले मुकदमे के एक जज टी० पी० एलस ने श्री गुरमुखसिंह का पूरा बयान न लिखने के पक्ष में इस भाव का नोट लिखा कि विशेष कानून, जिसके अन्तर्गत गदर पार्टी आन्दोलन से सम्बन्धित मुकदमे चलाए गए—का अभिप्राय यह था कि तथाकथित षड्यन्त्रकारियों को राजनीतिक प्रचार करने का अवसर न दिया जाए। इस तरह गदर पार्टी से सम्बन्धित सभी मुकदमों के फैसलों में इसके पंचायती राज्य के उद्देश्य तथा अ-साम्प्रदायिक दृष्टिकोण को छिपाने का प्रयत्न

किया गया है। पर यह दृष्टिकोण और उद्देश्य गदर पार्टी की बुनियाद थी, इसलिए कहीं-कहीं इसका जिक्र आने से नहीं रहा।

'भारत जाने का अभिप्राय' शीर्षक के अन्तर्गत पहले षड्यन्त्र केस में लिखा है—"क्रान्तिकारियों के स्वराज्य की 'गदर' अखबार ने स्पष्ट व्याख्या की है···काफिरों को निकालकर भारत के आजाद शासक बनो···पंचायती राज्य द्वारा खुशी प्राप्त होती है···इस आन्दोलन का मन्तव्य यह है कि भारत के लोग गदर करें। घुन खाए वृक्ष की भाँति अंग्रेजी सरकार को जड़-मूल से उखाड़कर एक राष्ट्रीय सरकार कायम करें···।

और सोहनसिंह ने मिण्टगुमरी जेल में जेलर को बताया—"हमें हमेशा पंचायती राज्य की इच्छा रखनी चाहिए···पार्टी का बुनियादी सिद्धान्त किसी भी साधन द्वारा स्वराज्य प्राप्त करना था···"मूलासिंह ने बताया कि यदि अफीमची चीनी पंचायती राज्य कायम कर सकते हैं, तो भारतीय भी करसकते हैं। हमारा लक्ष्य उन पद-चिह्नों पर चलना है, जिन पर चीन और दूसरे देश, जहाँ क्रान्तियाँ हुईं, चले थे।

मांडला षड्यन्त्र केस के फैसले में 'गदर' अखबार का जिक्र करते हुए लिखा गया है—"यह अखबार अपने पहले अंक से ही खुले तौर पर बागी था। पंचायती राज्य कायम करने के लिए अंग्रेजों को भारत में विद्रोह करके जबर्दस्ती निकालने का प्रचार करता था।"

मांडला केस में जिक्र है कि श्री हीरासिंह ने बैंकाक में भाषण देते हुए कहा—"बादशाह सलामत का राज्य खत्म होने पर हम पंचायती राज्य स्थापित करेंगे।"

पंचायती राज्य का लक्ष्य न सिर्फ शुरू में बना लिया गया था;

बल्कि इसे अमली रूप देने का अन्तिम समय तक ध्यान रखा गया। पूर्व-निश्चित गदर शुरू होने के समय बाँटने के लिए छापी गई 'युद्ध की घोषणा' में लिखा था—"अब समय है विद्रोह करने का, और अपना देश स्वतन्त्र करवाने का। मैं तुम्हें एक लड़ाई के सम्बन्ध में बता रहा हूँ, जिसकी घोषणा की गई है······और जो समस्त भारत में फैल गई है···क्या तुम चैन से बैठ सकते हो जबकि एक लड़ाई जारी हो ?···तुम इस लड़ाई में हमारे साथ शामिल होगे। तुम्हें एक होना चाहिए। मौजूदा सरकार को जड़ से उखाड़ देना चाहिए और एक पंचायती राज्य स्थापित करना चाहिए।"

भारत में जब गदर के निश्चित समय से पहले श्री रासबिहारी बोस ने सुच्चासिंह को अम्बाला भेजा, तो उसे यह हिदायत दी गई कि सूचना मिलते ही अँग्रेजी पलटनों को मारकर गदर शुरू कर दिया जाए और पंचायती राज्य की घोषणा कर दी जाए। सौ सवार वह लाहौर भेज दे, और शेष को लेकर दिल्ली जाए।

एक अर्द्ध-सरकारी अमेरिकन रिपोर्ट में भी यह माना गया है कि गदर पार्टी का मन्तव्य भारत में जनवादी राज्य स्थापित करना था।

वे किस तरह का पंचायती राज्य चाहते थे, इसकी व्याख्या कहीं नहीं मिलती। पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि गदर पार्टी के सामने अमेरिका का नमूना था, जिसका प्रभाव ग्रहण करके पंचायती राज्य का लक्ष्य निश्चित किया गया।

गदर पार्टी सम्बन्धी चले मुकदमों में इस आन्दोलन के असाम्प्रदायिक दृष्टिकोण का और भी कम जिक्र है। नवाब खान ने अपनी गवाही में बताया कि 'हिन्दुस्तानी एसोसिएशन' का लगभग वही मन्तव्य था, जो बाद में बनी गदर पार्टी का था। यह समस्त

भारतीयों की एकता को मुख्य मानती थी। अमेरिका से आते समय रास्ते में पीनांग और रंगून में एकता का प्रचार किया गया। नवाब खान ने ही जिरह के उत्तर में बताया कि गदर पार्टी इस्लाम के विरुद्ध नहीं है। गदर पार्टी के सिख और मुस्लिम मेम्बर एक साथ बैठकर खाना खाते हैं और कोई एतराज नहीं किया जाता।

पंजाब सरकार ने २४ फरवरी, १९१५ को जो रिपोर्ट भारत सरकार को भेजी, उसमें लिखा कि जो षड्यन्त्रकारी लाहौर में पकड़े गए हैं, वे अधिकतर अनजान सिख किसान हैं, जिन्होंने अमेरिका में समानता और जनवाद के सिद्धान्तों को टेढ़े-मेढ़े ढंग से ग्रहण कर लिया है। यह ठीक है कि अमेरिका से लौटे गदर पार्टी के सदस्य अधिक पढ़े-लिखे नहो थे और राजनीतिक दर्शन से बिलकुल कोरे थे। पर इस रिपोर्ट से यह बात अवश्य स्पष्ट होती है कि उनका दृष्टिकोण संकीर्ण नहीं था। उनके हृदय में मनुष्य की भलाई की उच्च भावनाएँ भरी हुई थीं। वे अन्दर-बाहर दोनों ओर से निष्कपट थे। जो कहते थे, उस पर अमल करते थे। अमेरिका के युगान्तर आश्रम में सबका एक ही भण्डारा था। भारत लौटते समय भी बिना किसी जातीय और धार्मिक भेदभाव के खाने-पीने का एक जगह ही प्रबन्ध था।

अमेरिका से गदर पार्टी आन्दोलन में भाग लेने के लिए भारत लौटने वालों में से अधिकतर पंजाब के सिख किसान थे। पर अमेरिका में अन्य भारतीयों की जनसंख्या के अनुसार हिन्दू-मुस्लिम या अन्य जातियों तथा प्रान्तों के लोगों ने भी भाग लिया। मौलवी बरकतुल्ला गदर पार्टी के प्रसिद्ध नेता थे, जो बाद में गदर पार्टी के उपप्रधान चुने गए। श्री पिंगले महाराष्ट्र के उत्साही नवयुवक थे।

गदर पार्टी के नेताओं के जहाजों पर ही पकड़े जाने के पश्चात् भारत में गदर पार्टी आन्दोलन में काफी संख्या में बंगाली शामिल हो गए। श्री रासबिहारी बोस इस क्रान्तिकारी ग्रुप के नेता बने। सेना में काम करते समय बिना किसी धर्म, जाति या प्रान्तीय भेदभाव के सब देसी पलटनों को साथ मिलाने का प्रयत्न किया गया। सिंगापुर में जिस पलटन ने गदर किया, वह सिर्फ मुसलमानों की थी। गदर पार्टी आन्दोलन में भाग लेने का इरादा करके चार अमेरिकन भी आए, जिन्हें या तो भारत में घुसने नहीं दिया गया या फिर पकड़ कर वापस भेज दिया गया। उस समय की राजनीतिक परिस्थिति के अनुसार गदर पार्टी आन्दोलन सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय क्रान्तिकारी आन्दोलन था।

६

गदर पार्टी का कार्यक्रम

भाई परमानन्द ने लिखा है कि गदर पार्टी आन्दोलन चलाने वाले असल में एक राष्ट्रीय भावना के लिए अन्धाधुन्ध काम कर रहे थे, जैसे कि बिना कोई लम्बी-चौड़ी योजना बनाए गदर पार्टी के क्रान्तिकारियों की टोलियाँ भारत के लिए चल पड़ीं। पर इसका मतलब यह भी नहीं है कि गदर पार्टी ने न कोई कार्यक्रम बनाया था और न ही उसकी कोई योजना थी।

गदर पार्टी आन्दोलन की तह में जो बात छिपी थी, वह थी अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों से लाभ उठाना। इसके दो पहलू थे— एक तो भारत में राज्य कर रही विदेशी सरकार पर उस समय अन्तिम चोट करना, जब कि वह किसी बड़ी शक्ति के साथ युद्ध में उलझी हो। दूसरे, अन्तर्राष्ट्रीय अंग्रेज-विरोधी शक्तियों की सहायता प्राप्त करना।

३१ दिसम्बर, १९१३ को सैकरोमैण्टो में हुई सभा में लाला हरदयाल ने कहा कि जर्मनी इंगलैण्ड के साथ युद्ध की तैयारियाँ कर रहा है। भावी क्रान्ति के लिए भारत की ओर प्रस्थान करने का यही सबसे अच्छा अवसर है। इससे यह बात साफ है कि दिसम्बर,

१९१३ में लाला हरदयाल को जर्मनी के इरादों का भली प्रकार पता था। यह उनके विद्रोह करने के प्रयत्न तथा उस देश के साथ कुछ सम्बन्धों को जाहिर करता है।

अमेरिका से चलते समय सानफ्रांसिस्को में २३ मार्च, १९१४ को हुई सभा में लाला हरदयाल ने घोषणा की कि वह जर्मनी जाएँगे और भावी क्रान्ति की वहाँ बैठकर तैयारी करेंगे।

१९१४ में महायुद्ध छिड़ जाने पर मौलवी बरकतुल्ला ने नवाब खान को बताया कि अंग्रेज इस युद्ध में शामिल होने के लिए मजबूर हो जाएगे और मिश्र, आयरलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका तथा अन्य कई देशों में विद्रोह उठ खड़े होंगे। भारत जाकर वहाँ सेनाओं को बिगाड़ने और विद्रोह करने का यह बहुत अच्छा मौका है।

युद्ध से पहले अमेरिका में गदर पार्टी की ओर से हुई सभा के सम्बन्ध में बताते हुए पहले मुकदमे के फैसले में लिखा है—"जिन सभाओं के सम्बन्ध में हमने अभी विचार किया है, इन्हीं में षड्यन्त्र के बीज बोए गए और किसी आने वाली तारीख को गदर करने का विश्वास दिलाया गया। देखने पर पता चलता है कि आन्दोलन के नेता जानते थे कि वह तारीख नजदीक ही है। इससे यह सन्देह पक्का होता है कि युद्ध छिड़ने से कुछ महीने पूर्व ही गदर पार्टी के नेताओं को जर्मनी के युद्ध आरम्भ करने के इरादे का पता चल गया था। भविष्य में एकदम विद्रोह खड़ा कर देने का विश्वास दिलाना समझ में नहीं आता।"

इसी तरह 'गदर' के १५ नवम्बर, १९१३ के अंक में लिखा गया—"हमारी आजादी के आन्दोलन के लिए जर्मनी की बड़ी सहानुभूति है, क्योंकि अंग्रेज, हमारे और उनके, दोनों के दुश्मन हैं।

भविष्य में जर्मनी हमसे सहायता ले सकता है। हमारी सहायता कर भी सकता है।"

'गदर' अखबार के लेखों का निचोड़ यह था कि वह भारत जाने का प्रचार इस उद्देश्य से करता था कि अंग्रेजी सरकार के दुश्मनों के साथ मिलकर विद्रोह खड़ा किया जाए।

दूसरे मुकदमे के फैसले में लिखा है कि जर्मनी के साथ युद्ध छिड़ जाने को भारत में विद्रोह के लिए एक बढ़िया अवसर समझा जाता था; और यह आशा की गई कि जर्मनी इस गदर में भाग लेगा। गदर पार्टी के इरादे का साफ पता चलता है कि वह महायुद्ध में जर्मनी और अंग्रेजों के फँस जाने का लाभ उठाना चाहती थी।

भाई सन्तोखसिंह ने, जो लाला हरदयाल के अमेरिका छोड़ जाने के बाद गदर पार्टी के महामंत्री तथा गुप्त कमीशन के सदस्य नियुक्त हुए थे—सानफ्रांसिस्को के जर्मन कौंसिल के साथ मिलकर यह योजना बनाई थी कि युद्ध आरम्भ होने पर जर्मनी की सहायता से तुर्की सेनाएँ नहर स्वेज पर अधिकार कर लें, और उसमें जहाज डुबोकर, उसे बन्द कर दें। उसी समय गदर पार्टी भारत में विद्रोह खड़ा करके अंग्रेजों पर चोट करे। 'जहाने-इस्लाम' कुस्तुनतुनिया से प्रकाशित होता था। उसके २० नवम्बर, १९१४ के अंक में प्रसिद्ध तुर्की नेता अनवर पाशा के भाषण की रिपोर्ट इस तरह प्रकाशित हुई—

"अब समय है कि भारत में विद्रोह की घोषणा कर दी जाए। अंग्रेजों के मैगजीनों पर आक्रमण करके शस्त्र लूटे जाएँ और उनसे उन्हें मारा जाए। भारतीयों की संख्या तेंतीस करोड़ है, और अंग्रेजों की सिर्फ दो लाख। उन्हें कत्ल कर देना चाहिए। उनके

पास सेना नहीं। जल्दी ही तुर्क स्वेज नहर को बन्द कर देंगे।"

इस सैनिक योजना का यह भी एक सुझाव था कि जहाँ-जहाँ भी भारतीय सेनाएँ हों, विद्रोह किया जाय, ताकिअंग्रेजों की शक्ति यत्र-तत्र बिखेर दी जाय। वे उसे भारत के विद्रोह को कुचलने के लिए बटोर न सकें। इसी उद्देश्य का सामने रखकर सिंगापुर में गदर करवाया गया; और स्याम, बर्मा में विद्रोह कराने का प्रयत्न किया गया। मौलवी बरकतुल्ला को काबुल के अमीर को अंग्रेजों के विरुद्ध खड़ा करने का काम सौंपा गया। मौलवी बरकतुल्ला को उम्मीद थी कि युद्ध छिड़ जाने पर मिस्र, आयरलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका तथा दूसरे देशों में विद्रोह होंगे। श्री सोहनसिंह भकना, प्रधान गदर पार्टी को भी मिश्र में विद्रोह होने की पूरी आशा थी। उन्होंने बताया कि कई देशभक्त ईरान और काबुल में काम कर रहे थे।

यह तो स्पष्ट ही है कि गदर पार्टी के कार्यक्रम का सबसे बड़ा अंग भारत में क्रान्ति के लिए तैयारी करना था। सबसे महत्त्वपूर्ण काम था, भारत की सेनाओं को गदर के लिए खड़ा करना। पहले महायुद्ध के छिड़ने से पूर्व १३ जनवरी, १६१४ के अंक में 'गदर' अखबार ने क्रान्तिकारियों को काबुल जाकर बन्दूकें बनाना सीखने तथा वहाँ से पंजाब लाने की प्रेरणा दी। १६०७ के आन्दोलन के प्रसिद्ध क्रांतिकारी सरदार अजीतसिंह ने गदर पार्टी के सदस्यों को सानफ्रांसिस्को में इसी मतलब की एक चिट्ठी लिखी।

एक बात को भली प्रकार से समझ लेना आवश्यक है कि गदर पार्टी किसी दूसरी विदेशी शक्ति के हाथों में खेलना नहीं चाहती थी। वह सिर्फ अपने देश को आजाद कराने के लिए उस किस्म का

प्रयत्न करना चाहती थी, जैसे बैंजामिन फ्रैंकलिन या इटली तथा अन्य देशों के देशभक्तों ने किए। जब लाला हरदयाल ने १९१४ के महायुद्ध के समय, अमेरिका से जर्मनी जाकर दूसरे भारतीय देशभक्तों के साथ मिलकर बर्लिन में 'इण्डियन रिवोल्यूश्नरी सोसाइटी' कायम की, तो इसका उद्देश्य भी स्पष्ट रूप में भारत में पंचायती राज्य स्थापित करना ही रखा गया।

गदर पार्टी या उक्त सोसाइटी ने कभी यह नहीं चाहा कि जर्मन या तुर्क सेनाओं को भारत में आने का निमंत्रण दिया जाए। इन्होंने अधिक से अधिक जर्मनी से हथियार या पैसे की सहायता के लिए, तथा जर्मनी में कैद भारतीयों को आजादी के आन्दोलन में काम में लाने की योजना बनाई। एक अर्द्ध-सरकारी रिपोर्ट में इस सचाई को स्वीकार किया गया है कि पहले महायुद्ध के समय यद्यपि गदर पार्टी के जर्मनी के साथ सम्बन्ध थे, पर वे इस कारण नहीं थे कि गदर पार्टी जर्मनी को चाहती थी, बल्कि इसलिए थे कि उन्हीं की भाँति जर्मन भी अंग्रेजों के दुश्मन थे। जर्मनी की पराजय के बाद गदर पार्टी ने अंग्रेजों के विरुद्ध अपनी स्वतन्त्र सरगर्मियाँ जारी रखीं और अपने ध्येय के लिए रूस के साथ मेल रखा। पहले षड्यन्त्र केस की एक गवाही से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गदर पार्टी के नेता इस बात के लिए सचेत थे कि कहीं जर्मन अंग्रेजों के स्थान पर भारत में पैर न जमाने लगें।

युगान्तर आश्रम, सानफ्रांसिस्को में पंजाब का एक बड़ा नक्शा लगा हुआ था, जिस पर काश्मीर के भाग में बड़े सुन्दर अक्षरों में लाला हरदयाल ने अपने हाथों से अंग्रेजी में लिखा हुआ था—"Republic in Kashmir in 1920". (१९२० में काश्मीर में

पंचायती राज्य) लाला हरदयाल से जब एक क्रान्तिकारी ने इसका अर्थ पूछा तो उन्होंने बताया कि पहले चीन स्वतन्त्र होगा और फिर उसकी सहायता से हम पहले काश्मीर में सन् १९२० के लगभग पंचायती राज्य कायम करेंगे। एक योजना यह भी थी कि चीन के द्वारा पहले भारत के उत्तरी भागों की तरफ से देश को स्वतन्त्र कराने का काम आरम्भ किया जाए। बाद की घटनाओं को देखते हुए यह एक हवाई योजना मालूम होती है। पर इससे यह बात अवश्य स्पष्ट है कि गदर पार्टी के नेता जर्मनी या अन्य किसी शक्ति के साथ बँधे हुए नहीं थे। वे तो सिर्फ अपना मन्तव्य सिद्ध करना चाहते थे।

गदर पार्टी की भारत में क्रान्तिकारी तैयारियों का असली उद्देश्य भारतीय सैनिकों को विद्रोह के लिए तैयार करना था। किसी क्रान्ति को सफल बनाने के लिए सैनिक सेवाओं को साथ मिलाना आवश्यक होता है। पर उस समय देश में लोक-क्रान्ति तो एक ओर; कोई शान्तिमय राजनीतिक आन्दोलन भी नहीं था। बंगाल में आतंकवादियों की कुछ टोलियाँ जरूर काम कर रही थीं। बंगाल के कई प्रसिद्ध आतंकवादियों ने गदर पार्टी की इस योजना को बहुत पसन्द किया कि सेनाओं में विद्रोह कराया जाए। उनमें से कई इसी से प्रेरित होकर गदर पार्टी में शामिल हो गए। इसके अतिरिक्त गदर पार्टी का यह अनुमान ठीक साबित हुआ कि युद्ध की हालत में सिपाहियों को अपने देश की आजादी के लिए प्रेरणा देना कोई मुश्किल नहीं था, जबकि उन्हें विदेशी शासकों की नौकरी में मौत की परछाईयाँ नजर आती थीं। इसलिए देश के लिए क्यों न प्राण न्योछावर किए जाएँ। गदर क्रान्तिकारियों को भारतीय

सेनाओं को विद्रोह के लिए खड़ा करने में जो सफलता मिली वह इस बात का प्रमाण है। इसलिए भारतीय सेनाओं को बगावत के लिए तैयार करना, और इसे भारतीय क्रान्ति के कार्यक्रम का मुख्य अंग बनाना, गदर पार्टी की योजना का न सिर्फ एक सही कदम था, बल्कि उस समय की देश की परिस्थितियों की दृष्टि से भी इसके अतिरिक्त दूसरा कोई मार्ग नहीं था।

७

क्रान्ति का अग्रदूत : गदर अखबार

गदर पार्टी की स्थापना के पश्चात् अगला कदम था, 'गदर' अखबार का प्रकाशन। १ नवम्बर, १९१३ को 'गदर' का पहला अंक प्रकाशित हुआ। 'गदर' का कार्यालय सॉनफ्रांसिस्को में रखा गया। यह शहर इसलिए चुना गया, क्योंकि लाला हरदयाल वहीं रहते थे। कैलिफोर्निया में भारतीयों की संख्या काफी थी और यह अमेरिका में अंग्रेज विरोधी आयरिश तथा दूसरे अन्तर्राष्ट्रीय प्रगतिशील आन्दोलनों का केन्द्र था। अखबार की सारी जिम्मेदारी लाला हरदयाल को सौंपी गई। तीन हजार डॉलर अखबार की प्रबन्धक कमेटी के नाम जमा करवाये गए। अखबार मुफ्त बाँटने का फैसला हुआ।

ऑरगन स्टेट का दौरा खत्म करके लाला हरदयाल वापस सॉनफ्रांसिस्को लौट आए। पार्टी के अन्य सदस्य मिलों में काम करने के लिए बिखर गए। पाँच महीने बीत गए, पर 'गदर' प्रकाशित न हुआ। लाला हरदयाल ने कह दिया कि मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं है, इसलिए कमेटी अन्य किसी व्यक्ति को अखबार का भार सौंप दे। पर कोई भी ऐसा व्यक्ति दिखाई नहीं देता था जो लाला हरदयाल

का स्थान लेने योग्य होता। प्रबन्धक कमेटी ने लाला हरदयाल पर ही जोर डाला कि वह ही इस जिम्मेदारी को निबाहें। श्री करतारसिंह सराबा ने अखबार निकालने में लाला हरदयाल का हाथ बँटाया। 'गदर' के जन्मदाता लाला हरदयाल थे।

करतारसिंह सराबा एक अठारह साल का किशोर था। अमेरिका जाने से पूर्व वह बंगाल के किसी स्कूल में पढ़ता था। वहीं उसमें राजनीतिक चेतना का अंकुर भी फूटा। वह अमेरिका में ऊँची शिक्षा हासिल करने आया था, बर्कले यूनिवर्सिटी में वह रसायन विद्या पढ़ने भी लगा था। पर जैसे गदर पार्टी की स्थापना और अखबार जारी करने के सम्बन्ध में सुना, उसने पढ़ाई का इरादा छोड़ दिया। उसने घर से आए दो सौ डॉलर लाला हरदयाल के हाथों में थमा दिए ताकि वह 'गदर' शीघ्र से शीघ्र प्रकाश में ला सकें। पहले षड़यन्त्र केस में दर्ज है कि 'गदर' का प्रथम अंक निकालने में करतारसिंह सराबा का हाथ था।

'गदर' के प्रारम्भ के अंक उर्दू में हाथ से चलने वाले साईकलोस्टाईल प्रेस पर छापे गए। १९१४ से अखबार पंजाबी में भी छपने लगा। जब अखबार की माँग बहुत बढ़ गई तो ५ नं० वुड स्ट्रीट सॉनफ्रांसिस्को में अपना प्रेस चालू किया गया। पहले अंक के सम्पादक लाला हरदयाल थे, और सहयोगी करतारसिंह सराबा तथा श्री गुप्ता थे। श्री रामचन्द्र ने अखबार में दिसम्बर, ९१३ से काम करना शुरु किया, बाद में पण्डित जगतराम, श्री पृथ्वीसिंह, महबूब अली तथा श्री इनायतखान भी 'गदर' पत्र में शामिल हो गए।

'गदर' के जारी होने से लेकर मार्च, १९१४ तक, जब कि

अमेरिकी अधिकारियों ने लाला हरदयाल को अमेरिका छोड़ने पर बाध्य कर दिया, अखबार का सारा प्रबन्ध उन्हीं के हाथों में रहा।

लाला हरदयाल दिल्ली के रहने वाले थे। वहीं उन्होंने सेंट स्टीफिन्स कालिज से बी० ए० पास किया। एम० ए० की पढ़ाई के लिए गवर्नमैण्ट कालिज, लाहौर में दाखिल हो गए। उन दिनों लाला हरदयाल की स्मरण-शक्ति के सम्बन्ध में कई अद्भुत बातें प्रचलित थीं। कहते हैं कि एक बार उन्होंने एक कविता की पुस्तक सिर्फ एक बार पढ़कर कालिज के विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के सामने जबानी सुना दी थी। एम० ए० की परीक्षा में वह प्रथम रहे। उनकी योग्यता को देखते हुए सरकारी छात्र-वृत्ति पर उन्हें ऊँची शिक्षा के लिए ऑक्सफोर्ड (इंगलैण्ड) भेजा गया। विलायत जाकर उनके साम्राज्य-विरोधी विचारों में परिपक्वता आई। वह सरकारी छात्र-वृत्ति तथा पढ़ाई छोड़कर देश की सेवा में संलग्न हो गए।

लाला हरदयाल के बाद 'गदर' के लेखों आदि में सबसे अधिक भाग श्री रामचन्द्र 'पेशावरी' का था। श्री रामचन्द्र ने गदर पार्टी आन्दोलन से सम्बन्धित सभाओं में भाषण भी दिए। एक समय ऐसा भी आया कि जब वह गदर पार्टी के सर्वेसर्वा बन गए। श्री रामचन्द्र ने पंजाब के १९०७ वाले आन्दोलन में सरदार अजीतसिंह के साथ मिल कर भाग लिया था। वह गुजरांवाला से प्रकाशित 'इण्डिया' और दिल्ली के 'आकाश' अखबार के सम्पादक रह चुके थे। उन्हें पत्रकारिता का अच्छा अनुभव था।

लाला हरदयाल के अमेरिका से चले जाने के बाद अखबार का प्रबन्ध एक बोर्ड के सुपुर्द किया गया। इस बोर्ड के सदस्य श्री

रामचन्द्र 'पेशावरी', मोहनलाल, पण्डित जगतराम, करतारसिंह सराबा और श्री हरनामसिंह 'टुण्डोलाट' थे। सम्पादकीय तथा लेख आदि लिखने का अधिकतर काम श्री रामचन्द्र करते थे। बाकी सारे उनके सहकारी थे। श्री बरकतुल्ला और श्री भगवानसिंह के अमेरिका आ जाने पर अगस्त, १९४४ तक अखबार का प्रबन्ध श्री बरकतुल्ला, श्री भगवानसिंह, अमरसिंह आदि के हाथों में रहा।

'गदर' अखबार प्रति सप्ताह प्रकाशित होता था। इसके पाठकों की संख्या हजारों तक पहुँच गई। अखबार चार भाषाओं में छपने लगा। अमेरिका से बाहर 'गदर' कनाडा, बर्मा, अर्जेण्टाइना, पानामा, भारत और अन्य बहुत से देशों में, जहाँ भारतीयों की काफी संख्या थी—मुफ्त भेजा जाता था। अंग्रेजी सरकार ने अपनी सल्तनत में 'गदर' के दाखिले को रोकने के लिए पूरी कोशिश की, पर सिवा भारत के वह कहीं पर भी सफल न हो सकी। 'गदर' ने प्रवासी भारतीयों में क्रान्ति की चिनगारी सुलगाने में बड़ा काम किया। वह खुले शब्दों में अंग्रेजों के विरुद्ध हथियार उठाने का नारा लगाता था। पहले केस के फैसले में 'गदर' अखबार के सम्बन्ध में लिखा है कि सल्तनत के दुश्मनों के साथ मिलकर विद्रोह खड़ा करने के इरादे से भारत के लिए कूच करने, सारे यूरोपियन तथा स्वामीभक्त भारतीयों को मारकर खत्म करने और मौजूदा सरकार का तख्ता उलटकर पंचायती राज्य कायम करने का यह प्रचार करता था। यह हिंसा का पक्षपाती तथा अंग्रेज-विरोधी अखबार था। इसकी हरेक पंक्ति से विद्रोह की बू आती थी। इसका मूल मंत्र था—अंग्रेजों को भारत से खदेड़ देना।

८

लाला हरदयाल के बाद

'गदर' के प्रकाशन से क्रान्तिकारी आन्दोलन को नया बल मिला। वह अमेरिका, कनाडा और अन्य पूर्वी देशों में फैल गया। अंग्रेज साम्राज्यवादी इस पर आँख रखने लगे। न्यूयार्क के अंग्रेज कौंसिल को लाला हरदयाल की हरेक गतिविधि का पूरा-पूरा ज्ञान रहता था। उन्हें अमेरिका छोड़ने के लिए मजबूर करने में अंग्रेजों का प्रमुख हाथ था।

गदर पार्टी ने अमेरिका में अन्य देशों के क्रान्तिकारियों, विशेष कर आयरिशों और रूसियों के साथ मेल किया हुआ था। ये देश भारत को आजादी के प्रति सच्ची सहानुभूति रखते थे। रूसी और आयरिश गदर पार्टी की ओर से आयोजित सभाओं में भाषण भी दिया करते थे। इसी तरह लाला हरदयाल भी उनकी सहानुभूति में भाषण करते थे। एक बार उन्होंने रूस के जार के अत्याचारी शासन के विरुद्ध भाषण दिया था। अमेरिकी पहले ही किसी अवसर की तलाश में थे। उन्होंने उसी समय लाला हरदयाल के वारण्ट जारी कर दिए।

गदर पार्टी को अंग्रेज साम्राज्यवादियों तथा उनके एजेण्टों पर

हर समय सन्देह बना रहता था, इसीलिए पार्टी ने लाला हरदयाल की रक्षा के लिए श्री हरनामसिंह 'टुण्डीलाट' और करतारसिंह सराबा को नियुक्त कर रखा था। जब भी लाला हरदयाल युगान्तर आश्रम से कहीं बाहर जाते तो ये देशभक्त भरे हुए पिस्तौल लिए लाला हरदयाल के साथ रहते थे।

१६ मार्च, १६१४ को लाला हरदयाल को सॉनफ्रांसिस्को में अमेरिकनों की एक सभा में भाषण देना था। जैसे ही लाला हरदयाल अपने साथियों-सहित ट्राम कार से उतरकर सभा-स्थल को ओर जाने लगे, उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। जब पुलिस लाला हरदयाल को मोटर में बैठाने लगी, तो उनकी रक्षा करने वाले देश-भक्तों ने पिस्तौल निकाल लिए। श्री सोहनसिंह भकना भी वहाँ मौजूद थे। उन्होंने संकेत से कोई भी हिंसक कदम उठाने से उन्हें रोक दिया। पुलिस भी समझ गई। वह लाला हरदयाल से वारण्ट पर दस्तख्त करवाकर लौट गई।

लाला हरदयाल ने सभा में उक्त घटना का जिक्र किया। सभा में उपस्थित सारे अमेरिकन सरकार की इस कार्यवाही के प्रति अपना रोष प्रकट करने के पक्ष में थे। उन्हें भारतीयों के ध्येय के साथ भी सहानुभूति थी। उन्हें सबसे अधिक यह बात अखरी कि अमेरिकी सरकार अंग्रेजों के इशारों पर क्यों नाच रही थी। कुछ मजदूर संस्थाओं तथा पत्रों ने भी अमेरिकी सरकार की ऐसी कार्यवाहियों के लिए अपना विरोध प्रदर्शित किया। अमेरिकी जनता की यह सहानुभूति गदर पार्टी के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध हुई।

गदर पार्टी ने लाला हरदयाल की जमानत का प्रबन्ध कर लिया था। अमेरिकन जनता के एक भाग में उनके प्रति सहानुभूति को

देखते हुए अमेरिकी सरकार की स्थिति कुछ खराब हो गई थी। लालाजी के कई निकटवर्ती मित्रों ने उन्हें अमेरिका छोड़ जाने की सलाह दी, क्योंकि वे अमेरिका की भीतरी नीति से खूब परिचित थे। यह भी भय था कि कहीं अमेरिका की सरकार लाला हरदयाल को अंग्रेजों के सुपुर्द न कर दे। गदर पार्टी ने उनके निजी खर्च आदि का प्रबन्ध कर दिया। एक दिन अमेरिका छोड़कर वह स्विटजरलैण्ड चले गए। तत्पश्चात् सिवाय विशेष अवसरों पर चिट्ठी-पत्री के उनका गदर पार्टी से सीधा सम्बन्ध प्रायः टूट गया।

गदर पार्टी की स्थापना २ जून, १९१३ को हुई थी। लाला हरदयाल ने गदर पार्टी की सरगर्मियों में लगभग पाँच महीने भाग लिया। उन्होंने इतने थोड़े समय में अपनी लेखनी, भाषणों और सूझ-बूझ से गदर पार्टी का गौरव बहुत बढ़ा दिया। सादगी के वह आदर्श थे और कठोर परिश्रम करने से कभी पीछे नहीं हटते थे। उन्हें अपनी निजी जरूरतों के लिए थोड़ा-सा भत्ता मिलता था, पर वह उसमें से भी बचाकर गदर पार्टी को वापस कर देते थे।

अंग्रेजों का यह अनुमान मिथ्या निकला कि लाला हरदयाल के अमेरिका से चले जाने से गदर पार्टी कमजोर हो जाएगी। गदर पार्टी का जो अंकुर लाला हरदयाल ने रोपा था, वह बढ़ने-फूलने लगा, और गदर पार्टी में किसी तरह की कमजोरी नहीं आई, बल्कि वह प्रगति के पथ पर आगे ही बढ़ती चली गई। गदर पार्टी आन्दोलन अमेरिका से बाहर कनाडा, मैक्सिको, पानामा और अर्जेण्टाइना आदि देशों में भी फैल गया।

गदर पार्टी की प्रगति कैसे सम्भव हुई ? यह आन्दोलन दुश्मन पर सीधा हमला करने का पक्षपाती एक हथियारबन्द आन्दोलन था।

लाला हरदयाल के अमेरिका छोड़ जाने के पश्चात् श्री सोहनसिंह भकना ने गदर पार्टी का सारा काम संभाल लिया। वह एक योग्य नेता थे। अमेरिका आने से पहले भारत में उन्होंने कूका आन्दोलन में बारह वर्ष तक काम किया था। इस स्वतंत्रता आन्दोलन का सूत्रपात नामधारी सिखों के गुरू बाबा रामसिंहजी द्वारा पंजाब में हुआ था। वहीं से श्री भकना के दिल में भक्ति की भावना जगी। उन्होंने अपना सारा निजी कारोबार छोड़कर युगान्तर आश्रम में डेरा लगा दिया। कैलीफोर्निया का दौरा करके छोटी-छोटी जगहों पर गदर पार्टी की शाखाएँ कायम कर दीं। दूसरे मुकदमे के फैसले में श्री सोहनसिंह भकना को इस आन्दोलन के सबसे खतरनाक व्यक्तियों में से बताया गया है।

श्री केसरसिंह 'ठठगढ़' गदर पार्टी के उप-प्रधान थे। नवाब खान के अनुसार उनका अमेरिका के सिखों से बहुत मेल-जोल था। गदर पार्टी के दूसरे उप-प्रधान श्री ज्वालासिंह 'ठट्टियां' अमेरिका और अमेरिका से बाहर इसलिए प्रसिद्ध थे कि उन्होंने भारी खर्च करके अमेरिका में पढ़ने के लिए भारतीय विद्यार्थियों की छात्र-वृत्तियों का प्रबन्ध किया था।

लाला हरदयाल के बाद गदर पार्टी के महामन्त्री भाई संतोखसिंह चुने गये। भाई संतोखसिंह खालसा कालिज, अमृतसर की अपनी पढ़ाई छोड़कर अमेरिका उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए गये थे। कैलीफोर्निया में श्री ज्वालासिंह, संत विसाखासिंह आदि देशभक्तों के साथ रहकर वह भी देशभक्ति के रंग में रंग गए।

भाई संतोखसिंह में क्रान्तिकारी लगन, ईमानदारी, सूझ-बूझ तथा गम्भीरता आदि का बहुत अच्छा सम्मिश्रण था। लाला हरदयाल

के अमेरिका छोड़ जाने के बाद गदर पार्टी को चलाने का सबसे अधिक बोझ भाई संतोखसिंह के कन्धों पर पड़ा।

पंडित काशीराम गदर पार्टी के ख़जांची थे। गदर पार्टी बनने से पहले वह बड़े आराम का जीवन बिताते थे। लाला हरदयाल को ऑरगन के दौरे के लिए बुलाने और गदर पार्टी की स्थापना करने में उन्होंने सक्रिय भाग लिया। गदर पार्टी कायम होने के पश्चात् उनके जीवन में ऐसा परिवर्तन आया कि वह आराम तथा सुख को त्यागकर गदर पार्टी के काम में जुट गये।

पहला महायुद्ध आरम्भ होने पर श्री भगवानसिंह जो कनाडा से निर्वासित होने के बाद जापान चले गए थे, अमेरिका आ गए। उन्हें गदर पार्टी का प्रधान चुना गया, क्योंकि पहले प्रधान श्री सोहनसिंह भकना भारत में क्रान्तिकारी आन्दोलन की तैयारी के लिए रवाना हो चुके थे।

श्री भगवानसिंह के साथ ही जापान से मौलवी बरकतुल्ला भी अमेरिका आ गए। मौलवी बरकतुल्ला भोपाल स्टेट के रहने वाले थे। सन् १९०९ में वह टोकियो यूनिवर्सिटी (जापान) में प्रोफेसर नियुक्त हुए, और वहाँ से एक पत्र भी निकालते रहे। सन् १९११ में उन्होंने तुर्की, मिश्र आदि देशों का दौरा किया और पैरिस में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी किशनजी शर्मा के साथ पत्र-व्यवहार भी करते रहे। इस दौरे के बाद उन्होंने अपने पत्र में अंग्रेजों के विरुद्ध धुआँधार लेख लिखने शुरू किए। जापानी सरकार ने पत्र बन्द कर दिया। १९१४ के आरम्भ में उन्हें नौकरी से भी निकाल दिया गया। फिर वह अमेरिका चले गए। आते ही गदर पार्टी में शामिल हो गए। पार्टी ने उन्हें अपना उप-प्रधान चुना। पार्टी के

कार्यक्रमों को अमली रूप देने और मुसलमानों को अधिक से अधिक संख्या में गदर पार्टी आन्दोलन की ओर उन्मुख करने में उन्होंने बड़ा काम किया। बाद में भारत के पड़ोसी मुसलमान देशों में काम करने का भार उन्हें सौंपा गया।

गदर पार्टी के इन कार्यकर्त्ताओं के अलावा भाग-दौड़ तथा कठिन-से-कठिन काम करने की दृष्टि से गदर पार्टी आन्दोलन में सबसे अधिक भाग करतारसिंह सराबा ने लिया। पहले षड्यन्त्र केस के फैसले के अनुसार अमेरिका में, वापसी पर मार्ग में या भारत में कोई भी षड्यन्त्र का ऐसा हिस्सा नहीं जिसमें इस दोषी का हाथ न रहा हो। इसके विरुद्ध सबसे अधिक सबूत हैं।

श्री हरनामसिंह 'काहरी साहरी' का व्यक्तित्व भाई संतोखसिंह से मिलता है। वह अच्छे पढ़े-लिखे तथा सूझ-बूझ वाले सज्जन थे। कनाडा के आन्दोलन में भाग लेने के जुर्म में उन्हें वहाँ से सन् १९१०-११ को निर्वासित किया गया। गदर पार्टी की स्थापना से पहले वह अमेरिका में जी०डी० कुमार और तारकनाथदास के साथ मिलकर एक पत्र निकालते रहे, जिसके जुर्म में उन्हें अमेरिका से भी सितम्बर, १९१४ को निर्वासित कर दिया गया। वह पीछे रहकर काम करने वाले खामोश कार्यकर्त्ता थे। प्रसिद्धि से दूर भागने की वजह से ही वह अधिकतर जनता की नजरों में नहीं आए।

लाला हरदयाल के अमेरिका से चले जाने के बाद जो एक स्थान खाली हो गया था, वह स्थान उक्त कर्मठ क्रान्तिकारियों ने पूरा कर दिया। यही कारण था कि लाला जी की अनुपस्थिति में गदर पार्टी आन्दोलन में किसी किस्म की ढील या कमजोरी नहीं आई। अमेरिका में सर्वत्र फैले हुए भारतीय एक राष्ट्रीय उमंग और उत्साह के साथ इस आन्दोलन में जान हथेली पर रखकर कूद पड़े।

९

संगठन तथा अन्य सरगर्मियाँ

गदर पार्टी सम्बन्धी चले मुकदमों में इस बात का जिक्र आता है कि गदर पार्टी की शाखाएँ अमेरिका तथा बाहर के कई देशों में थीं। गदर पार्टी का विधान जनवादी ढँग का था और इसका एक नियम यह था कि कोई एक व्यक्ति केवल-मात्र नेता नहीं समझा जाएगा। अमेरिका में मिलों तथा गैंग की शक्ल में, जहाँ भी गदर पार्टी के सदस्यों की संख्या होती, उनमें से एक चुनी हुई कमेटी बन जाती, जिसका गदर पार्टी से सीधा सम्बन्ध होता। स्थानीय कमेटियों के प्रतिनिधि गदर पार्टी की केन्द्रीय प्रबन्धक कमेटी चुनते, जिसके हाथ में पार्टी का सारा प्रबन्ध होता। स्थानीय कमेटियों तथा केन्द्रीय कार्यकारिणी का चुनाव हर वर्ष होता।

कार्यकारिणी अपने-अपने पदाधिकारियों और अलग-अलग काम चलाने वाली उप-समितियों का चुनाव करती। कार्यकारिणी के दो भाग थे—एक प्रकट तथा दूसरा गुप्त। गुप्त कमीशन के तीन सदस्य होते थे। सारे गुप्त काम यह कमीशन ही करता। जितना रुपया कमीशन कार्यकारिणी से माँगता, उसे देना पड़ता। कार्यकारिणी को यह अधिकार भी न होता कि वह गुप्त कमीशन

से पैसे का हिसाब माँग सके। लेकिन अगर कार्यकारिणी को गुप्त कमीशन के किसी एक सदस्य या सारे गुप्त कमीशन की ईमानदारी अथवा योग्यता पर सन्देह हो जाए, तो वह सदस्य या कमीशन को बदलने का अधिकार रखती थी। कार्यकारिणी या गुप्त कमीशन का कोई सदस्य अगर बेईमान निकले या पार्टी का कोई रहस्य दुश्मनों के आगे खोले, तो उसके लिए मौत की सजा थी। पार्टी के खर्च की रिपोर्ट कार्यकारिणी हर महीने प्रकाशित करती। कार्यालय, प्रेस अथवा अखबार या पार्टी का कोई दूसरा काम करने वाले कार्यकर्त्ताओं को वेतन नहीं मिलता था सिर्फ आवश्यकता के अनुसार रोटी-कपड़ा हरेक कार्यकर्त्ता को पार्टी-फंड से मिल जाता था।

अमेरिका में गदर पार्टी का संगठन करने के लिए सभाएँ की गईं। निजी मेल-मुलाकात से भी काम लिया गया। ये सभाएँ दिसम्बर, १९१३ से अगस्त, १९१४ तक लगातार होती रहीं। इन सभाओं के सम्बन्ध में पहले षड्यन्त्र केस में पूरा ब्यौरा दिया गया है।

........३१ दिसम्बर, १९१३ को सैकरेमैण्टो में सभा की गई। जोश दिलाने वाली कविताएँ तथा भाषण हुए। लैण्टर्न स्लाइडस द्वारा प्रसिद्ध क्रान्तिकारियों के चित्र दिखाए गए। अन्त में लाला हरदयाल ने उन्हें बताया कि जर्मनी इंगलैण्ड के साथ युद्ध की तैयारी में लगा हुआ है। भावी क्रान्ति के लिए भारत जाने का यही एक अच्छा अवसर है।

...........१ फरवरी, १९१४ को बर्कले में एक सभा हुई, जिसमें लाला हरदयाल और ओवन नाम के एक अमेरिकन

आतंकवादी के भाषण हुए।

............१५ फरवरी, १९१४ को स्टाकरन में एक सभा हुई, जिसमें उपस्थिति काफी थी। एक झण्डा लहराया गया और अंग्रेजों का नामोंनिशान मिटा देने की सौगन्ध खाई गई। उस दिन सबने अपनी कमाई गदर के कामों में देने का प्रण किया। ......इससे अगले दिन एक और सभा हुई, वहाँ पर भी पहले दिन की भाँति ही सौगन्ध उठाई गई। सारे अमेरिका में संघर्ष की घोषणा करने के लिए सभाएँ करने का फैसला किया गया।

...........सॉनफ्रांसिस्को में २५ मार्च, १९१४ को हुई एक सभा में लाला हरदयाल की होने वाली गिरफ्तारी के सम्बन्ध में अमेरिकनों और भारतीयों ने हिंसा का प्रयोग करने के लिए जोश दिलाने वाले भाषण दिए। साथ ही लाला हरदयाल ने यह भी घोषणा की कि वह जर्मनी जाएगा और वहाँ होने वाले गदर की तैयारी करेगा ......मार्च, १९१४ में अस्टोरिया में एक छोटी-सी सोसाइटी बनाई गई जिसका प्रधान केसरसिंह था। इस सोसाइटी का मन्तव्य सरकार का तख्ता उलट देना था।

...........७ जून, १९१४ को अस्टोरिया में एक और बड़ी सभा हुई। श्री भगवानसिंह, बरकतुल्ला और श्री सोहनसिंह भकना ने हिंसा के द्वारा क्रान्ति का प्रचार किया। उन्होंने सभा में उपस्थित भारतीयों को सलाह दी कि वे भारत जाने की तैयारी कर लें। गदर आरम्भ करने का अब समय आ गया है।

......२३ जून, १९१४ को पोर्टलैण्ड की सभा बाजे और जलूस के साथ आरम्भ की गई। सबने भावी गदर में शामिल होने के लिए कसमें उठाईं। मुहम्मद दीन सभापति थे।

…………३ जुलाई, १९१४ को स्टाकटन में एक बहुत बड़ी सभा की गई। ५०० से अधिक भारतीय उपस्थित थे। कनाडा और मैक्सिको के भारतीय इसमें शामिल हुए।

सभाओं के अतिरिक्त कैलीफोर्निया के अलग-अलग भागों में गदर पार्टी की शाखाएँ कायम करने के लिए फरवरी, १९१४ में स्टाकटन में एक कमेटी बनाई गई, और मार्च, १९१४ में इसके प्रधान ने दौरा शुरू कर दिया।

अमेरिका से बाहर 'गदर' अखबार के अलावा गदर पार्टी के संगठन का काम अधिकतर चिट्ठी-पत्रों द्वारा किया गया। पर अमेरिका और कनाडा के अलावा कई दूसरे द्वीपों में गदर पार्टी की शाखाएँ भी थीं। गदर पार्टी के दो बड़े केन्द्र शंघाई (चीन) और मनीला (फिलिपाइन) थे। बाद में स्याम (थाईलैण्ड) भी गदर पार्टी का एक बड़ा केन्द बन गया। शंघाई तथा मनीला में गदर पार्टी की स्थिति अमेरिका और कनाडा से भिन्न थी। क्योंकि यहाँ भारतीयों की संख्या बहुत थोड़ी थी, इसलिए इन स्थानों पर कुछ व्यक्तियों ने ही आन्दोलन में प्रमुख भाग लिया। शंघाई में गदर पार्टी के नेता श्री निधानसिंह चुग्घा थे। उनके सम्बन्ध में पहले मुकदमे के जजों ने लिखा है कि निधानसिंह के विरुद्ध जो सबूत मिले हैं, वे करतारसिंह सराबा से दूसरे नम्बर पर हैं। यह अपराधी निहायत खतरनाक है। गदर पार्टी के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी डा० मथुरासिंह और इनके साथी बुजरसिंह भकना भी पहले शंघाई में थे, पर इन दोनों ने अधिक कार्य भारत में आकर ही किया।

मनीला में गदर पार्टी के बीज गुरुदत्त कुमार ने बोए। वह

पहले अमेरिका में श्री तारकनाथदास और हरनामसिंह काहरी-साहरी के साथ मिलकर एक अखबार निकाला करते थे। लेकिन स्वास्थ्य खराब हो जाने के कारण मनीला आ गए थे। पर जब यहाँ भी कुछ हालत नहीं सुधरी, तो वह मनीला से भी चले गए। उनके जाने से पूर्व मनीला में क्रान्तिकारियों का एक संगठन कायम हो गया था, जिसके प्रधान हाफिज़ अब्दुल्ला थे। भारत में आने वाली गदरी क्रान्तिकारियों की टोलियों में मनीला के काफी भारतीय सम्मिलित हो गए। उनमें से ही रहमतअली खान और उनके अन्य साथी फाँसी पर झूल गए। गदर पार्टी के आन्दोलन में भाग लेने के जुर्म में हाफिज़ अब्दुल्ला को भी फाँसी की सजा हुई।

गदर पार्टी की इन संगठनात्मक गतिविधियों के अलावा उसके जर्मनी के साथ सम्बन्ध का उल्लेख करना भी आवश्यक है। गदर पार्टी की स्थापना के समय जर्मनी को अंग्रेजों का सबसे बड़ा दुश्मन समझा जाता था। इसलिए यह आवश्यक था कि गदर पार्टी जर्मनी के साथ अपने राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने की बात सोचती। पहला महायुद्ध छिड़ने से पहले इतना ही पता चला है कि लाला हरदयाल ने अमेरिका छोड़ने से पहले सॉनफ्रांसिस्को की जर्मन कौंसल के साथ अपने सम्बन्ध स्थापित कर लिए थे। लाला हरदयाल के पश्चात् उनके स्थान पर चुने गए पार्टी के महामंत्री भाई संतोखसिंह ने जर्मन कौंसल के साथ ये सम्बन्ध बनाए रखे।

प्रथम महायुद्ध आरम्भ होते ही इटली में जर्मनी का एक जहाज रोका गया, जिसमें एक लाख पिस्तौल, एक लाख बन्दूकें, दो लाख बारूद के बक्से, चार हवाई जहाज वायरलैस, एक हजार

हवाई जहाजों के बम, चौदह तोपें, सैकड़ों टन सिमेंट और दो पूरे वायरलैस स्टेशन थे। आवश्यक सैनिक कागज-पत्र भी जहाज में से मिले।

पंजाब पुलिस के अधिकारियों के अनुसार उक्त सामान में से मिले पिस्तौलों की इस संख्या से जाहिर होता था कि ये हथियार किसी बाकायदा सैनिक अभियान के बजाय किसी क्रान्तिकारी आन्दोलन को हथियारों से लैस करने के लिए थे। पहले इस बात का उल्लेख कर ही चुके हैं कि भाई संतोखसिंह ने सॉनफ्रांसिस्को के जर्मन कौंसल के साथ मिलकर यह योजना बनाई थी कि युद्ध के आरम्भ होने पर जर्मनी की सहायता से तुर्की सेनाएँ स्वेज नहर पर अधिकार कर लें, और इसमें जहाज डुबोकर इसे बन्द कर दें। सम्भव है कि इटली में रोके गए जहाज में जो सिमेंट था, वह नहर बन्द कर देने के लिए हो। और वे हथियार गदर पार्टी को लैस करने के लिए हों।

एक जर्मन पत्र 'बर्लनर टैगेबलाट' ने ६ मार्च, १९१४ के अंक में लिखा: "कहा जाता है कि भारत को हथियार तथा बारूद पहुँचाने के लिए कैलिफोर्निया में संगठनात्मक प्रबन्ध हो रहा है।" ऐसे ही कुछ उदाहरण हैं, जिनसे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि गदर पार्टी के जर्मनी के साथ काफी घनिष्ठ सम्बन्ध थे।

गदर पार्टी ने प्रथम महायुद्ध आरम्भ होने से पहले गदरी क्राध्तिकारियों की सैनिक शिक्षा की ओर भी ध्यान दिया। करतारसिंह सराबा को हवाई जहाज का काम सिखाने के लिए एक जर्मन कम्पनी के साथ प्रबन्ध किया गया। श्री ऊधमसिंह

कसेल के नेतृत्व में एक टोली श्री ज्वालासिंह ठट्टियां के फार्म पर गुप्त तौर से सैनिक प्रशिक्षण के लिए भेजी गई। लाला हरदयाल ने इस बात के लिए मना कर रखा था कि खुले-आम हथियार चलाने का अभ्यास न किया जाए, क्योंकि इस तरह अमेरिकन सरकार इस बात को सहन नहीं करेगी और प्रचार का काम बन्द हो जाएगा। हथियारों के प्रशिक्षण के लिए चीन के निकट जर्मन द्वीपों में प्रबन्ध किया गया था। श्री हरनामसिंह 'टुण्डीलाट', करतारसिंह सराबा और पृथ्वीसिंह ने गुप्त तौर से बम बनाने का काम सीखा। बम आजमाते हुए हरनामसिंह का एक बाजू उड़ गया, जिससे उनका नाम 'टुण्डीलाट' प्रसिद्ध हो गया।

अमेरिका के एक पत्र 'फरसैनो रिपब्लिकन' के एक अंक में छपा था कि गदर पार्टी के पास एक आम फण्ड भी है। पता चला है कि इसका अधिकांश भाग भारतीयों को सैनिक स्कूलों में भेजने पर खर्च किया जा रहा है ताकि वे भारत वापस लौटकर अपने देशवासियों को युद्ध की कला में पारंगत बना सकें।

१०

कौमा गाटा मारू

'कौमा गाटा मारू' घटना का गदर पार्टी के आन्दोलन से यद्यपि कोई सीधा सम्बन्ध नहीं था, पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस घटना ने भारत लौट आने की तैयारी में बड़ा भारी काम किया।

बाबा गुरदित्तसिंह सरहाली पन्द्रह वर्ष से विदेशों में रह रहे थे। वह सिंगापुर और मलाया में ठेकेदारी का काम करते थे। सन् १६०६ में वह भारत आए और फिर सिंगापुर वापस जाते हुए पंजाबियों को कनाडा ले जाने के लिए जहाज ठेके पर लेने की कोशिश करने लगे, ताकि भारतीय परिवारों को कनाडा में पहुँचाने का काम कर सकें। उन्हें जब कलकत्ता में जहाज प्राप्त करने में सफलता नहीं मिली, तो वह हांगकांग चले गए—जहाँ उन्होंने एक जर्मन एजेंट के द्वारा एक जापानी जहाज ठेके पर ले लिया। इस जहाज का नाम 'कौमा गाटा मारू' था।

'कौमा गाटा मारू' ४ अप्रैल, १६१४ को हांगकांग से चला, शंघाई और नागासाकी (जापान) होता हुआ जहाज ३५१ सिख तथा २१ पंजाबी मुसलमान यात्रियों को लेकर २३ मई, १६१४ को वैनकोवर पहुँचा। इम्मीग्रेशन महकमे के आदेशानुसार

जहाज को घाट पर नहीं लगने दिया गया और घाट से दूर पानी में खड़ा रहने पर मजबूर किया गया। गश्ती-किश्तियाँ रात-दिन पहरा देती रहीं। किसी को जहाज से उतरने भी नहीं दिया गया। उधर जहाज के ठेके की निश्चित तारीख निकट आती जा रही थी, इधर कनाडियन सरकार अपना कोई निर्णय नहीं दे पा रही थी।

मिसेज ऐना रोस ने टोरण्टो के एक पत्र में कुछ लेख लिखकर यह माँग की कि भारतीय यात्रियों को कनाडा में प्रवेश करने दिया जाए। उन्होंने कोई बेजा काम नहीं किया, बल्कि सरकारी नियमों का पालन करते हुए हजारों डॉलर खर्च करके लगातार सीधी यात्रा द्वारा यहाँ पहुँचे हैं।

पर परिणाम उल्टा ही हुआ। यात्रियों के साथ किसी को मिलने तक नहीं दिया गया। जब कनाडा-प्रवेश सम्बन्धी उनका मुकदमा अदालत में था, तो उनके वकील मि० वर्ड को भी उनमें से किसी के साथ मुलाकात करने की आज्ञा नहीं दी गई। ऐसी हालत में मुकदमे का फैसला जब उनके विरुद्ध हो गया, तो कहीं जाकर मिलने दिया गया। मि० वर्ड को उनसे मिलकर पता चला कि मुकदमे के कई जरूरी पक्ष अदालत में पेश ही नहीं किए जा सके थे।

जब मुकदमे का फैसला उनके विरुद्ध हो गया, तो उन्होंने वहाँ से लौट जाने की इच्छा जाहिर की। उन्होंने वापसी यात्रा के लिए राशन आदि की माँग की। लेकिन उनकी यह माँग इम्मीग्रेशन महकमे के अधिकारियों ने ठुकरा दी। कप्तान को फौरी वहाँ से तुरन्त चल देने की आज्ञा हुई। इस आज्ञा से यात्रियों

में रोष की लहर फैल गई। उन्होंने कप्तान को मजबूर किया कि इम्मीग्रेशन महकमे की यह आज्ञा बिलकुल न मानी जाए। १३५ पुलिस के सिपाहियों तथा इन्जनों द्वारा उन पर पानी फेंका गया। इससे उनका क्रोध और अधिक भड़क उठा। उन्होंने ईंटों और कोयले से पुलिस को भगा दिया। फिर कनाडा की सरकार ने घमण्ड में आकर अपने जंगी जहाज 'रेनबो' को आज्ञा दी कि वह 'कौमा गाटा मारू' के पास जाकर उसे आज्ञा मान लेने के लिए बाध्य करे।

इधर कनाडियन सरकार कुछ झुक गई और उसने राशन देना मंजूर कर लिया। पर यात्रियों को सरकार की इस बात पर विश्वास नहीं हुआ। उन्होंने मुकाबला करने का फैसला कर लिया। इधर जंगी जहाज 'रेनबो' की तोपों ने छोटे से 'कौमा गाटा मारू' जहाज का निशाना बाँध रखा था। उधर यात्रियों ने लड़ने के लिए लकड़ियों के मोर्चे बना लिए थे। वे दिन-रात तलवारें तथा भाले बनाने में लगे हुए थे। कनाडा की सरकारी मशीनरी ने अपने को इस स्थिति में पाकर एक और बात सोची। उसने कनाडा के कुछ सिखों का एक प्रतिनिधि-मण्डल उनके जहाज पर भेजा कि उन्हें जाकर विश्वास दिलाएँ कि सरकार उनकी राशन की माँग को मानती है। आखिर सफलता मिली। राशन लेकर वह छोटा-सा जहाज वहाँ से लौट गया।

सर माईकल ओडायर और रौलट रिपोर्ट ने भी इस बात को माना है कि जहाज के लौट जाने को मजबूर करने के लिए पहले पुलिस की और बाद में जंगी जहाज की सहायता ली गई.

'कौमा गाटा मारू' जहाज की इस घटना ने प्रवासी भारतीयों

के स्वाभिमान को और अधिक जगा दिया। उन्हें अपनी पराधीनता अब और भी अधिक खलने लगी। अमेरिका तथा कनाडा में सभाएँ की गईं। 'कौमा गाटा मारू' के यात्रियों को मुकदमा लड़ने के लिए चंदा इकट्ठा करके भेजा गया। जब कानून की ओर से निराशा हुई, तो 'कौमा गाटा मारू' के यात्रियों को हथियार पहुँचाने की कोशिश की गई। भारत जाकर अंग्रेजों को हथियारबन्द विद्रोह द्वारा निकालने की चर्चा खुले तौर पर चल पड़ी। वैनकोवर तथा इसके आस-पास के भारतीयों ने शहर को लूटने की तैयारी कर ली। कनाडा में कोई ऐसी सेना भी नहीं थी, जो शहर को लूट से बचाने के लिए आगे बढ़ती।

'कौमा गाटा मारू' जहाज के यात्रियों को 'गदर' अखबार राशन के थैलों में बन्द करके पहुँचाया जाता था। जब पता चला कि 'कौमा गाटा मारू' वापस लौट जाने के लिए मजबूर हो रहा है, तो गदर पार्टी के गुप्त कमीशन की एक बैठक बुलाई गई। गुप्त कमीशन ने फैसला किया कि गदर पार्टी के प्रधान श्री सोहनसिंह भकना को जितनी जल्दी हो सके योकोहामा (जापान) के रास्ते से देश भेजा जाए। उनको नीचे लिखे ये काम सौंपे गए—

१. 'कौमा गाटा मारू' जहाज के यात्रियों से योकोहामा में मिलकर उन्हें गदर पार्टी का कार्यक्रम समझाना।

२. 'कौमा गाटा मारू' के यात्रियों को हथियार पहुँचाना।

३. पूर्व एशियाई देशों और भारत में गदर पार्टी की शाखाएँ स्थापित करना और गदर पार्टी के कार्यक्रम के लिए मार्ग तैयार करना।

'कौमा गाटा मारू' जहाज वैनकोवर से २३ जुलाई, १९१४ को

चलना था। श्री सोहनसिंह भकना २१ जुलाई १९१४ को सॉनफ्रांसिस्को से चल पड़े। जहाज में पहले ही कमरा रिजर्व करा लिया गया था। उसमें श्री करतारसिंह सराबा १०० पिस्तौल गोलियों सहित रख आए। सी. आई. डी. की निगाह से बचकर श्री सोहनसिंह भकना जहाज चलने से सिर्फ पन्द्रह मिनट पहले जहाज में दाखिल हुए और सीधे अपने रिजर्व कमरे में चले गए। उनका अमेरिका से जाना बिलकुल गुप्त रखा गया। गुप्त कमीशन ने श्री सोहनसिंह भकना के सम्बन्ध में जापान की गदर पार्टी की शाखा को सूचना दे रखी थी। जहाज के योकोहामा पहुँचने पर दो क्रान्तिकारी बन्दरगाह पर श्री सोहनसिंह भकना से आकर मिले। हथियारों की पेटियाँ उनके हवाले कर दी गईं।

जब 'कौमा गाटा मारू' जहाज योकोहामा पहुँचा तो गदर पार्टी का एक सदस्य जहाज पर बाबा गुरदित्तसिंह और उनके निजी सेक्रेटरी रायसिंह से मिला। तत्पश्चात् रायसिंह और हरनामसिंह श्री सोहनसिंह भकना से मिलने के लिए योकोहामा के एक होटल में गए। दूसरे दिन स्वयं श्री सोहनसिंह भकना जहाज पर जाकर बाबा गुरदित्तसिंह तथा जहाज कमेटी से मिले। उन्हें गदर पार्टी का सन्देशा दिया। हथियार तथा गदर पार्टी का साहित्य भी 'कौमा गाटा मारू' में पहुँचाया गया।

उन दिनों जर्मनी का ऐमडन नामक जंगी जहाज समुद्र में मित्र देशों के व्यापारी जहाज डुबो रहा था। जापान भी मित्र देशों का समर्थक था, इसलिए 'कौमा गाटा मारू' जापानी जहाज होने के कारण खतरे में था। लेकिन जापान की गदर पार्टी के सदस्यों की सूझ-बूझ के कारण श्री सोहनसिंह भकना जापान-

प्रबन्धकों पर आक्रमण करने का अवसर ढूंढ रहे थे, क्योंकि वैनकोवर का यह गुरुद्वारा ही भारतीयों की राष्ट्रीय गतिविधियों का केन्द्र था। ३० अगस्त, १९१४ को बेलासिंह और उसके कुछ साथी दंगा-फिसाद करने के विचार से गुरुद्वारे में आए। पर पहले ही पता चल जाने पर पुलिस को सूचित कर दिया गया। पुलिस ने बेलासिंह और उसके साथियों को गुरुद्वारे से बाहर निकाल दिया। बेलासिंह इम्मीग्रेशन महकमे के मि० हापकिन्ज का खास भेदिया था।

५ सितम्बर, १९१४ को बेलासिंह फिर गुरुद्वारे में आया। वह गुरुद्वारा कमेटी के प्रधान श्री भागसिंह के पीछे आकर बैठ गया। कीर्तन हो रहा था। अचानक बेलासिंह ने पिस्तौल निकालकर गोलियाँ चलानी शुरू कर दीं। गोलियाँ श्री भागसिंह की पीठ में लगीं। एक अन्य भारतीय वतनसिंह को भी गोलियाँ लगीं। वे दोनों शहीद हो गए। बेलासिंह पर मुकदमा चला। वह इस बयान के आधार पर छोड़ दिया गया कि पहले उस पर भागसिंह ने हमला किया था। उसने अपनी रक्षा के लिए गोलियाँ चलाईं। मुकदमा सुप्रीम कोर्ट में गया। वहाँ गदर पार्टी के एक सदस्य मेवासिंह ने मि० हापकिन्ज को अदालत में गोली से मार दिया। मि० हापकिन्ज ही भारतीयों का दुश्मन था। मेवासिंह को फाँसी की सजा हुई।

श्री भागसिंह, वतनसिंह और मेवासिंह के बलिदान से कनाडा, अमेरिका और सुदूर पूरब के देशों के भारतीयों में एक नया जोश भर गया। यह जोश ही भारतीयों की एक संगठित क्रान्तिकारी शक्ति बन गया।

'कौमा गाटा मारू' जहाज २३ जुलाई, १९१४ को वैनकोवर से

चला था। योकोहामा (जापान) कुछ दिन रुकता हुआ वह बज-बज के घाट कलकत्ता में आ लगा, जहाँ पहले से ही पुलिस और सेना उसकी प्रतीक्षा में थी। सेना ने जहाज के यात्रियों पर अँधाधुँध गोली-वर्षा शुरू कर दी। १८ यात्री सेना और पुलिस की गोलियों का शिकार हुए। जहाज के नेता बाबा गुरदित्तसिंह सरहाली पुलिस की आँखों में धूल झोंककर भाग निकलने में सफल हो गए। यह घटना एक बड़े संघर्ष की सूचक थी।

जुलाई के अन्त में प्रथम महायुद्ध छिड़ गया। अप्रैल, १९१४ में कनाडा से एक अंग्रेज ने बंगाल में किसी सरकारी पद पर काम कर रहे अपने भाई को लिखा कि गदर पार्टी को भारत में क्रान्ति होने का पूरा-पूरा भरोसा है। वह सिर्फ अंग्रेजों के किसी युद्ध में फँस जाने का इन्तजार कर रही थी। सॉनफ्रांसिस्को में गदर पार्टी सम्बन्धी चलाए गए मुकदमे से फिलीपाइन के कई नेता सन् १९१७ में क्रान्ति करने की आशा लगाए बैठे थे, पर महायुद्ध छिड़ जाने के कारण उन्हें जल्दी कदम उठाना पड़ा। महायुद्ध आरम्भ होने के समय तक गदर पार्टी को अपनी सरगर्मियाँ आरम्भ किए हुए सिर्फ नौ महीने ही हुए थे। यह समय अधिकतर प्रचार और संगठन में बीता।

१९१४ का महायुद्ध गदर पार्टी के लिए एक सुनहरा अवसर था, क्योंकि ऐसा मौका फिर नहीं आने वाला था। अमेरिका के अखबारों में यह समाचार प्रकाशित हुआ कि भारत से सेनाएँ युद्ध के मैदान में भेजी जा रही हैं। गदर पार्टी के नेता यह बात उसी समय भाँप गए कि भारत जाकर सेनाओं को बिगाड़ने के लिए काम करने का यही एक सुअवसर है।

१९१३ में तीन सिख अमेरिका से प्रतिनिधि मण्डल के तौर पर पंजाब में आए। वे तीनों गदर पार्टी के सदस्य थे, जो भारत की राजनीतिक स्थिति को भाँपने के लिए आए थे। उनके कनाडा वापस लौटने पर विक्टोरिया के गुरुद्वारे में एक भव्य सभा की गई, जिसमें बलवन्तसिंह ग्रन्थी ने बताया कि उन्होंने सारे भारत का चक्कर लगाया। कई राजनीतिक नेताओं से भेंट भी की। भारत के लोग अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध हैं और वे सरकारी मशीनरी पर करारी चोट करने के किसी अवसर की तलाश में हैं। यही नहीं, बल्कि ये भी खबरें मिलती रहीं कि भारत ही नहीं बर्मा, ईरान, अफगानिस्तान, नेपाल और स्याम के लोग भी क्रान्ति करने को तैयार बैठे हैं। श्री बलवन्तसिंह और उनके साथियों को भारत के कई नेताओं ने जो सहयोग देने का आश्वासन दिया था, वह सब झूठ साबित हुआ। गदर पार्टी के कार्यकर्त्ताओं ने यह समझ लिया कि भरत जाने पर क्रान्ति में सब लोग सहयोग देंगे, बस उन्हें थोड़ा-सा झकझोरने की जरूरत है। परन्तु आगे चलकर यह भी गलत सिद्ध हुआ।

गदर पार्टी की इस असफलता का सबसे बड़ा कारण यह था कि अभी उसमें राजनीतिक दाँवपेंच की सूझ-बूझ नहीं आई थी। वह अपनी किशोरावस्था में ही एक बहुत बड़े संघर्ष में कूद पड़ी।

११

भारत की ओर प्रस्थान

प्रथम महायुद्ध का विस्फोट होते ही गदर पार्टी ने सरगर्मी से अपना काम शुरू कर दिया। 'गदर' अखबार के युद्ध-विशेषांक निकाले गए, जिनमें प्रवासी भारतीयों को भारत जाकर अंग्रेजों के विरुद्ध स्वाधीनता-संग्राम में भाग लेने के लिए प्रेरित किया गया। अमेरिका में स्थान-स्थान पर सभाएँ की जाने लगीं, जिनमें भाई भगवानसिंह, मौलवी बरकतुल्ला और श्री रामचन्द्र ने बढ़-चढ़कर भाग लिया।

२६ जुलाई, १९१४ को ऑक्सवर्ड की एक सभा में श्री भगवानसिंह और बरकतुल्ला ने स्पष्ट रूप से यह घोषणा की कि महायुद्ध आरम्भ हो चुका है, इसलिए विद्रोह करके अंग्रेजों को भारत से निकालने का समय आ गया है। अंग्रेजों को महायुद्ध में शामिल होने के लिए मजबूर होना पड़ेगा। मिश्र आयरलैण्ड, दक्षिणी अफ्रीका तथा अन्य स्थानों पर विद्रोह की आग भड़केगी। यही एक ऐसा अवसर है जब कि भारत में जाकर सेनाओं को विद्रोह के लिए तैयार किया जा सकता है।

४ अगस्त, १९१४ को अंग्रेज महायुद्ध में शामिल हो

गए। अब गदर पार्टी के निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार मार्ग साफ था।

फरैस्नो (Fresno) में ६ अगस्त को एक बड़ी सभा हुई, जिसमें पाँच-छः सौ के लगभग भारतीय उपस्थित थे। श्री भगवानसिंह, बरकतुल्ला और रामचन्द्र ने भाषण दिए। भारतीयों को स्वदेश लौटने के लिए तैयार हो जाने को कहा गया। साथ ही यह भी भरोसा दिलाया गया कि भारत पहुँच जाने पर हथियार दिए जाएँगे। स्वयं-सेवकों की एक सूची तैयार की गई। ‹ तीन सौ सिखों ने भारत लौट जाने की इच्छा प्रकट की।

११ अगस्त, १६१४ को सैकरोमैण्ट में एक भारी सभा और हुई, जिसमें पाँच-छः हजार भारतीय शामिल थे। श्री भगवानसिंह बरकतुल्ला और महमूद ने भाषण दिए। जहाज का टिकट लेने और हथियार खरीदने के लिए पाँच-छः हजार डॉलर इकट्ठे किए गए। उन्हें यह भी बताया गया कि सॉनफ्रांसिस्को से एक जहाज जल्दी चलने वाला है।

स्टॉकटन में दो सभाएँ और हुईं। पोर्टलैण्ड की ७ अगस्त की एक सभा में सारे उपस्थित भारतीयों ने गदर करने की सौगन्ध खाई।

इसी तरह अमेरिका के नगरों, गाँवों और जहाँ-जहाँ भी भारतीय आबाद थे, सभाएँ की गईं। सभाओं के अलावा कई क्रान्तिकारियों ने भारत को प्रस्थान करने के लिए स्वयं-सेवक भरती करने के विचार से अमेरिका के कुछ भागों का दौरा किया। परिणाम यह हुआ कि क्रान्तिकारी भारी संख्या में सॉनफ्रांसिस्को में जमा हो गए। उस समय के भारतीयों के जोश

का एक छोटा-सा उदाहरण इस पत्र में मिलता है, जो एक भारतीय क्रान्तिकारी ने अपनी पत्नी को लिखा था :

"………कुछ दिन बाद एक बड़ा भारी गदर होगा…… हमारे हाथ में तलवार होगी, और आगे बढ़ते हुए हम मरेंगे। हम गुरु गोविन्दसिंह के बेटे हैं। अगर जिन्दा रहे तो मिलेंगे……"

कैलिफोर्निया के एक सिख ने ८२ नं० पंजाबी पलटन के एक सिपाही को नौशहरा (सीमा प्रान्त) में लिखा : "……अमेरिका और कनाडा के सारे भारतीय मरने-मारने पर तुले बैठे हैं।"

'दी पोर्टलैण्ड टेलीग्राम' पत्र के ७ अगस्त, १९१४ के अंक में एक खबर छपी :

"अस्टोरिया (ऑरगन) ७ अगस्त : हरेक गाड़ी और बोट, जो दक्षिण की ओर जाता है—इस शहर से बहुत सारे भारतीयों को ले जाता है। यदि यह निकासी ऐसी ही कुछ समय और जारी रही, तो अस्टोरिया भारतीयों से बिलकुल खाली हो जाएगा। हैमड मिल में काम करने वाले भारतीयों की बहुत संख्या जा चुकी है। जो पीछे रह गए हैं, वे जाने की तैयारी कर रहे हैं। कहा जाता है कि ये भारतीय सॉनफ्रांसिस्को होते हुए भारत जा रहे हैं। एक जहाज किराए पर ले लिया गया है। वे सब क्रान्ति में भाग लेने के लिए भारत जा रहे हैं, जिससे अंग्रेजों के यूरोप की लड़ाई में फँसे होने के कारण जल्दी ही फूट पड़ने की आशा है। यह भी कहा जाता है कि एक जापानी जहाज भारतीयों को अपने देश वापस ले जाएगा।"

कार्नवालिस (ऑरगन) के कृषि कालिज के एक प्रोफेसर ने अपनी माँ को पत्र में लिखा: "…मेरा ऑरगन के कृषि कालिज से

सम्बन्ध है, जहाँ कई भारतीय विद्यार्थी रहते हैं। इस समय अमेरिका में रह रहे लगभग सभी भारतीय वापस भारत लौट रहे हैं। मुझे बताया गया है कि हजार से अधिक तो एशिया को जा भी चुके हैं। उनका वहाँ जाने का उद्देश्य अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध विद्रोह में भाग लेना है। इस कालिज के विद्यार्थी भी वापस जा रहे हैं। मेरे विचार में नेतृत्व करने वालों की स्थिति में ······यह एक ठीक ही अवसर है···विद्रोह के नेताओं में बेहद जोश है। भारतीयों के लिए अंग्रेजों पर चोट करने का अवसर फिर कभी नहीं आएगा, और नेता इस बात को भली प्रकार समझते हैं।"

गदर पार्टी के इस अभियान के सम्बन्ध में हुई एक सभा की अमेरिकन पत्र 'फरैस्नो रिपब्लिक' ने अपने २३ सितम्बर, १९१४ के अंक में यह खबर प्रकाशित की—

"कल दोपहर के समय इलारा थियेटर (फरैस्नो, कैलिफोर्निया) में साढ़े तीन सौ भारतीय एक आम पब्लिक जलसे में इकट्ठे हुए और छः घण्टे लगातार भाषण सुनते रहे। अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह खड़ा करने पर बल दिया गया···कल की सभा के परिणाम-स्वरूप बहुत से भारतीय अगले शनिवार 'मनचोरिया' जहाज पर भारत जाएँगे...भगवानसिंह, बरकतुल्ला, रामचन्द्र आदि नेताओं ने घोषणा की है कि जर्मनी ने भारत से वायदा किया है अगर वे अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह करेंगे, तो जर्मनी पूरी सहायता देगा......"

विक्टोरिया (कनाडा) से अगस्त के अन्त में एक गोरे ने इंगलैण्ड के युद्ध-मंत्री को लिखा कि उसके एक दोस्त को, जो

जायदाद की दलाली का काम करता है, एक सिख ने हिदायत दी है कि उसकी जायदाद के दो टुकड़े आधे मूल्य पर बेच दे। सिख ने कहा कि उसे भारतीयों को भारत भेजने के लिए पैसे की जरूरत है। दो महीने तक मुश्किल से अमेरिका में कोई भारतीय रह जायेगा। वह भारतीयों की निकासी का कारण नहीं बताता। पर उसने संकेत किया कि यह बताना अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध जाता है।

केन्द्रीय सी० आई० डी० के डायरेक्टर की रिपोर्ट में एक स्थान पर लिखा है—

"१५ अक्तूबर के 'शमशेर खालसा' में, जिसकी बम्बई की डाक में से ९८ कापियाँ पकड़ी गई थीं, एक नोट इस भाव का छपा है कि बहुत सारे प्रवासी भारतीयों की ओर से उनकी जमीनें बिकवाने की अर्जियाँ मिली हैं, इसलिए स्टाकटन के खालसा दीवान ने इस सम्बन्ध में एक कम्पनी के साथ प्रबन्ध किया है। जो प्रवासी भारतीय जमीनें बेचना चाहते हैं, वे खालसा दीवान को लिखें। बिना किसी शक-शुबा के इसका उद्देश्य भारतीयों को क्रान्ति में भाग लेने के लिए सहायता करने का है।

प्रथम महायुद्ध आरम्भ होने से पहले श्री सोहनसिंह भकना तो भारत के लिए प्रस्थान कर ही चुके थे। इसी तरह कुछ अन्य क्रान्तिकारी गदर पार्टी का प्रचार करने के लिए जाली नामों से भारत भेजे गए। श्री करतारसिंह सराबा 'निम्न मारू' जहाज द्वारा १५ या १६ सितम्बर को गदरी क्रान्तिकारियों की मुख्य टोली से एक महीना पहले कोलम्बो पहुँच गए। 'कौमा गाटा मारू' जहाज के शंघाई पहुँचने पर श्री गुजरसिंह भकना के नेतृत्व में वहाँ से

एक क्रान्तिकारी टोली भी, अमेरिका के क्रान्तिकारियों की मुख्य टोली के चलने से पहले, देश के लिए चल पड़ी।

अमेरिका से क्रान्तिकारियों की पहली टोली 'कोरिया' जहाज में २९ अगस्त, १९१४ को सॉनफ्रांसिस्को से चली। चलने से पहले क्रांतिकारियों को कई छोटी-छोटी टोलियों में बाँटा गया। श्री केसरसिंह 'ठट्ठगढ़', श्री ज्वालासिंह 'ठट्टियाँ' और पंडित जगतराम को इनका नेता बनाया गया। कोरिया जहाज चलने से पहले मौलवी बरकतुल्ला, भाई भगवानसिंह और श्री रामचन्द्र जहाज पर आए। उन्होंने यात्रियों को सम्बोधित करते हुए कहा—"तुम्हारा कर्तव्य स्पष्ट है। देश लौट जाओ और भारत के हरेक कोने में गदर की चिनगारी सुलगा दो। भारत पहुँचने पर तुम्हें हथियार दिए जाएँगे। अगर हथियार जुटाने में हम सफल नहीं होते हैं, तो पुलिस स्टेशनों पर धावा बोलकर हथियार लूट लो। अपने नेताओं के आदेशों पर चलो।"

कोरिया जहाज जापान के बन्दरगाहों—योकोहामा, कोबे, नागासाकी और फिलीपाइन के बन्दरगाह मनीला—रुकता हुआ अन्त में हांगकांग जाकर रुक गया। यह ही इसकी यात्रा की मंजिल थी। योकोहामा में श्री परमानन्द (यू० पी०) क्रान्तिकारियों में शामिल हो गए। अमरसिंह और रामरखा हथियार प्राप्त करने के लिए जहाज से उतर गए। श्री निधानसिंह चुग्घा, इन्द्रसिंह सुरसिंह और प्यारासिंह लंगेरी जहाज से नागासाकी उतरकर शंघाई चले गए। जहाज के मनीला पहुँचने पर शहर में एक सभा की गई। हाफिज अब्दुल्ला, पंडित जगतराम और नवाब खान ने भाषण दिए। जहाज के हांगकांग पहुँचने से पहले श्री निधानसिंह

चुग्घा ने शंघाई से तार द्वारा क्रान्तिकारियों को सूचित कर दिया था कि हांगकांग में तलाशी का खतरा है। इस खतरे को देखते हुए हथियार पंडित जगतराम को सौंप दिए गए और क्रान्तिकारी साहित्य समुद्र की भेंट चढ़ा दिया गया। श्री निधानसिंह चुग्घा नागासाकी बन्दरगाह पर कोरिया जहाज को छोड़कर शंघाई चले गए थे। उन्होंने शंघाई में एक जर्मन से पिस्तौल खरीदे। शंघाई से तीस के लगभग क्रान्तिकारियों की एक और टोली लेकर 'मशीमा मारू' जहाज पर १५ अक्तूबर को भारत के लिए चल पड़े। इसी भाँति कोरिया जहाज के बाद शीघ्र ही कनाडा और अमेरिका से 'साइबेरियाँ', 'मैक्सिको मारू' आदि जहाजों पर क्रान्तिकारियों की टोलियाँ चल दीं। उनमें से एक टोली को श्री शेरसिंह वेई पोई 'कनाडा मारू' जहाज पर कनाडा से लेकर आए। अलग-अलग स्थानों से चली टोलियाँ हांगकांग में आकर इकट्ठी हो गईं। हांगकांग से आगे की यात्रा में कई प्रकार की असुविधाएँ थीं।

क्रान्तिकारियों को हांगकांग में काफी दिन रुकना पड़ा। महायुद्ध आरम्भ हो जाने के कारण जहाज नहीं मिलते थे। ऊपर से पुलिस ने पाबन्दी लगा रखी थी कि बीस से अधिक भारतीय एक जहाज पर यात्रा नहीं कर सकते। हांगकांग में गदरी क्रान्तिकारियों ने गुरुद्वारे में कई सभाएँ कीं, जिनमें खुले आम गदर का प्रचार किया गया। हांगकांग में मौजूद पंजाबी पलटनों को भड़काने की कोशिश की गई। नवाब खान के अनुसार २६ नं० पंजाबी पलटन के सिपाही गदर करने के लिए तैयार थे। योजना भी बना ली गई थी, पर जर्मन कौंसल ने मना कर दिया।

क्रान्तिकारियों को एक दूसरा भय भी था कि छोटी-छोटी टोलियों के भारत लौटने से उद्देश्य की सिद्धि नहीं होगी। वे हांगकांग के पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट से मिले। उन्होंने कहा कि वे सब एक साथ यात्रा करना चाहते हैं। पुलिस अधिकारी ने जवाब दिया कि वह किसी जहाज को उन्हें एक साथ ले जाने को कहेगा। अगर जहाज के अफसर मान गए, तो उसे कोई एतराज नहीं होगा।

क्रान्तिकारियों ने परस्पर सलाह-मशविरा करके फैसला किया कि किसी तटस्थ देश के जहाज पर जाया जाए या फिर खुश्की के मार्ग से, ताकि कहीं उनके जहाज को समुद्र में ही न डुबो दिया जाए। इस विचार को लेकर श्री रूड़सिंह 'चूहड़चक' और नवाबखान कैण्टब (चीन) के जर्मन कौंसल को मिले। उसे किसी तटस्थ देश का जहाज देने में सहायता करने को कहा। पर बावजूद कोशिश करने के जहाज न मिल सका। जर्मन कौंसल से पॉसपोर्ट ले देने के लिए भी कहा गया ताकि क्रान्तिकारी चीन के खुश्की के मार्ग से भारत जा सकें। पर उसने जवाब दिया कि चीन तटस्थ देश होने के कारण हथियारबन्द क्रान्तिकारियों को अपने देश से नहीं गुजरने देगा। जर्मन कौंसल ने यह सलाह दी कि जापानी जहाज में जाया जा सकता है।

अमेरिका के अलावा कनाडा, शंघाई और मनीला के गदरी क्रान्तिकारियों को कुछ टोलियाँ हांगकांग में आकर इकट्ठी हो गई थीं। इसलिए क्रान्तिकारियों ने एक नई केन्द्रीय कमेटी संगठित की, जिसके सदस्य श्री केसरसिंह 'ठट्ठगढ़', श्री ज्वालासिंह ठट्टियां', पंडित जगतराम, श्री रूड़सिंह 'चूहड़चक', शेरसिंह 'वेईं पोईं',

श्री निधानसिंह चुग्घा, श्री पृथ्वीसिंह तथा नवाबखान थे। सारे क्रान्तिकारियों को भारत में जाकर काम करने के लिए अलग-अलग टोलियों में विभक्त किया गया। केन्द्रीय कमेटी के सदस्यों में से प्रत्येक को एक टोली का नेता चुना गया। हरेक टोली को अपने नेता की आज्ञा के अनुसार काम करना था, और इनके मध्य ताल-मेल भी नेताओं के द्वारा होना था।

क्रान्तिकारियों को अपने भविष्य का कार्यक्रम स्पष्ट मालूम नहीं था। उनकी आँखों के सम्मुख एक धुँधली-सी तसवीर जरूर थी—भारतीय पलटनों को गदर के लिए तैयार किया जाए। अगर किसी कारण हथियार न मिल सकें तो पुलिस स्टेशनों को लूटकर हथियार प्राप्त किए जाएँ। क्रान्तिकारियों के अमेरिका से चलने पर युगान्तर आश्रम के नेताओं ने हथियार भारत पहुँचाने का भरोसा दिलाया था। हथियार-प्राप्ति के पश्चात् डाकघरों और तहसीलों के खजाने लूटकर, रेल की लाइनें और पुल उड़ाकर, जेलें तोड़कर, गद्दारों तथा अफसरों को दण्ड देकर—जैसे भी सम्भव बने, अंग्रेजी सरकार की मशीनरी को असफल करने की कोशिश की जाए। एक अन्तिम फैसला यह भी किया गया कि गदर पार्टी का जो सदस्य अपने कर्त्तव्य-पालन में पूरा न उतर सके, उसे मौत की सजा दी जाए। यह भी फैसला किया गया कि क्रान्तिकारी भारत पहुँचकर लुधियाना के पास लाडोवाल गाँव में १७ नवम्बर को मिलने के लिए इकट्ठे हों।

आखिर हांगकांग के पुलिस अधिकारियों से बातचीत का कुछ परिणाम निकल आया। 'मशीमा मारू' जहाज शंघाई से सीधा कोलम्बो जाने के लिए पहले ही बुक हो चुका था। 'मशीमा मारू' के

यात्रियों के अलावा हांगकांग में जमा हुए अन्य क्रान्तिकारी, और यहाँ से साथ मिले—जापानी जहाज 'तोशा मारू' में सवार हो गए। 'तोशा मारू' और 'मशीमा मारू' हांगकांग से लगभग एक ही समय पर चले; और दोनों सिंगापुर, पीनांग भी एक ही समय पर पहुँचे। पीनांग से 'मशीमा मारू' कोलम्बो चला गया और 'तोशा मारू' रंगून होता हुआ २९ अक्तूबर को कलकत्ता पहुँचा।

मार्ग में 'तोशा मारू' और 'मशीमा मारू' जहाजों पर क्रान्ति का आह्वान करते हुए गदर पार्टी के नेता भाषण देते। जोशीली कविताएँ पढ़ी जातीं। सिंगापुर में दोनों जहाज थोड़ी देर के लिए रुके। और इतने समय में ही वहाँ मौजूद भारतीय पलटनों को विद्रोह करने के लिए भड़काया गया। गदरी क्रान्तिकारी कोई भी अवसर हाथ से जाने देना नहीं चाहते थे। इन्हीं पलटनों में से एक मुसलमानों की पलटन ने सिंगापुर का प्रसिद्ध गदर किया। सिंगापुर में भी कुछ आदमी क्रान्तिकारियों के साथ मिल गए, जिनमें से कुछ ने बाद में स्याम और बर्मा के संघर्ष में भाग लिया।

पीनांग के बन्दरगाह पर दोनों जहाजों को काफी दिन रुकना पड़ा। यहाँ भी जर्मनी के जंगी जहाज 'ऐमडन' का खतरा था। वह उन दिनों बंगाल की खाड़ी में जहाज डुबो रहा था। पीनांग के गुरुद्वारे में क्रान्तिकारियों के जोशीले भाषणों का सिलसिला कई दिन तक चलता रहा। यहीं पर दोनों जहाजों के यात्रियों को 'कौमा गाटा मारू' जहाज के साथ बज-बज, कलकत्ता में हुई घटना का पता चला। इस घटना से गदरी क्रान्तिकारियों ने अनुमान लगा लिया कि भारत में गदर आरम्भ हो चुका है और उन्हें सिर्फ 'ऐमडन' का बहाना बना कर रोका जा रहा है। क्रान्तिकारियों

ने पीनांग से तार द्वारा 'अमृत बाजार पत्रिका', कलकत्ता से पता किया कि भारत में गदर आरम्भ हो चुका है या अभी नहीं ? पर इस तार का क्या जवाब आता !

पीनांग में भी दोनों जहाजों को रोक रखने से क्रान्तिकारियों में क्षोभ पैदा हो गया। उन्होंने फैसला किया कि अगर जहाज इस तरह रुके रहते हैं, तो पीनांन में ही गदर की चिनगारी फेंकी जाए। इसी उद्देश्य के हेतु क्रान्तिकारी चार टोलियों में विभक्त होकर पीनांग शहर में घुसे। जो टोली फौजियों से मिलने गई थी, उसका दावा था कि फौजियों में बड़ी बेचैनी है। वे गदर में शामिल होने के लिए तैयार हैं। लेकिन गदरी नेताओं ने पहले पीनांग के रेजीडैण्ट से मिलना उचित समझा। उन्होंने तय किया कि यदि मिलने पर भी कोई परिणाम न निकला तो अगले दिन ही शहर में गदर कर दिया जाएगा।

पर रेजीडैण्ट से मुलाकात का परिणाम यह निकला कि दोनों जहाजों के चलने का प्रबन्ध हो गया। 'मशीमा मारू' को कोलम्बो जाना था, और 'तोशा मारू' को रंगून होते हुए भारत। 'तोशा मारू' रंगून में तीन दिन तक रुका। यहाँ भी पता चला कि एक भारतीय पलटन युद्ध के मैदान में जा रही है। उसे भी गदर के लिए प्रेरणा देने की कोशिश की गई। 'तोशा मारू' जहाज २९ अक्तूबर को कलकत्ता पहुँच गया।

यह कैसे हो सकता था कि गदर पार्टी की इन क्रान्तिकारी सरगर्मियों से अंग्रेज सरकार अनभिज्ञ रहती ? ५ सितम्बर, १९१४ को भारत सरकार ने एक अध्यादेश द्वारा विदेशों से लौटने वाले भारतीयों के साथ निपटने के लिए विशेषाधिकार हाथ में ले लिए

थे। घाट पर पुलिस तैनात कर दी गई जिसकी सहायता से 'तोशा मारू' के यात्रियों को विशेष गाड़ियों से पंजाब ले जाने का प्रबन्ध किया गया। घाट से कोई छः मील समुद्र में एक कस्टम महकमे का अधिकारी और डाक्टर के वेश में पंजाब पुलिस का एक सब-इन्स्पेक्टर जहाज में घुस गए। यात्रियों की तलाशी ली गई। तत्पश्चात् उन्हें बीस या पच्चीस की टोलियों में जहाज से नीचे उतारा गया। पूछताछ के बाद यात्रियों को तीन श्रेणियों में बाँट दिया गया। एक वे जिनके साथ अध्यादेश के मातहत पेश आना था। दूसरे वे जिनके बारे में सिर्फ कुछ सन्देह ही था। तीसरे, जो खतरनाक नहीं थे। दो आदमियों को क्रान्तिकारी साहित्य रखने के जुर्म में गिरफ्तार किया गया। दो को कनाडा से मिली रिपोर्ट के आधार पर पकड़ा गया। ७९ को खतरनाक समझकर पुलिस की निगरानी में पंजाब भेजा गया। सौ आदमी दूसरी श्रेणी में विशेष गाड़ियों द्वारा भेजे गए।

गाड़ी में जोशीले क्रांतिकारियों का अंग्रेज अफसरों के साथ झगड़ा चलता रहा। वे खुले आम घोषणा करते जा रहे थे कि अंग्रेजी राज्य खत्म होने वाला है। रायविण्ड स्टेशन पर पंजाब सी० आई० डी० का अधिकारी नजरबन्दी के वारण्ट लेकर मिला। क्रान्तिकारियों को गार्द की निगरानी में मिण्टगुमरी और मुल्तान की जेलों में नजरबन्द करने के लिए भेज दिया गया।

भारत लौट आने वाले क्रान्तिकारियों की संख्या सात-आठ हजार तक पहुँच गई थी। गदरी क्रान्तिकारी जो योजना लेकर भारत लौटे थे, वह किसी हद तक अधूरी रह गई। इसका मुख्य कारण यह था कि मुख्य क्रान्तिकारी नेता जहाज से उतरते ही गिरफ्तार

कर लिए गए। गदर पार्टी के प्रधान श्री सोहनसिंह भकना की गिरफ्तारी से इस क्रान्तिकारी आन्दोलन को बड़ा धक्का लगा। सर माईकल ओडायर के अनुसार—'मुख्य नेताओं की गिरफ्तारी से गदर की आरम्भिक योजना, जिसकी सफलता अचानक आक्रमण पर निर्भर करती थी, बुरी तरह असफल हो गई। गिरफ्तार हुए नेताओं के स्थान की पूर्ति नए नेता न कर सके, इसलिए हम इस आन्दोलन का सामना करने में समर्थ हो गए।'

'तोशा मारू' जहाज के क्रान्तिकारियों ने इतनी बड़ी भूल कैसे की ? इसकी तह में जो सबसे बड़ा कारण छिपा था, वह था क्रान्तिकारियों का अन्धा जोश। गदर पार्टी के नेताओं के लिए इस जोश पर काबू पाना तो एक ओर रहा, वे भी उसी बहाव में बह गए। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि क्रान्तिकारियों को राजनैतिक दांव-पेचों का कोई लम्बा-चौड़ा अनुभव नहीं था। जिन दिनों भारतीय विदेशों की ओर गए थे, उस समय क्रान्तिकारी आन्दोलन का नामोंनिशान भी नहीं था। देश में जागृति अभी आई नहीं थी। भारतीयों को अमेरिका के स्वतंत्र वातवरण ने झकझोरा और उनके दिलों में राजनैतिक चेतना का अंकुर फूटा। संसार युद्ध के अचानक फूट पड़ने पर उन्हें तैयारी के लिए अधिक समय भी न मिल पाया। भारत को प्रस्थान के अभियान के समय लाला हरदयाल भी अमेरिका में नहीं थे। अगर वह होते तो इस अभियान का कुछ दूसरा ही रूप होता, भले ही उन्हें पहले किसी क्रान्तिकारी आन्दोलन के संचालन का पर्याप्त अनुभव नहीं था, पर राजनीति के पंडित होने के कारण भविष्य में आने वाली विघ्न-बाधाओं को वह भली प्रकार समझ सकते थे।

भारत में गदर के असफल रह जाने के बावजूद भी गदरी क्रान्तिकारियों ने अपना साहस नहीं छोड़ा। उनकी अदम्य क्रान्तिकारी भावना में कोई अन्तर नहीं आया। उन्होंने भारत के पड़ोसी देश बर्मा, स्याम और किसी हद तक अफगानिस्तान, ईरान द्वारा भी अंग्रेजी सरकार पर चोट करने के प्रयास किए। उनमें दृढ़ता तथा लगन कुछ ऐसे गुण थे जिनसे उनका क्रान्ति में विश्वास अडिग बना रहा।

१२
भारत में सरगर्मियों का प्रथम दौर

युद्ध के शुरू के दो वर्षों में आठ हजार भारतीय स्वदेश लौटे जिनमें से चार सौ को जेलों में और पच्चीस सौ को गाँवों में नजरबन्द कर दिया गया। कुछ क्रान्तिकारियों के जत्थे 'तोशा मारू' जहाज से पहले भारत में प्रवेश करने में सफल हो चुके थे। उनमें प्रमुख शंघाई से आए श्री गुजरसिंह भकना, डा० मथुरासिंह और श्री करतारसिंह सराबा थे। ये सारे क्रान्तिकारी 'मशीमा मारू' जहाज के द्वारा कोलम्बो होकर आए थे। गदरी क्रान्तिकारियों का एक अन्य जत्था जनवरी, १९१५ में संत विसाखासिंह के नेतृत्व में कोलम्बो के मार्ग से आने में सफल हो गया। कुछ क्रान्तिकारी 'तोशा मारू' जहाज से भी पुलिस की आँख बचाकर निकलने में सफल हो गए थे। उनमें प्रमुख थे पंडित जगतराम और श्री पृथ्वीसिंह।

भारत में गदर पार्टी की सरगर्मियों का आरम्भ शंघाई से आए क्रान्तिकारी जत्थे ने श्री गुजरसिंह के नेतृत्व में किया। गाँवों और सेना में गदर का प्रचार किया गया। गदर पार्टी का आदेश मिलने पर गदर के लिए तैयार रहने को कहा गया। गदरी सरगर्मियों के सम्बन्ध में प्रोग्राम निश्चित करने के लिए दीपावली के अवसर पर अमृतसर में एक बैठक की गई, जिसमें सरगर्मियों को तेज

करने के लिए कई महत्त्वपूर्ण फैसले हुए।

दीपावली के दिन डाक्टर मथुरासिंह के नेतृत्व में २० आदमियों का एक और जत्था अमृतसर पहुँचा। डा० मथुरासिंह शंघाई से कैलिफोर्निया गए थे, जहाँ उनका युगान्तर आश्रम के नेताओं के साथ सम्पर्क हो गया था। सितम्बर, १९१३ में वह सॉनफ्रांसिस्को से वापस शंघाई आए। उन्होंने वहाँ गदर का प्रचार शुरू कर दिया। पर शंघाई के कर्मचारियों को उनकी सरगर्मियों का पता चल गया। वह मई, १९१४ में भारत लौट आए। उनके अपने बयान के अनुसार उन्हें भारत में इसलिए भेजा गया था कि वह काबुल जाकर उन देशभक्तों की रिहायश का प्रबन्ध करें, जिन्हें भारत छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा। लेकिन भारत में डा० मथुरासिंह विदेशी सरकार की नजरों में आ गए। फिर वह इस योजना को कार्यान्वित न कर सके। दो महीने भारत रहकर वह फिर शंघाई को ही लौट गए।

दीपावली के दिन हुई बैठक में कई प्रमुख नेता शामिल हुए। इस बैठक में कहा गया कि गदर की निश्चित की जाने वाली तारीख का इन्तजार किया जाए। अन्य कई स्थानों पर बैठकें होती रहीं। आखिर खासा जिला अमृतसर में एक जरूरी बैठक करके यह फैसला किया गया कि १५ नवम्बर को गदर किया जाए। इस हेतु डा० मथुरासिंह, श्री करतारसिंह सराबा, पंडित जगतराम, श्री निधानसिंह चुग्घा तथा श्री गुजरसिंह को नेता चुना गया। पर १५ नवम्बर को गदर शुरू न किया जा सका। कारण यह रहा कि हथियार आने वाले थे, वे न आए।

'तोशा मारू' जहाज से पहले भारत आने वाले क्रान्तिकारियों

ने देश आने पर लाहौर छावनी के तेईसवें रिसाले के कई घुड़-सवारों के साथ ताल-मेल पैदा कर लिया था। उनमें से कइयों को गदर के लिए निश्चित की गई तारीख १५ नवम्बर का पता था। 'कौमा गाटा मारू' के यात्रियों के गाँवों में किए गए प्रचार, अमेरिका से आने वाले पत्रों तथा जर्मनी की विजय के सम्बन्ध में फैली अफवाहों के कारण इस रिसाले में काफी बेचैनी थी। इस रिसाले में अधिकतर सिपाही 'कौमा गाटा मारू' जहाज के यात्रियों के गाँवों से आए हुए थे। तेईसवें रिसाले के कुछ घुड़-सवारों ने मियाँमीर छावनी के समीप एक कब्रिस्तान में गदर सम्बन्धी कई बैठकें कीं। उन्हें बताया गया कि विदेशों से लौटे १४-१५०० गदरी छावनी के समीप झाड़ियों में इकट्ठे होकर लाहौर पर आक्रमण करके किला अपने कब्जे में लेना चाहते हैं।

चानमारी के पास रिसाले के घुड़सवारों की एक और बड़ी बैठक हुई, जिसमें दफेदार लछमनसिंह ने घोषणा की कि २३ नवम्बर को गदर होगा। सारे घुड़सवारों ने सर्वसम्मत फैसला किया कि वे गदर में शामिल होंगे। चार दिन के बाद एक और बैठक हुई जिसमें बताया गया कि गदर की तारीख २७ नवम्बर कर दी गई है। २६ नवम्बर की एक बैठक में घुड़सवारों ने यह पक्का फैसला किया कि शाम को घोड़ों-सहित झाड़ साहब चला जाए। २३ नवम्बर की बजाय २७ नवम्बर तारीख इसलिए बदलनी पड़ी कि श्री निधानसिंह चुग्घा का दल इससे पहले गदर में शामिल नहीं हो सकता था।

२६ नवम्बर के दिन बहुत से क्रान्तिकारी झाड़ साहब में इकट्ठे हुए। इन गदरी क्रान्तिकारियों के पास सिर्फ भाले और

कुल्हाड़ियाँ थीं। वे तेईसवें रिसाले की इन्तजार कर रहे थे, क्योंकि उन्होंने हथियार लाकर देने का वायदा कर रखा था। पर न जाने क्या कारण हुआ कि तेईसवें रिसाले के घुड़सवार झाड़ साहब न पहुँच सके। अन्त में गदरियों ने उनकी आशा छोड़ कर फैसला किया कि २७ नवम्बर को सरहाली के पास इकट्ठे होकर सरहाली और पट्टी के थानों पर आक्रमण किया जाए। वहाँ से हथियार छीनकर तरन-तारन का खजाना लूटा जाए। २७ नवम्बर को गदरी निश्चित स्थान पर एकत्र हुए। ददेहर गाँव के दस नम्बरी बदमाश दारी का बहाना बनाकर सरहाली थाने का दरवाजा खुलवाने की सोची। दारी न आया। थाने पर कड़ा पहरा देखकर खाली हाथ आक्रमण का विचार छोड़ दिया गया।

उधर २७ नवम्बर की रात को २०-२५ के करीब घुड़सवार झाड़ साहब जाने के लिए तैयार हो भी गए, पर रिसाले के ग्रन्थी (सिख पुरोहित) को इस बात का पता चल गया। उसने सवारों को समझाया कि गदर की सफलता की कोई उम्मीद नहीं है। सारे घुड़सवार दुविधा में पड़ गए। तीन सवार पहले ही झाड़ साहब जा चुके थे। उनके वहाँ पहुँचते ही डिप्टी कमिश्नर को गदरियों के इरादे का पता चल गया था। इसलिए पुलिस और फौज का एक दस्ता आ चुका था। तेईसवें रिसाले के तीनों सवारों को वहाँ पहुँचते ही गिरफ्तार करके फौजी अधिकारियों के हवाले कर दिया गया।

इसी समय जालन्धर, होशियारपुर, लुधियाना और फिरोजपुर आदि जिलों में गदरी क्रान्तिकारी काफी सक्रिय रूप से काम कर रहे थे। उनका परस्पर ताल-मेल भी था। १७ नवम्बर को

गदरी नेताओं की एक सभा लाडोवाल जिला लुधियाना में हुई। इस सभा में लगभग सभी बड़े-बड़े गदरी नेता शामिल हुए। बम बनाने और गदरी साहित्य प्रकाशित करने पर विचार-विमर्श हुआ। एक महत्त्वपूर्ण फैसला यह किया गया कि अलग-अलग सरकारी खजानों को लूटा जाए। नेताओं से कहा गया कि वे अपने आदमियों को इकट्ठा करें।

१६ नवम्बर को एक सभा मोगे में हुई। सरकारी खजाने लूटने सम्बन्धी फिर चर्चा चली। पर इस कार्यक्रम की सफलता दिखाई न देने के कारण यह फैसला हुआ कि २५ नवम्बर को मियांमीर का मैगजीन लूटा जाए। २३ नवम्बर को बदोवाल-मुल्लांपुर स्टेशनों के बीच एक और बैठक हुई। इसमें भी २५ नवम्बर को मियांमीर मैगजीन पर धावा बोलकर लूटने का फैसला किया गया। इस फैसले के पीछे ठोस कारण यह था कि श्री करतारसिंह सराबा को एक बार रेल के सफर में अचानक एक हवलदार मिल गया। करतारसिंह ने उसे निर्भीक होकर कहा कि तू नौकरी क्यों नहीं छोड़ देता? हवलदार पर करतारसिंह की निर्भीकता का बहुत प्रभाव पड़ा। उसने जवाब दिया—"अपने आदमी मियांमीर लाओ। मियांमीर के मैगजीन की चाबियाँ मेरे पास हैं, वे मैं आपके हवाले कर दूंगा।"

नवाबखान और उनके साथियों को रेल की पटरियाँ उखाड़ने का काम सौंपा गया। श्री करतारसिंह सराबा ने टेलीग्राम की तारें काटने का काम अपने जिम्मे लिया। पर हुआ यह, कि जिस हवलदार से मैगजीन की चाबियाँ लेनी थीं, उसकी बदली लाहौर से किसी अन्य स्थान पर हो गई। गदरियों की यह योजना भी

बीच ही में रह गई।

मियांमीर मैगजीन की योजना असफल हो जाने पर गदरियों ने फिरोजपुर में अपनी एक सभा बुलाई। फिरोजपुर शहर के बाहर जलालाबाद सड़क पर गदरी क्रान्तिकारी जमा हुए। श्री निधानसिंह चुंघा ने बताया कि उन्होंने ३० नवम्बर को फिरोजपुर की एक पलटन से हथियार लेने का प्रबन्ध किया है। सबको यह सलाह दी गई कि वे ३० नवम्बर को फिरोजपुर के शस्त्रागार (Arsenal) पर आक्रमण करने के लिए जमा हों। एक और योजना बनाई गई कि इससे पहले मोगे का सरकारी खजाना लूटा जाए।

मोगे जाने के लिए कुछ गदरी तो गाड़ी पर सवार हो गए, कुछ ताँगों पर। ताँगों में सवार टोली जब फिरोज थाने के निकट पहुँचा, तो वहाँ अचानक बिशारतअली सब-इन्स्पेक्टर और जेलदार ज्वालासिंह सड़क पर खड़े हुए मिल गए। वे एस० पी० की इन्तजार कर रहे थे। जेलदार ने कहा कि उसे ताँगों में सवार टोली पर कुछ सन्देह है। बिशारतअली को भी ऐसा ही सन्देह हुआ।

उन्होंने जब ताँगे खड़े करने के लिए कहा तो ताँगे पहले से भी तेज दौड़ने लगे। पुलिस सब-इन्स्पेक्टर ने घोड़ा दौड़ाकर उन्हें रोका। जब सब-इन्स्पेक्टर गदरियों को ताँगे से उतारकर तलाशी लेने लगा तो श्री चन्दासिंह गन्धासिंह ने पिस्तौल निकालकर बिशारत अली और जेलदार को वहीं मार दिया। शोर होने पर थाने की पुलिस बन्दूकें लेकर आ गई। आस-पास के ग्रामीण लोग भी पुलिस के साथ शामिल होकर क्रान्तिकारियों का पीछा करने लगे।

क्रान्तिकारी नहर के किनारे सरकण्डों में छिप गए। सरकण्डों को आग लगा दी गई। सात क्रान्तिकारी पकड़ लिए गए। छः बचकर निकल भागे, पर सरकण्डों में से ही फायर करते रहे। जब गोली चलनी बन्द हुई तो एक क्रान्तिकारी साँस तोड़ चुका था। दूसरा तोड़ रहा था। मौके पर पकड़े गए सात गदरी क्रांतिकारियों को फिरोजपुर सेशन जज की अदालत में मुकदमा चलाकर फाँसी दे दी गई।

फिरोजपुर शहर की इस घटना से क्रान्तिकारी आन्दोलन को बहुत धक्का पहुँचा। इस घटना में कुछ प्रमुख क्रान्तिकारी शहीद हो गए। उनमें रहमतअली और पंडित काशीराम भी थे। घटना की जाँच के सिलसिले में पुलिस को गदर आन्दोलन की कई गोपनीय बातों का पता चल गया, जिसके परिणामस्वरूप पेशावर में पंडित जगतराम और अम्बाला छावनी में फौजियों को गदर के लिए भड़काते हुए श्री पृथ्वीसिंह पकड़ लिए गए।

फिरोजपुर शहर के मुकाबले में बचकर भाग गए क्रान्तिकारियों में से कुछ नवाबखान से आ मिले। क्रान्तिकारियों की यह टोली अभी अपने किसी कार्यक्रम को कार्यान्वित भी न कर पाई थी, कि नवाबखान को १९ दिसम्बर को गिरफ्तार कर लिया गया।

झाड़ साहब और मियांमीर की योजनाओं के असफल हो जाने, फिरोजपुर शहर की घटना, श्री निधानसिंह और नवाबखान की टोलियों के बिखर जाने तथा पंडित जगतराम और श्री पृथ्वीसिंह की गिरफ्तारी से गदरी क्रान्तिकारियों की सरगर्मियाँ कुछ समय के लिए ठप्प हो गईं। इसका कारण था क्रान्तिकारियों का ताल-मेल कराने वाला कोई एक जिम्मेदार नेता न रहा।

भारत में गदरी क्रान्तिकारियों की सरगर्मियों का यह प्रथम दौर था। किसी भी योजना के अधूरी रह जाने और कोई एक मुख्य केन्द्र न होने के कारण क्रान्तिकारियों में निराशा-सी फैल गई। क्रान्तिकारी अपनी कमजोरियों को बुरी तरह से महसूस करने लग गए। पहले दौर की असफलताओं के पीछे दो बड़े कारण थे—सही संगठन न होना तथा हथियारों का नितान्त अभाव।

१३
सरगर्मियों का दूसरा दौर

गदरी क्रान्तिकारियों की सरगर्मियों का दूसरा दौर बंगाल के क्रान्तिकारियों के साथ ताल-मेल से आरम्भ होता है। यह बात अमेरिका से चलते समय ही निश्चित हो गई थी कि भारत जाकर सबसे पहले बंगाल के उन क्रांतिकारियों से सम्पर्क स्थापित करना होगा—जो अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष में सक्रिय हैं। गदर पार्टी के प्रधान श्री सोहनसिंह भकना अमेरिका से इसी उद्देश्य को लेकर चले थे, पर दुर्भाग्यवश जहाज से उतरते ही वह गिरफ्तार कर लिए गए थे।

बंगाली क्रान्तिकारियों के साथ ताल-मेल के काम में श्री करतारसिंह सराबा ने अपनी कम आयु होने पर भी बहुत बड़ा काम किया। वह भाई परमानन्द की चिट्ठी और दो हजार रुपए लेकर कलकत्ता के किसी क्रान्तिकारी के पास से हथियार लेने गए; पर उन्हें सफलता न मिली। जान-पहचान न होने के कारण उन्हें सी० आई० डी० का आदमी समझा गया। एक बात अवश्य हुई, करतारसिंह सराबा को पता चल गया कि बंगाल दल का कपूरथला दल से पहले ही सम्बन्ध है।

आगे चलकर गदरी और बंगाली क्रान्तिकारियों के बीच ताल-मेल कायम करने में सबसे महत्त्वपूर्ण पार्ट श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल ने अदा किया। उनकी अपनी रचित क्रान्तिकारी इतिहास की प्रसिद्ध पुस्तक 'बन्दी जीवन' से उनके इस रोल पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। उन्होंने लिखा है—

"पंजाब दल का एक आदमी गदर की तैयारी का समाचार लेकर हमारे पास आया। जब हमने यह सुना कि दो-तीन हजार सिख गदर के लिए तैयार बैठे हैं, तो हमें असीम आनन्द का अनुभव हुआ। पंजाब दल के नेताओं ने यह कहला भेजा था कि हमें श्री रासबिहारी बोस के नेतृत्व की जरूरत है। दिल्ली षड्यन्त्र के फरार प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री रासबिहारी बोस का नाम इस समय अमेरिका तक प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था।

"कई कारणों से श्री रासबिहारी बोस उस समय पंजाब न जा सके, इसीलिए पहले वहाँ पर मेरा भेजा जाना तय हुआ, ताकि अपनी आँखों से वहाँ की स्थिति को देखकर रिपोर्ट दे सकूँ।

"पहले ही निश्चित हो चुका था कि जालन्धर शहर में पहले मैं सिख नेताओं से मिलूँगा......लुधियाना पहुँचकर देखा, मेरे दोस्त की जान-पहचान का एक सिख लड़का हमारी इन्तजार कर रहा है। दोस्त ने उससे मेरा परिचय कराया। वह करतारसिंह थे। हमारे साथ गाड़ी में सवार होकर वह भी जालन्धर के लिए चल दिया। रास्ते में थोड़ी-बहुत बातचीत हुई। पता चला कि इस समय लुधियाना में दो-तीन सौ आदमी जमा हैं। अलग-अलग काम के लिए उन्हें भेजा जाएगा। ये लोग गुरुद्वारे में दीवान (कीर्तन) का बहाना करके जमा हुए थे...

"इस तरह हम जालन्धर स्टेशन पर पहुँचे। वहाँ पर करतारसिंह के कई दोस्त इन्तजार कर रहे थे। उन्हें जो कुछ कहना था, कहकर हम रेल की पटरी पार करके साथ वाले बगीचे में पहुँच गए। वहाँ पहुँचकर देखा, पहले ही इस दल के कई नेता वहाँ पर मौजूद थे। उस दिन वहाँ करतारसिंह, पृथ्वीसिंह, अमरसिंह और रामरखा के अलावा शायद एक-दो आदमी और थे। पृथ्वीसिंह और अमरसिंह दोनों ही राजपूत थे, लेकिन बहुत अर्से से पंजाब में रह रहे थे। ये सारे रासबिहारी बोस से मिलने के लिए ठहरे हुए थे। दोस्त ने मेरी जान-पहचान यह कहकर कराई कि रासबिहारी तो किसी विशेष काम की वजह से आ नहीं पाए। उन्होंने अपना प्रतिनिधि भेजा है। करतारसिंह ने कहा कि हमें रासबिहारी बोस से ही काम है। मैंने उन्हें समझाया कि पंजाब आने से पहले वह यहाँ की स्थिति को खूब अच्छी तरह से जान लेना चाहते हैं......मैंने कहा कि मैं आपके बड़े नेताओं से बातचीत करना चाहता हूँ।

"अमरसिंह ने कहा—'सच पूछें तो हममें नेताओं की कमी है। इसीलिए हम रासबिहारी बोस की जरूरत महसूस कर रहे हैं। हममें से कोई भी अधिक सूझ-बूझ और लम्बा अनुभव रखने वाला नहीं है, इसीलिए हमारा काम सीधा नहीं बैठता। हमें बंगाल की सहायता चाहिए। बंगाल में आप लोग काफी अर्से से काम कर रहे हैं, और आपको अनुभव भी काफी हो चुका है।'

"करतारसिंह ने यह बात मानी तो सही, पर अमरसिंह से वह बोला—'देखो, साहस क्यों छोड़ रहे हो! काम शुरू होने पर आप में से ही कई नेता निकल आएँगे।'

"मुझे उस दिन की बातों से साफ पता चल गया कि ये लोग एक महान् कार्य-क्षेत्र में कूद पड़े हैं। इन्हें सहारा चाहिए, और साथ ही मैंने महसूस किया कि इनमें से अगर कोई काम का आदमी है तो वह करतारसिंह है......

"करतारसिंह ने मुझसे पूछा कि हथियार देकर बंगाल हमारी कहाँ तक सहायता कर सकता है? बंगाल में कितने हजार बन्दूकें हैं?

"मैंने कहा कि आपके ख्याल से कितने हथियार होंगे?

"करतारसिंह ने कहा कि मैं ऐसा समझता हूँ कि बंगाल में काफी हथियार इकट्ठे कर लिए गए हैं, क्योंकि बंगाल काफी अर्से से गदर की तैयारी में जुटा हुआ है। हमारे दल के परमानन्द (यू० पी०) के एक बंगाली दोस्त ने उन्हें पाँच सौ पिस्तौल देने का वचन दिया है। इसी हेतु परमानन्द बंगाल गए हैं।

"मैंने कहा कि परमानन्द से जिस आदमी ने यह बात कही है, वह कोई बेकार आदमी मालूम पड़ता है, क्योंकि बंगाल में कहीं भी कोई आदमी पाँच सौ पिस्तौल नहीं दे सकता। किसी ने यह गप्प उड़ाई है।

"फिर करतारसिंह ने पूछा कि बंगाल हमारी किस रूप में सहायता कर सकेगा? क्या वहाँ पर भी पंजाब के साथ ही गदर होगा? बंगाल में आपके अधीन काम करने वाले कितने हैं?

"मैंने कहा कि देखो, जिस तरह यहाँ आप लोगों को सेनाओं में घुसने का मौका मिलता है, अगर हमें भी ऐसी सुविधा मिली होती तो कब का गदर हो भी चुका होता। बंगाल दल में अधिक संख्या बच्चों और नवयुवकों की है। हम लोग बड़ी

सावधानी से ऐसे लोगों को अपने दल में शामिल करते हैं जो हर समय मरने के लिए तैयार रहें। इसी कारण हमारे दल के सदस्यों की संख्या बहुत कम है, शायद दो हजार से अधिक न हो। लेकिन यह हमें विश्वास है कि जिस दिन गदर शुरू हो गया, उस दिन हजारों आदमी हमारा साथ देंगे। जब पंजाब में गदर हो गया, तो सच मानो कि उस दिन बंगाल खामोश बैठा नहीं रह सकेगा। अंग्रेज बंगाल को लेकर इतनी उलझन में फँस जाएँगे कि सरकार अपनी सारी शक्ति पंजाब पर नहीं खर्च कर सकेगी। बंगाल इस समय भी सरकारी खजाने लूट सकता है। पुलिस की बारकों पर छापे मार सकता है। पर आगे क्या होगा ? यही सोचकर बंगाल ने अभी तक कुछ नहीं किया। मैंने इन लोगों को भली-भाँति समझा दिया कि हमारी सलाह लिए बिना कुछ न करना। यह भी कह दिया कि खूब सावधानी से काम करना पड़ेगा, ताकि मेहनत बेकार न जाए। मैंने यह भी कहा कि अधिकतर लोगों को अपने गाँव में जाकर रहना चाहिए। छोटे-छोटे जत्थे बनाकर उनके मुखिए नियत कर दिए जाएँ। इस तरह संगठन हो जाने पर जब भी मौका आएगा, उनसे काम लिया जा सकेगा। अगर इस तरह छोटे-छोटे जत्थे नहीं बनाए जाएँगे, तो हर समय गिरफ्तारी का खतरा बना रहेगा।

"फिर मैंने करतारसिंह से कहा कि आपमें से एक आदमी मेरे साथ चलो। मैं उसे रासबिहारी बोस के पास ले जाऊँगा। उनके साथ खूब अच्छी तरह से सलाह-मशविरा करने की जरूरत है। यह बात उन्हें पसन्द आई। फैसला हुआ कि लाहौर में

पृथ्वीसिंह के साथ दुबारा मुलाकात करके उसे रासबिहारी बोस के पास ले जाना होगा।

"मैंने पूछा कि अब आप लोगों से मुलाकात कहाँ पर होगी ? उन्होंने जवाब दिया कि हमारा कोई भी पक्का ठिकाना नहीं है। इस पर मैंने पूछा कि आपका कोई केन्द्र नहीं ? उत्तर नहीं में मिला। पता चला कि वे लोग अलग-अलग कामों के लिए बिखर जाएँगे। काम हो जाने पर किसी एक गुप्त स्थान पर इकट्ठे हो जाएँगे। अगर किसी कारणवश इकट्ठे न हो पाएँ, तो गुरुद्वारों में ढूँढने के सिवाय और कोई चारा नहीं। यह सुनकर बड़ी हैरानी हुई······बाद में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो जाने पर पता चला कि उनकी यही हालत थी।"

जालन्धर से श्री सान्याल लाहौर गए। वहाँ पृथ्वीसिंह से मिले। उन्हें ५ दिसम्बर को बनारस पहुँचने के लिए कहा गया। श्री सान्याल निश्चित तारीख पर बनारस स्टेशन पर श्री पृथ्वीसिंह को लेने जाते रहे—पर वह न पहुँचे। श्री पृथ्वीसिंह अम्बाला छावनी के सैनिकों में गदर का प्रचार करते हुए पकड़े जा चुके थे। बंगाल और पंजाब के क्रांतिकारियों का मेल कुछ समय आगे न बढ़ पाया।

श्री वैष्णो गणेश पिंगले महाराष्ट्र के एक उत्साही नवयुवक थे। विद्या-प्राप्ति के लिए वह अमेरिका गए। वहाँ सीआटल में पढ़ने लग गए। जब गदरी क्रान्तिकारी भारत लौट रहे थे, तो वह भी एक जहाज द्वारा २० नवम्बर को कलकत्ता पहुँचे। अपने देश को लौटते हुए उन्होंने फैसला कर लिया था कि पहले बंगाल में गदर पार्टी के सदस्यों से मेल-जोल पैदा करूँगा। तत्पश्चात्

पंजाब जाऊँगा । कलकत्ता में इन्होंने अपने पुराने दोस्तों की सहायता से गदर पार्टी के कई नेताओं से मुलाकात की । इससे पंजाब में गदर होने की अफवाह सारे शहर में फैल गई । इधर इनके दोस्तों के साथ बंगाली क्रान्तिकारियों का भी सम्बन्ध था । और उसी सम्बन्ध के कारण पिंगले बंगाल दल में शामिल हो गए । तत्पश्चात् उन्हें बनारस भेज दिया गया ।

श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल ने लिखा है—

"बनारस रहते हुए उन दिनों हमारे दिल में यह विचार पैदा हो रहा था कि शायद अब हमारा सम्बन्ध पंजाब के साथ जुड़ ही न पाए, क्योंकि ५ दिसम्बर को श्री पृथ्वीसिंह बनारस आने वाले थे, वह नहीं आए और न ही पंजाब की कोई खबर सुनने को मिली । ऐसे अवसर पर पिंगले के आने से हमें इतनी खुशी हुई कि जैसे कुबेर का खजाना हाथ लग गया हो । इनका शरीर हट्टा-कट्टा और मजबूत था । रंग गोरा था । आँखों और चेहरे से चतुराई और योग्यता की झलक मिलती थी । इस योग्यता ने उसके लिए हमारे दिलों में स्थान बना लिया था । श्री पिंगले ने पहले साधु-वेष में भारत के पृथक्-पृथक् स्थानों की यात्रा की थी । फिर वह मैकेनिकल इंजीनियरिंग की शिक्षा के लिए अमेरिका चले गए । वहाँ पर गदर पार्टी में शामिल हो गए ।

"श्री पिंगले को दो दिन बनारस ठहराकर हमने पंजाब भेज दिया । उनकी माँग थी कि पंजाब में उन्हें बहुत से गोले भेज दिए जाएँ । इस पर कहा गया कि गोले तो भेजे जा सकते हैं, किन्तु एक-एक गोले पर सोलह-सोलह रुपए खर्च आता है, इसलिए पैसों की सहायता के बिना गोलों का भेजा जाना कठिन है……

अब पैसों का बन्दोबस्त करने और पंजाबियों का हाल जानने के लिए पिंगले पंजाब आ गए।"

श्री पिंगले दिसम्बर के अन्त में पंजाब आए और अमरसिंह को साथ लेकर कपूरथला गए। वहाँ उन्होंने श्री निधानसिंह चुग्घा, करतारसिंह सराबा, परमानन्द (यू० पी०) के साथ मिलकर एक बैठक की। बम तैयार करने के बारे में बातचीत हुई। श्री पिंगले ने बताया कि बंगाल दल सहयोग के लिए तैयार है।

इसके अलावा और भी कई बैठकें की गईं। अलग-अलग कामों का बँटवारा किया गया। केन्द्र के संगठन का काम मूलासिंह को सौंप दिया गया। डाक्टर मथुरासिंह को बमों के लिए मसाला इकट्ठा करने, श्री निधानसिंह को फंड्स और श्री करतारसिंह सराबा को श्री सान्याल द्वारा बंगाली क्रान्तिकारियों से सम्बन्ध स्थापित करने का काम सौंपा गया।

श्री पिंगले एक सप्ताह पंजाब रहकर बनारस लौट आए। अब श्री रासबिहारी बोस की पंजाब-यात्रा के लिए मार्ग साफ हो गया था। लेकिन श्री रासबिहारी बोस के आने से पहले श्री सान्याल और पिंगले एक बार फिर पंजाब में आए। वे अमृतसर के एक गुरुद्वारे में ठहरे। श्री पिंगले ने एक पंजाबी नेता मूलासिंह से श्री सान्याल को मिलाया। मूलासिंह पहले शंघाई की पुलिस में नौकरी कर चुका था। वहाँ भी वह हड़ताली पुलिसवालों का नेता बन गया था। मूलासिंह ने उस समय श्री सान्याल को बताया कि गदर आरम्भ हो जाने पर बहुत-सी पलटनों ने देश-बासियों का साथ देने का वचन दिया है।

श्री सान्याल को मूलासिंह के हवाले करके पिंगले दूसरे

सिख नेताओं की तलाश में मुक्तसर के मेले में गए·····पिंगले जिस समय मेले से लौटकर आए तो उस समय करतारसिंह, अमरसिंह आदि क्रान्तिकारी वहाँ आ चुके थे। श्री सान्याल को देखकर करतारसिंह बहुत खुश हुआ। उसने पूछा—"बताओ, अब रासबिहारी बोस कब पंजाब आ रहे हैं?" श्री सान्याल ने उत्तर दिया कि बस अब उन्हीं की बारी है। उन्हें ठहराने के लिए कुछ प्रबन्ध हो जाना चाहिए। आप लोग अपने काम को भी व्यवस्थित कर लें, फिर उनके आने में कोई देरी नहीं।

श्री सान्याल आगे लिखते हैं—

"रासबिहारी बोस के लिए अमृतसर और लाहौर में किराए के मकानों का बन्दोबस्त करने के लिए कह दिया गया। इन सारी बातों के सम्बन्ध में दादा (रासबिहारी) ने मुझे पहले ही कह रखा था। उन्होंने यह भी कहा था कि कभी भी जरूरत पड़ने पर कई स्थानों पर मकान किराए पर ले रखने चाहिएँ। अमृतसर के मकान मैंने स्वयं पसन्द किए। लाहौर में मकान लेने के लिए एक दूसरा आदमी भेजा गया। उस समय पंजाब में हो रहे क्रान्तिकारी कामों की जानकारी प्राप्त करके मुझे बहुत बड़ी आशाएँ बँध गईं। मैंने सोचा कि इस बार वास्तव में कोई काम हो रहा है। इसी समय सिखों का एक अन्य दल अमृतसर आया। यह दल भी अमेरिका से आया था। इस दल के कुछ नेताओं को मैंने देखा, जो बहुत बूढ़े थे। मेरे ख्याल में ये वही बूढ़े क्रांतिकारी थे, जिन्होंने काले पानी में तेजस्वियों की तरह कुछ समय बिता कर ६०-७० वर्ष की उम्र में उसी द्वीप में अपना जीवन समाप्त कर दिया। इस बुढ़ापे में भी वे भूख-हड़तालियों के साथ हड़ताल करने में कभी पीछे नहीं रहे थे। इस दल का कोई भी

सदस्य अभी तक अपने घर नहीं गया था। अमेरिका से आकर सीधे ही वे अमृतसर में ठहरे थे। इन्होंने अपनी खून-पसीने की कमाई से हमें पाँच सौ रुपए दिए।

"इन दिनों करतारसिंह बड़ा परिश्रम करते थे। वह हर रोज साइकिल पर गाँवों का पचास-साठ मील का चक्कर लगाते थे। इतना कुछ करने पर भी उन्हें चैन नहीं पड़ता था। ऐसा लगता था कि जैसे थकान नाम की चीज उनके लिए थी ही नहीं। गाँवों में चक्कर लगाने के बाद वह फिर उन पलटनों में जाने लगे, जिनमें अभी तक कोई काम नहीं हुआ था। इसी दौरान में बहुत से गदरी क्रान्तिकारियों की गिरफ्तारी के वारण्ट निकले। करतारसिंह को गिरफ्तार करने के लिए पुलिस ने एक गाँव को घेर लिया। उस समय करतारसिंह कहीं गाँव के पास ही में मौजूद थे। पुलिस के आने की खबर पाते ही वह साइकिल पर सवार होकर गाँव में आ गए। पुलिस को उनकी कोई पहचान नहीं थी। इस बार करतारसिंह अपनी दिलेरी से साफ बच गए। अगर वह ऐसा न करते, तो रास्ते में ही पकड़ लिए जाते।"

पंजाब की क्रान्तिकारी गतिविधियों का खूब अच्छी तरह से अध्ययन करके श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल बनारस लौट गए। उससे दो-तीन दिन बाद श्री पिंगले भी बनारस आ गए। उनके आने पर श्री बोस ने बनारस के क्रान्तिकारियों की एक बैठक की। एक स्कूल मास्टर श्री दामोदरस्वरूप को इलाहाबाद का नेता बनाया गया। दो आदमियों को बंगाल से हथियार और बम लाने के लिए नियुक्त किया गया। दो अन्य क्रान्तिकारियों को इन हथियारों को पंजाब पहुँचाने का काम सौंपा गया। श्री

प्रियनाथ को बनारस की सेनाओं में प्रचार करने का काम दिया गया। यही काम जबलपुर में श्री नलिनी के सुपुर्द किया गया।

श्री सान्याल स्वयं बंगाल जाना चाहते थे। पंजाब की गदर के लिए तैयारी देखते हुए उन्हें बंगाल में काम करने की इच्छा होती थी। पर श्री बोस ने कहा कि मैं पंजाब जाऊँगा। तुम्हें बंगाल और पंजाब के बीच में रहकर इन दोनों प्रान्तों का सम्बन्ध जोड़े रखना होगा। इसलिए श्री सान्याल ने अपनी सरगर्मियों का केन्द्र बनारस को बना लिया।

श्री रासबिहारी बोस बंगाल में फ्रांसीसी बस्ती चन्द्रनगर के निवासी थे। वह देहरादून के फॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट में पहले हैड क्लर्क थे। श्री आबद बिहारी और भाई बालमुकुन्द ने उनसे शिक्षा प्राप्त की थी। श्री बसन्तकुमार उनके नौकर थे। इन तीनों और श्री अमीरचन्द को वायसराय लार्ड हार्डिंग पर दिल्ली में बम फेंकने के जुर्म में फाँसी की सजा हुई थी। श्री रासबिहारी बोस उसी समय से गुप्त रहकर काम करते थे, क्योंकि उनकी गिरफ्तारी के लिए पुलिस ने साढ़े सात हजार रुपए का इनाम रखा हुआ था। उनकी फोटो छपवाकर चारों तरफ भेजी गई थी। श्री सान्याल के अनुसार बोस उस समय उत्तर भारत के आतंकवादियों के नेता थे।

सर माईकल ओडायर ने श्री रासबिहारी पर यह लांछन लगाने की कोशिश की है कि वह स्वयं पीछे रहकर, अपने आप को बचाकर, दूसरों को मौत के मुँह में धकेलते रहे। पर अंग्रेज अधिकारी के इस लांछन की असत्यता इसी से जाहिर हो जाती है, कि उनका उस समय पंजाब में प्रवेश एक तरह अपने आप

को मौत के मुँह में डालना था। अगर वे पकड़ लिए जाते तो उनके लिए फाँसी का तख्ता तैयार था। भारत सरकार की सी० आई० डी० उन्हें पकड़ने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा रही थी। श्री बोस हाथ पर हाथ रखकर कभी नहीं बैठे। वह उत्तर भारत के क्रान्तिकारियों का संगठन करने में जुटे रहे। कई बार पकड़ में आते-आते बचे। १८ नवम्बर, १९१४ को जब वह दो बमों की टोपियों की परख कर रहे थे, तो उन्हें और श्री सान्याल को कुछ चोटें आईं।

पंजाब आते समय जिस रेल के डिब्बे में रासबिहारी सवार थे, उसी में एक सी० आई० डी० का दरोगा भी उनका पीछा करने के लिए बैठा हुआ था। पर वह श्री बोस को इसलिए नहीं पहचान पाया, क्योंकि उन्होंने एकदम वेश बदल रखा था। इससे उनके साहस का अनुमान लगाया जा सकता है। श्री रासबिहारी बोस बंगाल के भद्र समाज में अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध पैदा हुई उस राष्ट्रीय जागृति का प्रतिनिधित्व करते थे, जो हमारी आजादी के इतिहास का एक सुनहरी पृष्ठ है।

श्री रासबिहारी बोस अपने साथ श्री पिंगले को लेकर जनवरी के मध्य अमृतसर पहुँचे। वह श्री पिंगले को अपना लेफ्टीनेण्ट बनाकर लाए थे। रौलर रिपोर्ट तथा पंजाब पुलिस के रिकार्ड के अनुसार पंजाब में गदरी क्रान्तिकारियों की सरगर्मियों का नेतृत्व बोस ने सम्भाल लिया। अब गदरी क्रान्तिकारियों की कार्यवाहियाँ योजना के अनुसार एक केन्द्र से संचालित होने लगीं। श्री बोस के लिए एक अलग मकान चौक बाबा अटल में किराए पर लिया गया था। एक दिन भी बाहर निकले

गदरी क्रांतिकारियों का केन्द्र अमृतसर से लाहौर में बदल देने के कई कारण थे। पहला यह कि लाहौर में साहित्य के प्रकाशन की व्यवस्था बहुत अच्छी तरह हो सकती थी। दूसरा, तेईसवाँ रिसाला जिसे गदर आरम्भ करना था—लाहौर छावनी में था। श्री बोस के लाहौर चले जाने, और मूलासिंह की गिरफ्तारी के बाद अमृतसर का केन्द्र लगभग बन्द ही हो गया।

१४
गदर की तैयारी

गदर पार्टी के क्रांतिकारी सिपाहियों में लगन, त्याग और देश की बलिवेदी पर कुर्बान हो जाने की अदम्य भावना की कोई कमी नहीं थी; कमी सिर्फ संगठन की थी। श्री रासबिहारी बोस के पंजाब में आकर गदर का नेतृत्व सँभाल लेने से इस महान् क्रांतिकारी आन्दोलन का स्वरूप ही बदल गया। श्री बोस अपनी सूझ-बूझ के कारण अच्छे संगठनकर्त्ता के रूप में पहले ही विख्यात थे। अब उन्हें अमेरिका से आए पंजाबी क्रांतिकारियों में काम करने का एक नया क्षेत्र मिल गया।

गदर आन्दोलन में विद्यार्थियों को शामिल करने के लिए कई प्रयत्न किए गए। लुधियाना में कुछ सफलता भी मिली। श्री देवासिंह ने, जो लुधियाना में खेलों के सामान की दुकान करते थे, कई विद्यार्थियों में क्रांतिकारी विचार भर दिए। उन विद्यार्थियों में सुच्चासिंह प्रमुख था। ये विद्यार्थी बम बनाने के लिए मसाला जुटाने, क्रांतिकारी-साहित्य प्रकाशित करने, सन्देश-वाहक का काम, सेनाओं में प्रचार आदि का काम सक्रिय रूप से करते रहे। इस्लामिया बोर्डिंग हाऊस में सुच्चासिंह का कमरा क्रांतिकारियों का केन्द्र बन गया।

विद्यार्थियों के अलावा गदरी क्रांतिकारियों ने ग्रामीण जनता को अपने साथ मिलाने के लिए भी आन्दोलन किया। गदरी क्रांतिकारी खुले तौर पर गाँवों में घूम-घूमकर गदर का प्रचार करते रहे। नवम्बर में पंजाब सरकार ने भारत सरकार को रिपोर्ट दी कि विदेशों से अभी-अभी लौटे आदमी गाँवों में घूम रहे हैं। नम्बरदारों ने स्थानीय अधिकारियों को ऐसे उदाहरण पेश किए हैं, जहाँ ये खतरनाक या भड़काने वाली बातें करते हैं।

ग्रामीण जनता को साथ मिलाने की इक्का-दुक्का कोशिशों के अलावा सबसे बड़ी कोशिश संत रणधीरसिंह द्वारा हुई। संत रणधीरसिंह और उनके श्रद्धालु धार्मिक विचार रखते थे। वे श्रद्धालु गदर पार्टी आन्दोलन में राजनीतिक नहीं, बल्कि धार्मिक प्रेरणा से शामिल हुए। गदरी क्रांतिकारी सभी विचारों के लोगों को गदर के लिए काम में लाना चाहते थे।

नई दिल्ली के रकाबगंज गुरुद्वारे की घटना से सिखों में काफी क्षोभ फैल गया था। गुरुद्वारे की बाहरी दीवार अंग्रेजों की ओर से ढाह देने से एक जबरदस्त आन्दोलन उठ खड़ा हुआ था। संत रणधीरसिंह इस आन्दोलन के प्राण थे। वह आरम्भ से ही भारत से अंग्रेजों को निकाल बाहर करने के पक्ष में थे। उन्होंने भगतसिंह को बताया था कि रकाबगंज को लेकर सिखों पर बड़ा भारी अन्याय हुआ है। उन्होंने भगतसिंह से यह भी कहा था कि वह अंग्रेजों को भारत से निकालने के लिए लोगों को प्रेरणा दें और विदेशों से लौट रहे भारतीयों का इन्तजार किया जाए। उनके आने पर गदर कर दिया जाए।

संत रणधीरसिंह और उनके साथी जगह-जगह भाषण करते

रहे। गदरी क्रांतिकारियों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का जिक्र सबके सामने चमकौर साहब की सभा में आया। संत रणधीरसिंह ने सभा में बताया कि एक कमेटी कायम की गई है, जिसने फैसला किया है कि अगर गुरुद्वारा रकाबगंज की दीवार को गिरा दिया गया, तो शहीद होने के लिए तैयार रहा जाए। उन्होंने यह भी बताया कि गदर पार्टी के दो आदमी होने वाले गदर के लिए आदमी लेने उनके पास आए थे। बंगाल से हथियार आ रहे हैं। गदर पार्टी के आदमियों से सरहिन्द में मिलना तय हुआ।

फरवरी के आरम्भ में संत रणधीरसिंह ने गुजरवाल जिला लुधियाना में सौ के लगभग देशभक्तों की सभा की। १४ फरवरी को अखण्ड पाठ था। अखण्ड पाठ के बाद संत रणधीरसिंह ने मकान की छत पर एक गुप्त बैठक की, जिसमें उन्होंने बताया कि अब मैदान में कूद पड़ने का समय आ गया है। सेनाएँ विद्रोह के लिए तैयार हैं। चन्दा इकट्ठा किया गया और कहा गया कि गदर की तारीख की सूचना बाद में दी जाएगी।

जब गदर की निश्चित तारीख पर फिरोजपुर की पलटनों को साथ लेकर क्रांतिकारियों की टोलियाँ फिरोजपुर में जमा हुईं तो संत रणधीरसिंह भी अपना एक जत्था लेकर वहाँ आए। योजना असफल हो गई। गिरफ्तारियाँ हुईं। संत रणधीरसिंह और उनके साथियों को आजन्म कैद की सजा दी गई।

पंजाब से बाहर काम

गदर पार्टी के क्रांतिकारी आन्दोलन से सम्बन्धित काम पंजाब से बाहर बंगाली देशभक्तों ने किया। बनारस इस काम

का केन्द्र बना।

पंजाब के पहले दौरे से लौटते हुए श्री सान्याल ने मन-ही मन फैसला कर लिया था कि अपने प्रान्त में अब छावनियों और सेनाओं में काम आरम्भ कर देने का समय आ गया है। श्री रासबिहारी बोस के साथ सलाह-मशविरे के बाद यह तय हुआ कि बंगाल की सेनाओं में पंजाब के गदर की खबर जल्दी पहुँचा देनी चाहिए। बंगाली क्रांतिकारियों ने अभी तक सेनाओं में विद्रोह का प्रचार-कार्य नहीं किया था।

श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल ने 'बन्दी जीवन' में लिखा था—

"हम बहुत दिनों से यही समझते आ रहे थे कि अनपढ़ जनता को भड़काना कोई मुश्किल काम नहीं है। इसके साथ हम यह भी भली प्रकार समझते थे कि जनता को सिर्फ भड़का देने से हमें सफलता नहीं मिल सकती। इसीलिए हमने काम की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया था। हमारी धारणा थी कि अगर पहले देश के पढ़े-लिखे नवयुवकों को संगठित कर लिया जाए, और फिर सेनाओं के सम्मुख अपना इरादा जाहिर करके उन्हें पूरी तरह सुदृढ़ बना लिया जाए तो गदर की नींव पक्की हो जाएगी।"

श्री सान्याल ने बनारस में सैनिकों के बीच काम आरम्भ किया। उनके लिए सेनाओं में काम का यह अनुभव बिलकुल नया था, इसलिए सैनिकों के साथ सम्पर्क स्थापित करने के हेतु वह फूंक-फूंककर कदम रखते रहे। पंजाब के गदरी क्रांतिकारियों का सेनाओं के बीच निर्भीकता से किया जा रहा काम उन्हें प्रेरणा देता रहा।

श्री सान्याल ने लिखा है कि गदर का काम बहुत छिप-छिपकर करना पड़ता था। किसी एक अनुभवी नेता का सबके सिर पर हाथ न होने के कारण कई छोटे-छोटे दल बन गए थे जो स्वतंत्र रूप से काम करते थे। बंगाल के अलावा पंजाब से बाहर यू० पी० के कई ठाकुरों के गाँवों में तथा राजपूताने के एक ठाकुर के साथ भी सम्बन्ध स्थापित किए गए। मुलतान छावनी में काम करने के लिए मनीलाल त्रिवेदी को नियुक्त किया गया। पर वह डर के मारे दिल्ली भाग गया। दिल्ली से श्री बालकृष्ण ने त्रिवेदी को राजपूताने के करवा कस्बे के रायसाहब ठाकुर गोपालसिंह के पास भेज दिया। रायसाहब ने बताया कि वह तीन हजार आदमी ला सकते हैं, लेकिन उन्हें हथियारबन्द करने के लिए समय चाहिए था।

क्रांतिकारी साहित्य

क्रांतिकारी साहित्य में सबसे पहला नम्बर 'गदर' अखबार का था। इसके अतिरिक्त 'गदर की गूँज', 'गदर सन्देश' कविताओं के संग्रह थे। क्रांतिकारी भावनाओं से ओत-प्रोत ये कविताएँ क्रांतिकारियों ने कंठस्थ कर ली थीं। गदर के शुरु होने पर बाँटने के लिए 'ऐलाने-जंग' तैयार किया गया। भाई परमानन्द की पुस्तक 'तारीखे हिन्द' भी सरकारी नजरों में काँटा बन गई थी।

भारत में क्रांतिकारी साहित्य बाँटना भी गदर पार्टी के कार्यक्रम का एक अति आवश्यक अंग था। एक अंक में 'गदर' ने लिखा था—"हमें लाखों की संख्या में 'गदर' अपने देश भेजना चाहिए। हम अखबार और किताबें छपवाकर भारत में भेजेंगे।"

इसमें कोई सन्देह नहीं कि गदरी क्रांतिकारी भारत में अपना प्रेस लगाना चाहते थे। भारत लौटते समय रंगून में प्रेस लगाने का सुझाव रखा गया, ताकि 'गदर' को अंग्रेजी, उर्दू, गुरुमुखी और हिन्दी में छपवाकर सेनाओं, शहरों और गाँवों में बाँटा जाए। जैसे ही इसकी पाठक-संख्या बढ़ जाए, और लोगों के दिल सरकार के विरुद्ध पलट जाएँ तो सारे भारत में विद्रोह करा दिया जाए।

श्री रासबिहारी बोस का हैड-क्वार्टर अमृतसर से लाहौर में बदल देने का एक उद्देश्य यह भी था कि लाहौर में वह प्रेस लगाने का प्रबन्ध कर सकेंगे। लेकिन धन के अभाव के कारण प्रेस न लगाया जा सका। प्रेस की बजाय सिर्फ छः के करीब हाथ से छापने वाले डुप्लीकेटर खरीदे गए, जिससे 'गदर सन्देश' और 'ऐलाने जंग' आदि गदरी साहित्य छापा गया।

डुप्लीकेटर लेने से पहले लुधियाना के विद्यार्थी सुच्चासिंह और कृपालसिंह हाथ से 'गदर सन्देश' और 'गदर गूँज' लिखते रहे। हाथों द्वारा लिखा गया और डुप्लीकेटरों द्वारा छपा साहित्य दूर-दूर तक बाँटा गया।

हथियार-प्राप्ति के प्रयत्न

गदरी क्रांतिकारियों ने हथियार जुटाने के विशेष प्रयत्न कनाडा तथा अमेरिका में, देश वापसी पर मार्ग में और भारत आकर बंगाली क्रांतिकारियों द्वारा किए। ये सारे प्रयत्न विफल हो जाने पर पुलिस स्टेशनों और सरकारी चौकियों पर छापे मारे गए।

गदरी क्रांतिकारियों ने सबसे पहले हथियार जुटाने के लिए

बगाल और सीमा-प्रान्त की ओर ध्यान दिया—पर दोनों प्रान्तों में उन्हें सफलता नहीं मिली। हथियारों की ओर से निराश होकर बम बनाने की ओर ध्यान दिया गया। ३१ दिसम्बर, १६१४ को बहुत से क्रांतिकारी अमृतसर की बिरयाली धर्मशाला में जमा हुए। डा० मथुरासिंह ने बताया कि उन्हें बम बनाने का नुस्खा आता है। एक पीतल की दवात मँगाई गई। डा० मथुरासिंह ने उसमें मसाला भर दिया। परमानन्द (यू० पी०), मूलासिंह आदि ने नहर के किनारे जाकर उसे चलाया और वापस आकर क्रांतिकारियों को बताया कि बम सफल रहा। तत्पश्चात् गदरी क्रांतिकारियों ने बम बनाने को ओर ध्यान देना आरम्भ किया।

लुधियाना के पास झाबेवाल गाँव में बम फैक्टरी कायम की गई। डा० मथुरासिंह और परमानन्द (यू० पी०) झाबेवाल में बम बनाने का काम करते थे। पर यह बात कई लोगों को पता चल जाने से वे वहाँ से चले गए। झाबेवाल से बम फैक्टरी उठाकर नाभा स्टेट के लोहरबदी गाँव में ले जाई गई। बम तैयार करने में अधिक हाथ बंगालियों का रहा। उन्हें बम बनाने का खूब अनुभव था। बंगाल से कुछ बम पंजाब में भी आए, जो बहुत दूर तक मार करने वाले थे। श्री पिंगले के पास से मेरठ छावनी में पकड़े गए दस बम एक रेजीमैण्ट को उड़ा देने के लिए काफी थे।

सेनाओं में काम

सबसे महत्त्वपूर्ण, सबसे खतरनाक कदम जो गदरी क्रांतिकारियों ने उठाया वह था सेनाओं को गदर के लिए भड़काना और उनके दिल में अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध घृणा पैदा करना।

गदरी क्रांतिकारियों के मुख्य नारे ये थे—

"...जाओ, फौजों को जगाओ ! तलवार के धनी सोए क्यों पड़े हो?...तुम गोरों के स्थान पर जाकर लड़ते हो...दूसरे देशों पर आक्रमण करते हो...तुम अपने देश को अपने चार्ज में क्यों नहीं ले लेते ?

...गदर पार्टी ने भारत को स्वतंत्र कराने की जिम्मेदारी उठाई है। तुम्हारे पास सिपाहियों की काफी बड़ी संख्या है, तुम्हारे भाई फौज में हैं। बहुत से रिजर्व और पेंशनर सिपाही गाँवों में रहते हैं।

...अगर तुम्हें सेना या पुलिस के आदमी मिलें, उनमें अपने उद्देश्य का प्रचार करो।

...ऐ फौज के सिपाहियो ! क्या तुम्हारा भारतीयों से कोई सम्बन्ध नहीं ?...क्या तुमने अंग्रेजों के पराधीन बने रहने की सौगन्ध उठा रखी है ?...क्या तुम्हारी जिन्दगी का मूल्य सिर्फ नौ रुपए है ?...तुम एक क्षण में अंग्रेजों का बीज नाश कर सकते हो...ऐ बहादुरो, तुम कितनी देर गुलाम रहोगे ? उठो, अपने आपको कुर्बान कर दो।"

अमेरिका से चलकर गदरी क्रांतिकारियों का रास्ते में जहाँ भी पड़ाव पड़ा, वे फौजों में विद्रोह का प्रचार करते आए।

शंघाई

श्री लहनासिंह और सरदारासिंह को शंघाई की फौजों में विद्रोह के लिए नियुक्त किया गया।

हांगकांग

जब 'कोरिया' और 'मशीमा मारू' जहाज हांगकांग आए, तो गुरुद्वारे में आठ दिन लगातार बगावत का प्रचार होता रहा,

जिनमें फौजी सिपाही भी शामिल होते रहें। खतरा इतना बढ़ गया कि छब्बीसवीं पलटन की लाइनों को बदलने के लिए अधिकारियों को मजबूर होना पड़ा।

हांगकांग के सिख सिपाहियों ने सहायता का विश्वास दिलाया। पर वे गदर करने के पक्ष में नहीं थे, क्योंकि देशी अफसर पूरे तौर पर अंग्रेजों के स्वामिभक्त थे।

सिंगापुर

गदरी क्रांतिकारियों की प्रेरणा से सिंगापुर की एक देशी पलटन ने बाद में सिंगापुर का प्रसिद्ध गदर किया। इसका उल्लेख एक अलग अध्याय में किया गया है।

पीनांग

जब 'तोशा मारू' और 'मशीमा मारू' जहाज पीनांग में आए, तो उन्हें वहाँ कुछ दिन रोक लिया गया। क्रांतिकारियों का ख्याल था कि भारत में गदर आरम्भ हो चुका है, इसलिए उन्होंने पीनांग में ही गदर करने का फैसला किया। कुछ क्रांतिकारी फौजियों से मिले। उन्होंने बताया कि फौजी इसलिए सख्त नाराज हैं कि उन्हें कुछ जर्मन कैदियों के पहरे की ड्यूटी पर नहीं लगाया गया। वे साथ मिलने के लिए तैयार हैं। यह फैसला किया गया कि अगर अगले दिन जहाज न चलने दिए जाएं तो उनकी सहायता से पीनांग शहर को लूट लिया जाए। पर अगले दिन जहाज चल दिए।

रंगून

फौजियों को भड़काने की कोशिश की गई। पर एक सूबेदार के सख्ती के व्यवहार से सफलता न मिली।

इसके अतिरिक्त भारत में भी फौजों में काम करने की सरगर्मियाँ बढ़ा दी गईं ।

जालन्धर

जनवरी के अन्त में हिरदेराम को वहाँ की फौजों के इरादे का पता लगाने के लिए जालन्धर भेजा गया । उसने थोड़े दिनों के बाद वापस लौटकर बताया कि डोगरे तथा दूसरे सिपाही शामिल होने के लिए तैयार हैं ।

जंकबाबाद, बन्नू, कोहाट

श्री हीरासिंह 'चर्ड' ने जंकबाबाद की फौजों को भड़काने की कोशिश की और दिसम्बर में श्री प्यारासिंह सेनाओं में विद्रोह फैलाने के लिए कोहाट गए ।

इसके अलावा हरनामसिंह और संत गुलाबसिंह को बन्नू भेजा गया । उन्होंने आकर रिपोर्ट दी कि पैंतीसवीं सिख पलटन ने उस समय शामिल होने का वचन दिया है, जब कि उसका तबादला रावलपिण्डी हो जाएगा ।

रावलपिण्डी, जेहलम और होतीमरदान

मूलासिंह ने श्री निधानसिंह को रावलपिण्डी भेजा । ८ या ९ फरवरी के करीब रावलपिण्डी से यह खबर आई कि जेहलम, रावलपिण्डी, होतीमरदान और पेशावर की सेनाएँ विद्रोह करने के लिए तैयार हैं । वे निश्चित तारीख की इन्तजार कर रही हैं ।

१५ फरवरी को श्री निधानसिंह चुग्घा और डा० मथुरासिंह जेहलम, रावलपिण्डी और सीमाप्रान्त इसीलिए भेजे गए कि फौजों को गदर की निश्चित तारीख २१ फरवरी के सम्बन्ध में सूचना दे सकें ।

१८ फरवरी को डा० मथुरासिंह और श्री हरनामसिंह

बदल गई तारीख के बारे में बताने जेहलम गए और श्री परमानन्द (यू० पी०) को इसी उद्देश्य के लिए पेशावर भेजा गया।

कपूरथला

श्री जवन्दसिंह को कपूरथला में यह पता लगाने के लिए भेजा गया कि रिसाले के कितने आदमी गदर में शामिल होंगे।

श्री रासबिहारी ने श्री पिंगले को १५ फरवरी के दिन मेरठ और अम्बाला की ओर भेजा। यू० पी० का अधिक काम लुधियाना के एक विद्यार्थी सुच्चासिंह से लिया गया।

मेरठ

२ फरवरी के करीब सुच्चासिंह और करतारसिंह सराबा मेरठ गए, जहाँ उन्हें श्री पिंगले भी आकर मिल गए। मेरठ में उन्हें पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई।

आगरा

४ फरवरी को वे तीनों मेरठ से आगरा आए। वहाँ कोई सिख पलटन न होने के कारण एक प्यादा पलटन की बारकों में गए। फौजी सिपाहियों ने पहले तो उत्साह दिखाया, पर बाद में डरकर अपने वचन से फिर गए।

इलाहाबाद

६ फरवरी को वे इलाहाबाद गए, जहाँ रिसाले और पैदल सेना दोनों से मिले। रिसाले में सफलता नहीं मिली, पर पैदल फौज के एक हवलदार का सहयोग मिल गया।

बनारस

उसी दिन बनारस गए। दानापुर में तैनात एक सिख पलटन से मिलने की बात सोची गई। श्री करतारसिंह अपने एक बंगाली

मित्र को लेकर छावनी में गए। वहाँ से अपने साथ एक राजपूत को ले आए। उसे आगरा छावनी राजपूत रेजीमैण्ट में प्रचार के लिए भेज दिया गया।

फैजाबाद और लखनऊ

बनारस से सुच्चासिंह को फैजाबाद भेजा गया। फैजाबाद में एक हवलदार सहयोग देने के लिए मान गया। फैजाबाद से होकर सुच्चासिंह, श्री करतारसिंह और पिंगले से लखनऊ में आ मिले। श्री करतारसिंह लखनऊ में सोलहवें रिसाले की बारकों में गए। पता चला कि रिसाला लड़ाई को जा चुका है। १० फरवरी को सुच्चासिंह एक पैदल रेजीमैण्ट के क्वार्टर गार्द में गया, पर वहाँ से निकाल दिया गया।

११ फरवरी को सुच्चासिंह ने श्री रासबिहारी बोस को आकर रिपोर्ट दी, तत्पश्चात् १५ फरवरी को अम्बाला छावनी में भेजा गया, जहाँ उसे एक फौजी क्लर्क का सहयोग मिला।

पंजाब में मीयाँमीर और फिरोजपुर छावनियों में फौजियों के बीच जो काम हुआ, उसका एक विशेष महत्त्व है, क्योंकि होने वाले गदर की यही दो छावनियाँ केन्द्र बनने वाली थीं। पिछले पृष्ठों में हम मीयाँमीर मैगजीन लूटने और विद्रोह की योजना के असफल हो जाने का जिक्र कर आए हैं।

श्री रासबिहारी बोस के पंजाब आने के बाद भी मीयाँमीर के तेईसवें रिसाले के साथ बाकायदा मेल-मिलाप जारी रखा गया। शंघाई से आए बलवन्तसिंह इसी अभिप्राय को लेकर तेईसवें रिसाले में भरती हुए थे। मूलासिंह स्वयं भी मीयाँमीर गया। उसने श्री रासबिहारी बोस के आगे एक सुझाव रखा कि मीयाँमीर की मुस्लिम पलटनों में काम करने के लिए मुसलमान-

क्रांतिकारियों को भेजा गया।

मीयाँमीर की पलटनों में हुए काम की रिपोर्ट सुनकर श्री रासबिहारी बोस ने सारे भारत में गदर करने की २१ फरवरी तारीख निश्चित कर दी। मीयाँमीर के बाद गदरी क्रांतिकारियों का दूसरा केन्द्र फिरोजपुर बनना था। फिरोजपुर छब्बीसवीं पलटन का डिपो भी था। यह पलटन उन दिनों हांगकांग में थी जबकि वहाँ से क्रान्तिकारियों के जहाज गुजरे थे। हांगकांग के गुरुद्वारे में क्रांतिकारियों के भाषण होते थे। जनरल के रोकने पर भी सिपाही गुरुद्वारे में जाकर भाषण सुनते थे। इनमें से कई सिपाहियों को बाकी पलटन से अलग रखने के ख्याल से फिरोजपुर वापस भेज दिया गया था।

फौजों में घुसकर काम करने के सम्बन्ध में श्री सान्याल ने लिखा है कि हमने बाकी सब ओर से अपना ध्यान हटाकर फौजियों में विद्रोह का जोश भरने में लगा दिया। यू० पी०, बिहार और बंगाल की अलग-अलग छावनियों में हमारे आदमियों का आवागमन शुरू हो गया। श्री सान्याल ने यह दावा किया था कि उत्तर-पश्चिम किनारे के बन्नू से लेकर दानापुर तक कोई भी छावनी खाली न रहने दी गई। लगभग सभी पलटनों ने यह वचन दिया था कि तुम लोग काम शुरू करो। गदर आरम्भ हो जाने पर वे अवश्य ही क्रांतिकारियों का साथ देंगे।

जिस निर्भीकता और लगन से श्री करतारसिंह सराबा और सुच्चासिंह ने फौजों में काम किया, उसे देखकर उस समय के इन दो सबसे छोटे क्रांतिकारियों के आगे नत-मस्तक हुए बिना नहीं रहा जाता।

१५

गदर की असफलता

गदरी क्रांतिकारियों ने यह योजना कभी नहीं बनाई कि सारी छावनियों में एक निश्चित दिन गदर करवा दिया जाए, क्योंकि ऐसी योजना का प्रबन्ध करना कोई आसान बात नहीं थी। कुछ फौजों ने तो आश्वासन ही यह दिया था कि गदर आरम्भ होने पर वे दल के साथ आकर मिल जाएँगी। पंजाब पुलिस के अनुसार श्री रासबिहारी बोस ने जल्दबाजी से काम लिया। उन्होंने देखा कि विदेशों से लौटे कुछ क्रांतिकारियों ने जमीन तैयार कर ली थी और उन्होंने कई ग्रामीणों तथा फौजी दस्तों को क्रांति के पक्ष में कर लिया था। इस सम्बन्धी तसल्ली करके उन्होंने लाला हरदयाल की तरह काम करना आरम्भ कर दिया था। उनके छावनियों में भेजे आदमी अब अपनी उद्देश्य-सिद्धि के लिए नए रंगरूट मिलाने का प्रयत्न नहीं करते थे, बल्कि वे घोषणा करते थे कि थोड़े दिनों के बाद निश्चित तारीख पर गदर आरम्भ होगा और उसमें शामिल होने के लिए सबको तैयार रहना चाहिए। इस तरह उन फौजियों को सोचने का समय नहीं दिया जाता था।

यह जरूरी. नहीं कि पुलिस के इस कथन को हम सत्य

मानकर चलें। पर एक बात माननी पड़ेगी कि फौजों में काम के लिए यह बहुत कम समय था जबकि देश में इतनी बड़ी क्रांति होने जा रही थी।

जैसे-जैसे गदर की निश्चित तारीख निकट आती जा रही थी छावनियों में तेजी से सरगर्मियाँ आरम्भ हुईं। श्री बोस के पंजाब आने से पहले मूलासिंह ने श्री सान्याल को बताया था कि गदर आरम्भ होने पर सारी पलटनों ने क्रांतिकारियों के साथ मिल जाने का वचन दिया है।

गदर की तारीख निश्चित होने पर अलग-अलग छावनियों में सूचना देने के लिए क्रांतिकारियों को भेजा गया। मीयाँमीर छावनी के गदर की खबर सुनकर सारे देश की सेनाओं को गदर आरम्भ करना था। ग्रामीण लोगों के जत्थों को लाहौर में शामिल होने के लिए इकट्ठे करने का प्रबन्ध किया गया। जेहलम, रावलपिण्डी और सीमाप्रान्त में सेनाओं को सूचना देने और तैयार करने के लिए श्री निधानसिंह और डा० मथुरासिंह को भेजा गया। श्री गुरुमुखसिंह 'ललतों' और श्री हरनामसिंह (जेहलम) को रावलपिण्डी, जेहलम और होतीमरदान की पलटनों को तैयार करने के लिए भेजा गया। लाहौर छावनी पर आक्रमण करने तथा लाहौर और अमृतसर जिलों से आदमी लाने के लिए क्रांतिकारियों को नियुक्त किया गया। अम्बाला और यू० पी० का प्रबन्ध श्री रासबिहारी बोस ने स्वयं अपने जिम्मे लिया था। संत बिसाखासिंह को दिल्ली जाना था। मीयाँमीर के अलावा गदर का आरम्भ फिरोजपुर छावनी से होना था इसलिए इस अहम् केन्द्र का प्रबन्ध श्री करतारसिंह सराबा के सुपुर्द था। मीयाँमीर

छावनी की तरह फिरोजपुर छावनी में भी गदर में फौजियों के अलावा दूसरे लोगों को मिलाने का प्रबन्ध किया गया। १४ फरवरी को मनीलाल तथा श्री विनायकराव कापले बनारस से १८ बमों का मसाला लेकर लाहौर आए। श्री बोस ने मनीलाल को गदर की निश्चित तारीख के सम्बन्ध में बताया और इस तरह बनारस के क्रांतिकारियों को पता चल गया।

सेनाओं को सूचना देने तथा तैयार करने के अतिरिक्त बम बनाए गए। हथियार जमा किए गए। झण्डे बनाए गए। युद्ध का घोषणा-पत्र लिखा गया। टेलीग्राम की तारों और रेलों को उड़ाने के लिए हथियार जुटाए गए और २१ फरवरी के गदर के लिए जितना शीघ्र हो सकता था, तैयारी की गई। मीयाँमीर की छावनी में ६-७ क्रांतिकारियों की एक टोली को बारकों में उस समय ले जाया जा रहा था, जिस समय फौजियों की हाजिरी लगती है। क्रांतिकारियों की इस टोली को फौजियों की तलवारें कब्जे में लेनी थीं। एक अन्य गाईड ने क्रांतिकारियों की एक दूसरी टोली को रिजर्व फौजियों की क्वार्टर गार्द में ले जाना था। वहाँ मैगजीन तोड़कर रायफलें तथा अन्य हथियार कब्जे में लेने थे। तत्पश्चात् रिसाले के सवारों को आकर साथ मिल जाना था और फौजियों तथा क्रांतिकारियों ने मिलकर यूरोपियनों और छावनी के गोरा तोपखाने के आदमियों को कत्ल कर देना था। इसीलिए फिरोजपुर छावनी में छब्बीसवीं पंजाबी पलटन के सिपाहियों ने वहाँ इकट्ठे हुए क्रांतिकारियों को गाईड करना था। एक पार्टी को डिपो मैगजीन पर आक्रमण करके इसे खोल लेना था और दूसरी टोलियों को पलटनों की

लाइनों पर गोरे सिपाही कत्ल करने थे। लेकिन क्रांतिकारियों की इन सारी तैयारियों पर पानी फिर गया, जब कि पुलिस का कोई भेदिया क्रांतिकारियों की गतिविधियों का पूरा पता देता रहा।

चब्बे गाँव में क्रांतिकारी अपने साथ अमृतसर के एक बढ़ई कालासिंह को पेटियाँ खोलने के लिए ले गए थे, जिसे गाँव वालों ने डाके के मौके पर पकड़ लिया। कालासिंह ने सुरैणसिंह गिलवाली के सम्बन्ध में बताया। सुरैणसिंह खून से लथपथ कपड़ों-सहित पकड़ा गया। उसने पुलिस को बता दिया कि डाके में मूलासिंह और प्रेमसिंह का हाथ है। लियाकत हयात खान डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस को इससे सन्देह हो गया कि चब्बे का डाका अमेरिका से लौटे आदमियों ने डलवाया है। लियाकत हयात खान ने ७ फरवरी को बेलासिंह जेलदार को बुलाया। उसने एक ऐसा आदमी ढूँढने के लिए कहा जो विदेशों से लौटे भारतीयों के साथ ताल-मेल पैदा कर सके।

जेलदार बेलासिंह ९ फरवरी को किसी कृपालसिंह को लियाकत हयात खान के पास ले गया, जिसने कृपालसिंह को भेदिए के तौर पर नौकर रख लिया। कृपालसिंह के एक अति नजदीकी रिश्तेदार श्री बलवन्तसिंह विदेश से आकर क्रांति का प्रचार करने के लिए तेईसवें रिसाले में भरती हो गए थे। १० फरवरी को कृपालसिंह ने पुलिस को सूचित किया कि मूलासिंह अमृतसर में पंजाबसिंह के नाम से रहता है। कृपालसिंह अपने रिश्तेदार बलवन्तसिंह को साथ लेकर मूलासिंह से मिलने अमृतसर आया। वहाँ से पता चला कि मूलासिंह लाहौर गया

हुआ है। दोनों उसके 'पीछे लाहौर गए। पर इस दौरान में मूलासिंह अमृतसर लौट आया था। कृपालसिंह के क्रांतिकारियों के साथ मिलने की इच्छा प्रकट करने पर अमरसिंह राजपूत के साथ उसकी मोची दरवाजे के सामने जान-पहचान कराई गई। अमरसिंह, कृपालसिंह और श्री बलवन्तसिंह, मूलासिंह से मिलने अमृतसर आए। पर मूलासिंह तब तक गिरफ्तार हो चुका था। इस पर तीनों पहले रसूलदारियों की हवेली, तत्पश्चात् विरपाली धर्मशाला में गए, जहाँ कई क्रांतिकारी मौजूद थे। श्री निधानसिंह चुग्घा शंघाई से ही कृपालसिंह को जानते थे। श्री निधानसिंह की सिफारिश पर १३ फरवरी को न सिर्फ कृपालसिंह प्रमुख क्रांतिकारियों का विश्वासपात्र बना लिया गया, बल्कि गिरफ्तार हो चुके मूलासिंह के स्थान पर नेता भी चुन लिया गया।

१२ फरवरी को गदर की तारीख निश्चित की गई थी, जिसका कृपालसिंह को पता चल जाना जरूरी था। कृपालसिंह ने गदर की निश्चित तारीख और तैयारी के सम्बन्ध में पुलिस को पता दे दिया। १५ फरवरी को कृपालसिंह लाहौर गया, जहाँ पर उसने देखा कि मोची दरवाजे वाले घर में श्री करतारसिंह सराबा, निधानसिंह, डा० मथुरासिंह, परमानन्द (यू० पी०), श्री पिंगले और श्री रासबिहारी बोस-सहित सारे क्रांतिकारी जमा थे। कृपालसिंह ने मौका देखकर अमृतसर पुलिस को सूचना दे दी। तार लेट हो गई। जितनी देर में पुलिस अमृतसर से लाहौर आई, क्रांतिकारियों की सभा समाप्त हो चुकी थी। कृपालसिंह ने अमृतसर से आई पुलिस को लाहौर स्टेशन पर मिलकर बता

दिया कि मौका हाथ से निकल चुका है।

श्री निधानसिंह चुग्घा की सिफारिश से कृपालसिंह को क्रांतिकारियों में शामिल किया गया था, लेकिन सबसे पहले सन्देह भी उस पर निधानसिंह को हुआ। कृपालसिंह की ड्यूटी मीयाँमीर छावनी जाने की लगाई गई थी, पर निधानसिंह चुग्घा ने उसे लाहौर के रेलवे प्लेटफार्म पर घूमते हुए पाया। दूसरी बात यह थी कि वह सवाल बहुत ज्यादा पूछा करता था। उसकी निगरानी की जाने लगी। परिणामस्वरूप उसका पुलिस के साथ ताल-मेल साबित हो गया। इधर गदर का झण्डा उठाने में सिर्फ चार दिन रह गए थे।

कृपालसिंह सम्बन्धी बातें पूरी तरह से पता लग जाने पर क्रांतिकारियों ने १६ फरवरी को फैसला करके गदर की तारीख २१ फरवरी की जगह १९ फरवरी कर दी। अलग-अलग छावनियों में नई तारीख की सूचना देने के लिए आदमी भेजे गए। लेकिन परिस्थितियाँ तेजी से गदरी क्रांतिकारियों के विरुद्ध जा रही थीं। कृपालसिह १६ फरवरी को लियाकत हयात खान को बता आया कि लाहौर के मोची दरवाजे वाले मकान में क्रांतिकारियों की १८ फरवरी को सभा होगी। उस पर सन्देह होने से पहले क्रांतिकारियों ने कृपालसिंह को यह काम सौंपा था कि वह ददेहर गाँव के गदरियों को लाहौर पहुँचने के लिए कह आए। कृपालसिंह ने उधर पुलिस के साथ यह तय कर रखा था कि वह ददेहर से होकर १८ फरवरी को लाहौर पहुँचेगा। पर उसे लाहौर पहुँचने में देर हो गई। वह १८ फरवरी की बजाय १९ फरवरी की सवेरे लाहौर आया। पुलिस

से मिलकर वह मोची दरवाजे वाले मकान में गया। पुलिस जरा दूरी पर छिपकर बैठ गई।

जब कृपालसिंह मोची दरवाजे वाले मकान में गया, तो क्रांतिकारियों ने उसकी कड़ी देख-रेख शुरू कर दी। क्रांतिकारियों का ख्याल था कि कृपालसिंह को शायद गदर की निश्चित तारीख १६ फरवरी की कोई जानकारी नहीं, इसलिए पुलिस और सरकार को भी इसका पता नहीं चल सकेगा। पर सरकार को इस तारीख का पता चल ही गया। जिस समय मोची दरवाजे में क्रांतिकारी जमा हो रहे थे, एक क्रांतिकारी ने कृपालसिंह को आकर रिपोर्ट दी कि वह मीयाँमीर छावनी में १६ फरवरी के सम्बन्ध में बता आया है। उस क्रांतिकारी को मालूम नहीं था कि कृपालसिंह भेदिया है। इस तरह १६ तारीख का कृपालसिंह को पता चल गया।

दोपहर के समय जब भोजन करने क्रांतिकारी इधर-उधर चले गए, तो कृपालसिंह ने मकान से बाहर जाना चाहा। इसमें उसे सफलता भी मिली। बाहर निकलते ही उसे एक सी० आई० डी० का आदमी मिल गया। कृपालसिंह ने उसे गदर की नई तारीख की सूचना दे दी। जो क्रांतिकारी उसका पीछा कर रहे थे, उन्हें इस बात का पता चल गया। मकान में वापस आकर गदरी कृपालसिंह को जान से मार देने की बात सोचने लगे, पर कृपालसिंह पेशाब करने का बहाना करके मकान की छत पर चढ़ गया। उस समय गदरियों के प्रमुख नेता मकान में मौजूद नहीं थे, पर क्योंकि कृपालसिंह पर जान की बनी हुई थी—उसने पुलिस को जल्दी से संकेत किया। पुलिस ने छापा मारकर वहाँ

मौजूद क्रांतिकारियों को पकड़ लिया। इस तरह गदरी क्रांतिकारियों का केन्द्र टूट गया। गदर की १६ फरवरी तारीख का पता चल जाने से सरकार चौकन्नी हो गई। उसने पहले से ही पेशबन्दी कर ली। गदर की सारी योजना असफल रह गई।

मोची दरवाजे के मकान पर शाम के ४ बजे पुलिस ने छापा मारा था। वहाँ से जो सामान मिला, उसकी जाँच करने में एक-दो घण्टे का समय लग गया। शाम के ६ बजे सरकार ने उन छावनियों में तार द्वारा सूचना दे दी, जहाँ गदर के फूट पड़ने का अन्देशा था। इस बार भी ठीक समय पर सरकार को पता चला, क्योंकि अलग-अलग केन्द्रों पर क्रांतिकारी जत्थे जमा होने शुरू हो गए थे। पर जब उन्हें पता चला कि सरकार को गदर की योजना का पता चल चुका है, तो वे बिखरने शुरू हो गए। फिरोजपुर छावनी के समीप ६० आदमियों का एक जत्था संत रणधीरसिंह के नेतृत्व में आया। फिरोजपुर छावनी के स्टेशन तथा छावनी में गोरी फौजें गश्त लगा रही थीं। पर संत रणधीरसिंह का जत्था हारमोनियम बाजे के साथ कीर्तन करता हुआ गुजर गया। गोरी फौजों ने उसे एक साधारण गाने वाली टोली समझकर जाने दिया। जिन सिपाहियों को मैगजीन की चाबियाँ लाकर देनी थीं और क्रांतिकारियों का मार्गदर्शक बनना था, उन्हें उसी दिन फौज में से निकालकर गाड़ी पर चढ़ा दिया गया। लेकिन श्री करतारसिंह की प्रेरणा से वे सिपाही शाम को क्रांतिकारियों से आ मिले थे। क्रान्तिकारियों ने उन सिपाहियों को छावनी में फौजों को तैयार करने तथा पता लगाने के लिए भेजा। पर वे सिपाही पकड़े गए। काफी समय तक इन्तजार करने के बाद श्री करतारसिंह दो अन्य क्रांतिकारियों

को साथ लेकर फौजियों की लाइनों में गए। मैगजीन पर गोरे फौजियों का पहरा था और बारकों में भी इतनी कड़ी निगाह रखे जाने के बावजूद श्री करतारसिंह एक पलटन के हवलदार से मिले। हवलदार ने कहा कि कुछ समय और देखो। इसके बिना कोई चारा नहीं है। अगर ऐसी परिस्थिति में कुछ किया गया तो हम सब मारे जाएँगे। श्री करतारसिंह की समझ में बात आ गई कि अब कुछ नहीं हो सकता। वह खाली हाथ वापस लौट आए। दूसरे लोग भी अपने घरों को चले गए।

भाई परमानन्द ने लिखा है कि फौजियों को विद्रोह के लिए प्रेरणा देने की कोशिश और सौ-डेढ़ सौ क्रांतिकारियों द्वारा मीयाँमीर में जमा होकर गदर करने की योजना—ये सब बातें बच्चों का खेल थीं। बुरी तरह असफलता का मुँह देखना पड़ा, क्योंकि दूसरी ओर फौजियों में से क्रांतिकारियों के साथ कोई भी आकर न मिला। इसी तरह के विचार कलकत्ता के एक प्रसिद्ध हिन्दी मासिक पत्र ने प्रकट किए, जिसका जवाब देते हुए सर विलियम विन्सेंट ने भारत की विधान कौंसल में कहा—

"मैंने कलकत्ता के एक पत्र में एक लेख पढ़ा है, जिसमें जर्मन-भारत षड्यन्त्र को एक मजाक कहा गया है......यह मजाक नहीं है। मेरे ख्याल में १९१५ की सिंगापुर की भयंकर घटनाएँ, भारत और बर्मा के षड्यन्त्र केस, सरकार के विरुद्ध इन भेदभरे षड्यन्त्र की गोपनीयता के सम्बन्ध में हर एक सच्चाई को जानने के लिए काफी सबूत पेश करते हैं।"

भाई परमानन्द का विचार सही नहीं है कि गदर की योजना बच्चों का खेल था। अगर कृपालसिंह द्वारा पुलिस को भेद न

दे दिया जाता तो परिस्थिति कुछ और होती। एक बार धधक उठी आग पर काबू पाना अंग्रेज सरकार के वश की बात नहीं थी। बनारस के क्रांतिकारियों को २१ फरवरी की बजाय १६ तारीख के बदले जाने का पता ही नहीं चला। वे २१ फरवरी की शाम को परेड ग्राउण्ड में बैठे गदर की इन्तजार करते रहे।

पंजाब-भर में गिरफ्तारियों का ताँता लग गया। गोरा फौज, जहाँ भी सन्देह होता, उसी स्थान के गिर्द घेरा डालकर संदिग्ध व्यक्तियों को गिरफ्तार करके ले जाती। रावलपिण्डी की एक पंजाबी पलटन डिसमिस कर दी गई।

इस तरह सफलता के निकट पहुँच गई गदर पार्टी की योजना विफल हो गई। गिरफ्तार लोगों में से कई मुखबिर बन गए। और इस तरह पुलिस सभी प्रमुख कार्यकर्त्ताओं को गिरफ्तार करने में सफल हो गई। गदर पार्टी के प्रमुख नेताओं में से भारत में गदर आन्दोलन के संचालक श्री रासबिहारी बोस गिरफ्तारी से बच गए।

फिरोजपुर छावनी की असफलता के बाद श्री करतारसिंह सराबा लाहौर पहुँचकर सीधे श्री रासबिहारी बोस के मकान पर गए। उस समय श्री बोस उदासी की अवस्था में खाट पर लेटे हुए थे। श्री करतारसिंह भी औंधे मुँह साथ वाली खाट पर लेट गए। थकान से टूट रहा उनका शरीर मुर्दा हो गया था। दोनों खामोश थे। उनकी इस उदासी और खामोशी में दुःख तथा निराशा की एक टीस छिपी हुई थी।

गदर पार्टी के जो नेता गिरफ्तारी से किसी तरह बच गए उन्हें अपनी रक्षा की चिन्ता होने लगी। श्री रासबिहारी बोस को

एक ताँगे पर बैठाकर आधी रात के समय श्री करतारसिंह लाहौर स्टेशन पर लाए और उन्हें बनारस जाने वाली गाड़ी पर सवार कराकर लौट आए।

श्री रासबिहारी बोस ने बनारस के अपने साथियों को कलकत्ता की एक मुलाकात में बताया कि वह दो वर्ष के लिए किसी पहाड़ पर जा रहे हैं। लेकिन उसके पश्चात् वह कहीं विदेशों की ओर निकल गए।

१६

असफलता के बाद

१९ फरवरी की असफलता ने गदर पार्टी की योजना को मिट्टी में मिला दिया। कुछेक को छोड़कर लगभग सभी गदरी क्रान्तिकारी गिरफ्तार कर लिए गए। १९ फरवरी के बाद जो इक्का-दुक्का घटनाएँ हुईं उनका श्रेय गिरफ्तारी से बच गए क्रान्तिकारियों को था। १९ फरवरी के बाद गदरी क्रान्तिकारियों का कोई एक केन्द्र भी न रहा।

तेईसवाँ रिसाला

१९ फरवरी की असफलता के बावजूद रिसाले में विद्रोह की आग सुलगती रही। यह सब श्री प्रेमसिंह की क्रान्तिकारी लगन के कारण चलता रहा। श्री प्रेमसिंह ने लगतार रिसाले से सम्पर्क बनाए रखा। रिसाले के नौजवानों की कई बैठकें होती रहीं। कृपालसिंह भेदिए को मार देने और भोजन के समय इकट्ठे हुए अफ़सरों को बम से उड़ा देने की योजनाएँ बनती रहीं। कोट लखपत की रेलवे लाइन के पास एक बम चलाकर देखा गया। तत्पश्चात् रिसाले के अफसरों को मारने के लिए दो और बम बनाए गए।

कुछ दिन बाद रिसाले को लड़ाई में जाने का आदेश आ गया। रिसाले के कुछ आदमी नौगौंडा डिपू भेजे गए। उन दो

बमों को अलग-अलग दो पेटियों में बन्द कर दिया गया। एक पेटी मालगाड़ी द्वारा भेजी गई। जब हरपालपुर स्टेशन पर सामान उतारा जा रहा था, तो पेटी में बम फट गया। कुछ सिपाहियों को सन्देह में पकड़ लिया गया। उन्होंने सारा भेद खोल दिया। तेईसवें रिसाले के कई आदमियों का डिगबोई में कोर्ट मार्शल किया गया। १८ आदमियों को फाँसी की सजा दी गई। इनमें से १२ को तो फाँसी पर लटका दिया गया। शेष की सजा आजन्म कारावास में बदल दी गई।

बल्ले के पुल की घटना

५ जून, १९१५ को कई क्रान्तिकारियों ने कपूरथला में एक सभा की। इस सभा में फैसला किया गया कि कपूरथला का मैगजीन लूटकर लाहौर और मुलतान की जेलों में बन्द अपने क्रान्तिकारी साथियों को छुड़ा लिया जाए। हथियार जुटाकर १२ जून को मैगजीन पर धावा बोला जाए। हथियारों के लिए अमृतसर के बल्ला गाँव के पास रेलवे लाईन के पुल की पिकट पर धावा बोलने का फैसला किया गया।

११ जून को बल्ले रेलवे पुल पर रात के १-२ बजे के बीच क्रान्तिकारियों ने फौजी पिकट पर धावा बोला। दो मारे गए। क्रान्तिकारी हथियार छीनने में सफल हो गए। तत्पश्चात् श्री बचनसिंह और रूड़सिंह सीधे कपूरथला आ गए। बाकी क्रान्तिकारी फौजियों से छीन ली गई रायफलें लेकर दूसरे रास्ते से कपूरथला को चल दिए। लेकिन पुलिस और लोगों की भीड़ ने उनका पीछा किया। एक मल्लाह से नौका छीनकर क्रान्तिकारी व्यास नदी पार करके कपूरथला रियासत में घुस गए। रास्ते में नौका का मल्लाह

और एक अन्य पीछा करने वाला क्रान्तिकारियों के हाथों मारा गया। पर क्रान्तिकारियों का पीछा फिर भी होता रहा। पाँच क्रान्तिकारी पकड़ लिए गए, जिन्हें बाद में फाँसी दे दी गई।

बल्ले की घटना के बाद दूसरे क्रान्तिकारियों से अलग पड़ गए बचनसिंह और रूड़सिंह १२ जून को कपूरथला पहुँचे। वहाँ उन्हें और क्रान्तिकारी मिल गए। उन्हें पता चला कि अफसरों को ५ जून की सभा का पता चल चुका है और कुछ क्रान्तिकारी इस सम्बन्ध में पकड़े भी जा चुके हैं, इसलिए कपूरथला मैगजीन पर धावा बोलने का ख्याल छोड़ दिया गया। कुछ लोगों को सन्देह हो जाने के कारण ४ क्रान्तिकारी एक गाँव के गुरुद्वारे में पकड़ लिए गए। बचनसिंह मुखबिर बन गया। उसने पुलिस को सब-कुछ बता दिया।

श्री पिंगले की गिरफ्तारी

मेरठ छावनी के १२ नं० रिसाले को २१ फरवरी के निश्चित गदर के लिए पूर्णतः तैयार किया जा चुका था। १९ फरवरी के बाद जमादार नादिरखान ने रिसाले के अफसरों के साथ मशविरा करके श्री पिंगले को फँसाने के लिए जाल फेंका। जमादार नादिरखान श्री पिंगले के साथ बनारस गया। वहाँ वे एक बंगाली से मिले। बंगाली ने बताया कि मेरठ के लिए तीन सौ बम तैयार किए गए, पर उनमें से १० बाकी रह गए हैं। शेष बाँटे जा चुके हैं। जो १० बम बच गए थे, वे एक टीन के बक्से में बन्द करके श्री पिंगले मेरठ लाए। जमादार नादिरखान भी उनके साथ आया। वह अफसरों के साथ मिला हुआ था। मेरठ छावनी में पहुँचकर जमादार नादिरखान ने बमों-सहित श्री पिंगले को

पकड़वा दिया।

श्री करतारसिंह सराबा की गिरफ्तारी

श्री रासबिहारी बोस को बनारस के लिए गाड़ी में बैठाकर श्री करतारसिंह सराबा और हरनामसिंह 'टुण्डीलाट' उस रात एक मकान में आकर रहे। वहीं उन्हें श्री जगतसिंह आ मिले जिन्हें ददेहर के क्रान्तिकारियों को भूमिगत चले जाने के लिए भेजा गया था। फिर लाहौर से तीनों लायलपुर गए। रिश्तेदारों से पैसे लेकर वहाँ से पेशावर पहुँच गए। पेशावर में पठानों का वेश धारण कर लिया और कबाइली इलाके में चले गए। वहाँ जाकर अचानक एक विचार ने जोर मारा कि इस तरह बुजदिलों की भाँति देश से भागना ठीक नहीं है। हथियार जुटाकर गिरफ्तार हुए साथियों को छुड़ाना चाहिए। वापस लौट आए और हथियारों की प्राप्ति के लिए चक नं० ५ सरगोधा पहुँचे, जहाँ बाईसवें रिसाले के घोड़ों के लिए फार्म था। गण्डासिंह रिसालदार ने २ मार्च को तीनों को वहीं पकड़वा दिया।

इक्का-दुक्का घटनाएँ

श्री अर्जुनसिंह और अन्य दो क्रान्तिकारी २० फरवरी को फिरोजपुर से लाहौर यह पता लगाने गए कि १९ फरवरी को कुछ हुआ या नहीं ? जब वे अनारकली बाजार से गुजर रहे थे तो हैड कांस्टेबल मुखूमअली शाह और एक छोटे थानेदार ने उन्हें सन्देह में रोक लिया और तलाशी लेनी चाही। इस पर हैड कांस्टेबल को वहीं गोली से मार दिया गया और छोटा थानेदार भी घायल हुआ। दूसरे साथी तो बचकर निकल जाने में सफल हुए, पर श्री अर्जुनसिंह को एक हलवाई ने पकड़कर

पुलिस के हवाले कर दिया ।

२५ अप्रैल, १९१५ को चन्द्रासिंह जेलदार कत्ल किया गया। इसने श्री प्यारासिंह लङ्गोरी को पकड़वाया था। इसी तरह एक अन्य सरकार के पिट्ठू सरदार बहादुर इच्छरासिंह को जगतपुर गाँव में कत्ल किया गया ।

मण्डी सुकेत का षड्यन्त्र

फिरोज शहर की घटना के बाद श्री सुरजनसिंह मण्डी सुकेत की तरफ निकल गए थे। वहीं पर उनकी जान-पहचान एक सिद्धू जाट से हो गई। श्री सुरजनसिंह ने बताया कि अमेरिका से कैसे गदर पार्टी के क्रान्तिकारी अपना देश स्वतन्त्र करवाने के लिए आए हैं। उन्हें हथियारों की सख्त जरूरत है। मण्डी सुकेत रियासत में हथियारों पर पाबन्दी नहीं थी। सिद्धू ने सहायता देना स्वीकार कर लिया और श्री सुरजनसिंह को एक भूतपूर्व थानेदार मियाँ जवाहरसिंह से भी मिला दिया। मियाँ जवाहरसिंह कुछ देर पहले रियासत की गद्दी का थानेदार भी रह चुका था। श्री सुरजनसिंह ने अपना उद्देश्य उसके आगे प्रकट किया और यह भी कहा कि वह बम बना सकता है। मियाँ जवाहरसिंह ने अपने सामने बम बनता देखने की इच्छा जाहिर की, जिस पर सुरजनसिंह ने उसे बम बनाने का फार्मूला बताया। मियाँ जवाहरसिंह और सिद्धू ने सुरजनसिंह से कहा कि वह दोआबा से आदमी लाए। आदमियों के आने पर वे मण्डी में गदर कर देंगे। मंत्री और अंग्रेज रेजीडैण्ड को कत्ल करके मैगजीन और खजाने पर कब्जा कर लेंगे। तत्पश्चात् पंजाब की ओर धावा बोलकर क्रान्तिकारियों के साथ जा मिलेंगे।

जनवरी के अन्त में श्री सुरजनसिंह फतहगढ़ वापस आए, और श्री अमरसिंह तथा दलीपसिंह को मण्डी साथ चलने को कहा। उन दोनों ने साफ इन्कार कर दिया। पर श्री अमरसिंह ने श्री निधानसिंह चुग्घा का नाम सुझाया। श्री सुरजनसिंह श्री निधानसिंह चुग्घा को साथ लेकर मार्च, १९१५ के आरम्भ में मण्डी लौट आए। सुकेत में एक बैठक हुई, जिसमें मियाँ जवाहरसिंह ने बताया कि वे हथियार तथा बम बनाने का मसाला दे सकते हैं। फैसला किया गया कि बम बनाकर एक पुल उड़ाया जाए, उसके बाद फिर मण्डी रियासत का खजाना और मैगजीन लूट लिया जाए। वहाँ के रेजीडैण्ट और मंत्री को मार दिया जाए। मियाँ जवाहरसिंह ने यह भी बताया कि एक रानी भी साथ मिलने के लिए तैयार है। अगर गदरी आक्रमण करें तो वह किला उनके हवाले कर देगी।

दुर्भाग्यवश यह योजना भी अधूरी रह गई। इस योजना के प्रमुख नेता श्री निधानसिंह चुग्घा गिरफ्तार कर लिए गए।

१७

सिंगापुर में विद्रोह की चिनगारी

सिंगापुर में विद्रोह की चिनगारी सुलगाने वाले गदर पार्टी के वे क्रान्तिकारी नेता ही थे, जिन्होंने अमेरिका से भारत लौटते हुए अपने धुआँधार प्रचार से फौजियों में विद्रोह की भावना को जन्म दिया था। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि यह विद्रोह गदर पार्टी ने करवाया।

बैंकाक (थाईलैण्ड) के एक समाचार-पत्र में एक जर्मन ने लिखा कि उसे ६ सप्ताह पहले बैंकाक में क्रान्तिकारी आन्दोलन का एक पढ़ा-लिखा नेता मिला। नेता ने उसे बताया था कि वह सिंगापुर में विद्रोह कराने जा रहा है। ये नेता गदर पार्टी के महामंत्री भाई संतोखसिंह थे।

सिंगापुर में साधारणतः एक गोरा और एक भारतीय बटालियन होती थीं। वालण्टियर कोर भी थे जिनमें सिर्फ गोरे भर्ती किए जाते थे।

गोरों का बटालियन विलायत भेजा जा चुका था। भारत की तरह इसका स्थान टैरेटोरियल कोर से पूरा नहीं किया गया। लेकिन स्थानीय वालण्टियर कोर को मजबूत किया गया और इसमें मलाया स्टेट वालण्टियर रायफल्स के ८६ जवान मिलाए गए। भारतीय

बटालियन पाँचवीं लाइट इन्फेण्टरी था, जिसमें केवल-मात्र मुसलमान थे और उन्हें भारत से ही भरती किया गया था। एक टोली ३६ नं० पलटन में से भी थी, पर इनके पास गोली-बारूद नहीं था। ये लोग अपनी पलटन की इन्तजार कर रहे थे।

फरवरी में जब गदर हुआ तो बन्दरगाह में सिर्फ एक छोटा जंगी जहाज था। पाँचवीं पलटन हांगकांग जाने के लिए तैयार थी। उसे ले जाने के लिए जहाज लंगर डाले खड़ा था। उनकी बारकें सिंगापुर से चार सौ मील दूर अलैग्जेण्डरा में थीं। पलटन नं० ३६ की टोली टंगालक बारकों के पास थी, जहाँ पर तीन सौ के करीब जर्मन नागरिक और समुद्री जहाजों के जहाजी नजरबन्द किए गए थे। नजरबन्दियों के इस कैम्प की रक्षा पहले पाँचवीं पलटन के सुपुर्द थी पर जब इनको १५ फरवरी को हांगकांग के लिए चलने का हुक्म आ गया तो कैम्प की रक्षा का काम सिंगापुर वालण्टियर राईफल्ज और कुछ जौहर रियासत के फौजियों के हवाले कर दिया गया।

१५ फरवरी को सिंगापुर के कमाण्डर जनरल डी० रीडयूड ने जहाज पर चढ़ाने से पहले पाँचवीं पलटन का निरीक्षण किया। सब-कुछ ठीक था, लेकिन जब पलटन का गोला-बारूद बारकों से मोटर पर चढ़ाया जा रहा था, एक गोली चल गई। गदर शुरू हो गया। जिन्होंने शांति स्थापित करने का प्रयत्न किया उन्हें गोली का निशाना बनाया गया। दो अंग्रेज अफसर मलाया स्टेट्स वालण्टियर राईफल्ज के पास आए और उसके कमाण्डर को यह समाचार पहुँचाने में वे सफल हुए कि उनकी पलटन ने विद्रोह कर दिया है!

'मलाया वालण्टियर राईफल्ज' का कमाण्डर कप्तान स्मिथ अपने जवान लेकर विद्रोहियों की लाइनों की तरफ आया और पाँचवीं पलटन के कर्नल मार्टिन के घर पहुँचा। वहाँप र कर्नल स्वयं, तीन अफसर और एक स्त्री शरण ले रहे थे। जैसे ही मलाया वालण्टियर आगे बढ़े, विद्रोहियों ने उन पर गोलियाँ चलाईं, लेकिन सही-सलामत वे कर्नल के घर पहुँच गए। उन्होंने देखा, पाँचवीं पलटन के अफसर सुरक्षित हैं। घर की रक्षा करने का प्रबन्ध किया गया।

विद्रोहियों को पहले तो कुछ सूझा ही नहीं कि वे क्या करें। फिर वे तीन टोलियों में बिखर गए। एक टोली जर्मन नजरबन्दियों के कैम्प के पहरेदारों को काबू करके कैदियों को छुड़वाने, एक कर्नल के घर पर आक्रमण करने के लिए, और तीसरी टोली सिंगापुर से आने वाली सहायता को रोकने के लिए चल दी। कुछ छोटी-छोटी टोलियाँ इक्का-दुक्का यूरोपियनों को मारने के लिए निकल पड़ीं। मेजर जनरल रीडयूड का बंगला टैंगलिन में था, जहाँ वह मलेरिया से उठा आराम कर रहा था। संध्या का समय था। कई आदमी गोल्फ खेल रहे थे। अचानक जनरल को कर्नल मार्टिन का फोन मिला कि उसकी पलटन ने विद्रोह कर दिया है और वह मलाया स्टेट्स वालण्टियरों के साथ अपने बंगले में है। सुबह होने तक वह मुकाबला कर सकता है। जनरल ने गवर्नर सर आर्थिर यंग को एक सन्देश भेज दिया और अपनी बीवी से कह दिया कि नजर-बन्दियों के कमाण्डर को फोन कर दे। जनरल स्वयं मोटर कार में बैठकर सिंगापुर को चल दिया। जनरल की बीवी ने जब नजर-बन्दियों के कैम्प में फोन किया तो उसने गोली चलने की आवाज

सुनो, जिससे उसका फोन सुन रहा लैफ्टीनेण्ट मौंटगुमरी मारा गया। विद्रोहियों ने कैम्प पर आक्रमण कर दिया था । कैम्प का कमाण्डर, तीन अफसर और सात छोटे अधिकारी वहीं ढेर कर दिए गए। एक जर्मन जंगी कैदी और एक जोहर रियासत का फौजी मारा गया। तीन गोरे और एक जर्मन मुर्दा समझकर छोड़ दिए गए।

नजरबन्दियों के कैम्प के पहरेदारों का सफाया करके विद्रोहियों ने कैम्प की तारों का घेरा तोड़ दिया। कैदियों से हाथ मिलाकर उन्हें अपने साथ मिलाने की कोशिश की गई। दो जर्मन मर चुके थे। ऐसडन के एक अफसर और पांच जहाजियों ने साथ मिलने से इनकार कर दिया। कैदियों ने विद्रोहियों की ओर से पेश किए गए हथियार भी नहीं लिए। शाम के पाँच बजे विद्रोही निराश होकर चले गए।

दूसरी टोली कर्नल मार्टिन के घर पर आक्रमण करने की कोशिश करती रही, पर उसे भी सफलता नहीं मिली। तीसरी टोली सिंगापुर की सड़क पर निकली। उनके आगे जो भी यूरोपियन आया वही मार दिया गया।

दिन ढलने से पहले विद्रोह की खबर सब जगह फैल चुकी थी। गवर्नर जनरल रीडयूड और एडमिरल मार्टिन ने सोच-विचार के बाद कुछ सिपाहियों को लैस किया। एक फ्रांसीसी और एक जापानी जंगी जहाज को भी बुलाया गया। जौहर के सुल्तान को भी सन्देश भेजा गया, जो शाम के ७ बजे तक अपने १५० फौजी लेकर आ गया। शहर में मार्शल-ला की घोषणा कर दी गई। बहुत से यूरोपियन बुलाए गए और सारी पुलिस को हथियार से लैस कर

दिया गया।

सेना कैपल हारबर से विद्रोहियों की बारकों की तरफ गई। उन्हें आते हुए देखकर विद्रोहियों ने उन पर गोलियाँ चलाईं, पर कोई हानि नहीं हुई। बारकों पर कब्जा कर लिया गया। इसके पश्चात् कर्नल मार्टिन के घर पर पहुँचकर अफसरों, स्त्रियों और मलाया स्टेट्स वालण्टियरों को सुरक्षित निकाल लिया गया।

दूसरे दिन एडमिरल ह्यूग्रट जंगी जहाज में अपने साथ जंगी जहाजों के १७० सैनिक, ७६ जापानी और मशीनगनें लेकर आ गया। इस बीच में गस्ती पार्टियों ने विद्रोहियों की बिखरी टोलियों को काबू में लेना शुरू कर दिया था। अब विद्रोहियों के हौसले पस्त हो गए और ७ तारीख की शाम तक ४२२ विद्रोही पकड़ लिए गए।

सिंगापुर के विद्रोह में यूरोपियनों के ८ अफसर, १ स्त्री, ९ फौजी सिपाही और १६ नागरिक मारे गए। विद्रोहियों के जो जवान लड़ाई या जंगलों में मारे गए, उनकी संख्या का कुछ पता नहीं। कोर्ट मार्शल किए गए फौजियों में से ४१ को मौत और १२५ को इससे कम की सजाएँ दी गईं।

सिंगापुर का विद्रोह बहुत भयंकर रूप धारण कर सकता था, क्योंकि मलाया में उस समय कोई बाकायदा सेना नहीं थी। पर विद्रोहियों के सन्मुख न तो कोई स्पष्ट लक्ष्य था और न उनका कोई सुयोग्य नेता ही था। इस विद्रोह का विस्फोट भी अचानक हुआ था। अगर पहले से कोई योजना होती और उसके साथ तैयारी की गई होती तो निस्सन्देह सिंगापुर का यह विद्रोह दूर-दूर तक फैल जाता और इतिहास कुछ दूसरा होता।

१८
गदर की असफलता क्यों ?

गदर पार्टी की स्थापना के आरम्भ से ही यह बात भली प्रकार समझी जा सकती है कि गदर पार्टी विशेष परिस्थितियों की देन थी। विदेशों में रोजी की तलाश में गए भारतीयों के साथ जो दुर्व्यवहार उनके पराधीन होने के कारण होता था, उसी ने उनके दिलों में विद्रोह के बीज बोए और उनका सोया हुआ स्वाभिमान जगाया। लाला हरदयाल-जैसे देशभक्त ने उनके राष्ट्रीय जागरण को सुसंगठित रूप देने का प्रयास किया जिसके फलस्वरूप गदर पार्टी का जन्म हुआ।

लाला हरदयाल के अमेरिका से चले जाने के बाद भी गदर पार्टी को कुछ योग्य नेता मिले, पर अचानक महासभा का विस्फोट हो जाने से उन्हें न तो गदर पार्टी को पूर्ण रूप से संगठित करने का अवसर मिला और न ही संघर्ष के प्रारम्भिक दौर का अनुभव हो पाया। संघर्ष के आरम्भ में उसे एक और चोट भी सहन करनी पड़ी, जब कि बड़ी-बड़ी आशाएँ और योजनाएँ लिए भारत लौटने पर गदर पार्टी के प्रधान श्री सोहनसिंह भकना कलकत्ता में जहाज से उतरते ही कैद कर लिए गए। भारतीय क्रान्तिकारी दलों के साथ ताल-मेल कायम करने का जो कार्यक्रम वह अपने साथ लाए

गदरी क्रान्तिकारियों के पास न तो भारतीय जनता तक पहुँचने के साधन थे और न ही उनकी जल्दबाजी ने ऐसा करने का मौका दिया। सरकारी पक्ष भारी हो गया। अंग्रेजों के एजेंटों ने गदरी क्रान्तिकारियों को साधारण डाकू कहकर बदनाम करना शुरू किया और उन्हें पकड़वाने के लिए जनता का सहयोग पाने में किसी हद तक वे सफल भी हुए। जहाँ कहीं भी कुछ कौमी जागृति थी वहाँ भी केवल बंगाल को छोड़कर इक्का-दुक्का क्रान्तिकारी गिरोहों ने गदरी क्रान्तिकारियों का साथ नहीं दिया।

खुले तौर पर काम करने वाली राजनैतिक संस्थाओं में से उस समय एक कांग्रेस ही प्रधान थी। और कांग्रेस-जैसी संस्था से हथियारबन्द विद्रोह में सहायता की उम्मीद रखने का सवाल ही पैदा नहीं होता था। उस समय कांग्रेस का नेतृत्व नर्म-दलीय लोगों के हाथ में था जो खुलकर अंग्रेजी सरकार का विरोध करने से भी हिचकिचाते थे।

अंग्रेजी सरकार भारतीयों की धार्मिक भावनाओं से खेलना भी जान गई थी। अपनी उद्देश्य-सिद्धि के लिए वह हिन्दू-मुसलमानों को आपस में लड़ा देती थी। गदर आन्दोलन के दबाने और बदनाम करने के लिए उसने लोगों की धार्मिक भावनाओं को उभारा। इसी के परिणामस्वरूप मार्च, १९१५ में सिखों के नेताओं ने सरकार पर जोर डाला कि गदर क्रान्तिकारियों की सरगर्मियों को दबाने के लिए सख्त-से-सख्त कार्यवाही की जाए। सिखों के मुख्य धार्मिक स्थान अकाली तख्त से यह फतक निकाला गया कि सिख गदरी क्रान्तिकारी असली सिख नहीं हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि पंजाबी देशभक्तों के दिलों में अपना पराधीन देश स्वतंत्र देखने की उत्कट भावना पैदा हो चुकी थी, और वे सिर पर कफन बाँधकर अमेरिका से चले थे, लेकिन एक मजबूत विदेशी सरकार का तख्ता उलटने के लिए जिन दूसरी चीजों की आवश्यकता थी, उनका उनमें नितान्त अभाव था। क्रान्ति की योजना को तब तक गुप्त न रख सकना, जब तक कि निश्चित समय न आ जाए और क्रान्ति के बुनियादी सिद्धान्तों का कड़ाई से पालन न करना—कुछ ऐसी बातें थीं जिनके कारण सारी योजनाएँ असफल रह गईं। फिर एक सबसे बड़ी भूल जो हुई, वह थी एक ऐसे आदमी को अपने संगठन में ले लेना जिसकी ईमानदारी और सच्चा क्रान्तिकारी होने का कोई सबूत नहीं था। ......और वही पुलिस द्वारा खरीदा हुआ आदमी कृपालसिंह गदर की सारी असफलता का कारण भी बना।

अतएव गदर पार्टी के नेताओं को गदर की असफलता के दोष से मुक्त नहीं किया जा सकता। अगर वे सतर्क रहकर क्रान्तिकारी सिद्धान्तों की अवहेलना न होने देते तो कोई बड़ी बात नहीं थी कि गदर पार्टी की योजनाओं का दूसरा ही रूप होता और सारे देश में सन् १८५७ की भाँति क्रान्ति की आग धधक उठती।

१९

जो फाँसी पर झूल गए

गदर पार्टी आन्दोलन की असफलता के बाद धीरे-धीरे सभी प्रमुख नेता पकड़ लिए गए। मुकदमा चला। कुछ बुजदिल लोग मुखबिर भी बने। पर गदर पार्टी के जाँबाज सिपाहियों को फाँसी की रस्सी सामने लटकती हुई दिखाई देते हुए भी जिस बेजोड़ साहस और उत्साह का उन्होंने परिचय दिया, वह भारत के राष्ट्रीय आन्दोलनों के इतिहास में अविस्मरणीय रहेगा।

मीयांमीर रिसाले के दफेदार लछमनसिंह के साथ एक मुसलमान अब्दुल्ला को भी फाँसी की सजा हुई थी। जब श्री अब्दुल्ला को प्राण-दण्ड वापस लेने का प्रलोभन दिखाकर पुलिस की ओर से कुछ गुप्त बातें कुरेदने की कोशिश की गई और कहा गया कि तू एक काफिर के साथ फाँसी पर लटकना कैसे पसन्द करेगा, तो श्री अब्दुल्ला ने जवाब दिया—"अगर मैं लछमनसिंह के साथ फाँसी पर लटकाया जाऊँ तो मुझे जरूर ही बहिश्त नसीब होगा।" श्री अब्दुल्ला दफेदार लछमनसिंह के साथ ही फाँसी पर झूल गए। इसी भाँति श्री सोहनलाल पथिक को गवर्नर ने कुछ भेद लेने के लिए स्वयं आकर समझाया कि अगर वह क्षमा माँग ले, तो उसका प्राण-दण्ड वापस लिया जा सकता है। श्री सोहन

लाल ने जवाब दिया कि क्षमा तो अंग्रेज़ हमसे माँगें, वही तो भारतीयों पर अत्याचार ढहाते हैं।

बर्मा-केस का फैसला सुनाते हुए श्री चालियाराम को फाँसी की सजा सुनाई जाने के बाद उनके लिए रहम की सिफारिश की गई। उन्होंने यह कहकर अपील करने से इन्कार कर दिया कि वह श्री हरनामसिंह 'काहरी-साहरी' जैसे महान् पुरुष का संग नहीं छोड़ना चाहता। वह भी अपने क्रान्तिकारी साथी के साथ फांसी पर भूल गए।

श्री करतारसिंह सराबा

गदरी क्रान्तिकारियों में से श्री करतारसिंह सराबा सबसे छोटे थे। उनकी क्रान्तिकारी लगन और उत्साह को देखकर श्री रासबिहारी बोस भी स्तब्ध रह गए थे। अभी वह बीस बरस के भी नहीं हुए थे कि उन्हें फांसी हो गई।

आपका जन्म सन् १८९६ में सराबा (जिला लुधियाना) में हुआ था। आप अपने माता-पिता के इकलौते बेटे थे। छोटी उम्र में पिता का देहान्त हो गया। आपके दादा ने आपको बड़े यत्न से पाला। आपके एक चाचा संयुक्त-प्रान्त (उत्तर प्रदेश) में पुलिस-सब-इन्स्पेक्टर थे और एक दूसरे चाचा उड़ीसा के महकमा जंगलात के किसी ऊँचे पद पर काम करते थे। करतारसिंह पहले अपने गाँव के प्राइमरी स्कूल में पढ़े। बाद में लुधियाना के खालसा हाई स्कूल में दाखिल हुए। पढ़ने-लिखने में साधारण थे, पर शरारती बहुत थे। छेड़खानी से हरेक की जान पर आफत रखते। आपके सहपाठी आपको अफलातून कहा करते थे। खेलों में आप अगुआ थे। नेतागिरी के सभी गुण आपमें विद्यमान थे। नवीं

श्रेणी तक वहीं पढ़कर, फिर अपने चाचा के पास उड़ीसा चले गए। वहीं मेट्रीकुलेशन पास किया और कालिज में पढ़ने लगे। १६१०-११ के दिन थे। आपको स्कूल-कालिज के कोर्स के अतिरिक्त बाहर की बहुत-सी पुस्तकें पढ़ने का सुअवसर मिला। अमेरिका जाने की इच्छा हुई। घर वालों ने अड़चन नहीं डाली। आपको अमेरिका भेज दिया गया। १६१२ में आप सॉनफ्रांसिस्को बन्दरगाह पर पहुँचे। इमिग्रेशन विभाग वालों ने विशेष पूछताछ के लिए आपको रोक लिया।

अफसर के पूछने पर आपने कहा कि यहाँ पढ़ने के लिए आया हूँ।

"क्या हिन्दुस्तान में तुम्हें पढ़ने का स्थान न मिला?"

"मैं उच्च-शिक्षा-प्राप्ति के लिए कैलीफोर्निया के विश्वविद्यालय में दाखिल होने के विचार से आया हूँ।"

"और यदि तुम्हें अमेरिका में न उतरने दिया जाए?"

इस सवाल का जवाब करतारसिंह ने बहुत सुन्दर ढंग से दिया—"मैं समझूँगा बड़ा भारी अन्याय हुआ। विद्यार्थियों के रास्ते में ऐसी अड़चनें डालने से संसार की प्रगति रुक जाएगी। कौन जानता है कि मैं ही यहाँ शिक्षा पाकर संसार की भलाई का कोई बड़ा भारी काम करने में समर्थ हो सकूँ। उतरने की आज्ञा न मिलने पर संसार उससे वंचित रह जाएगा।"

अफसर करतारसिंह के जवाब से इतना प्रभावित हुआ कि उसे उतरने की आज्ञा दे दी।

स्वतंत्र देश में जाकर कदम-कदम पर आपके सुकोमल हृदय पर आघात लगने लगे। Damn Hindoo और Black Coolie

आदि शब्द उन उन्मत्त गोरे अमेरिकनों के मुँह से सुनते ही वह पागल से हो उठे। उन्हें पग-पग पर अपने देश का अपमान अखरने लगा। घर याद आने पर पराधीन जंजीरों से जकड़ा हुआ, अपमानित, लुटा हुआ, अशक्त भारत आँखों के सामने आ जाता। वह कोमल हृदय धीरे-धीरे कठोर होने लगा और देश की स्वतंत्रता के लिए जीवन अर्पण करने का संकल्प दृढ़ होता गया।

मई, १६१२ में इन लोगों की एक छोटी-सी सभा हुई। कोई ६ आदमी होंगे। सबने तन, मन और धन देश की स्वतंत्रता पर निछावर करने की प्रतिज्ञा ली। लाला हरदयाल ने भारतीयों का संगठन किया। धड़ाधड़ सभाएँ होने लगीं। भाषण होने लगे। काम होता रहा। क्षेत्र तैयार होता गया।

फिर अपने एक अखबार की आवश्यकता अनुभव हुई। गदर नाम का अखबार निकाला गया। उस अखबार के सम्पादकीय विभाग में हमारे नायक करतारसिंह भी थे। सम्पादकगण स्वयं ही इसे हैण्ड प्रेस पर छापते भी थे। करतारसिंह मतवाले विद्रोही युवक थे। हैण्ड प्रेस चलाते-चलाते थक जाने पर वह एक पंजाबी कविता गुन गुनाया करते :

सेवा देश दी जिंदड़िए बड़ी औखी,
गल्लाँ करनियाँ ढेर सुखल्लियाँ वे।
जिन्हां इस सेवा विच्च पैर पाया,
उन्हाँ लख मुसीबतां झल्लियाँ वे।

अर्थात्—"ऐ दिल! देश की सेवा बड़ी कठिन है। बातें बनाना आसान है। जो लोग इस सेवा-मार्ग पर अग्रसर हुए, उन्हें

लाखों विपत्तियाँ झेलनी पड़ीं।"

युगान्तर आश्रम सॉनफ्रांसिस्को के गदर प्रेस में 'गदर' तथा इसके अतिरिक्त 'गदर की गूंज' इत्यादि अनेक पुस्तकें छपती और बँटती गईं। प्रचार जोरों से होता गया। जोश बढ़ा। फिर एकाएक यूरोप में महायुद्ध छिड़ गया। आनन्द और उत्साह की सीमा न रही। सभी गाने लगे :

चलो चलिए देश नूँ युद्ध करन,
एहो आखिरी वचन ते फर्मान हो गए।

अर्थात्—"चलो देश को युद्ध करने चलें, यही है आखिरी वचन और फर्मान !"

विद्रोही करतारसिंह ने देश लौटने का प्रचार जोरों से किया और स्वयं भी एक जहाज द्वारा अमेरिका से चल दिए। १५ सितम्बर, १९१४ को कोलम्बो पहुँच गए। उन दिनों पंजाब तक पहुँचते-पहुँचते साधारणतः अमेरिका से आने वाले भारत-रक्षा-कानून की गिरफ्त में आ जाते थे। बहुत कम आदमी स्वतंत्र रूप से पहुँच सकते थे। करतारसिंह सही-सलामत आ पहुँचे। बड़े जोरों से काम शुरू हुआ। दिसम्बर, १९१४ में पिंगले मराठा वीर भी आ पहुँचा। उसी के प्रयत्न से बनारस षड्यन्त्र के श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल और श्री रासबिहारी बोस पंजाब में आए। करतारसिंह हर जगह, हर समय मौजूद होते। आज मोगा में गुप्त-समिति की बैठक है, तो वहाँ पर आप उपस्थित हैं। कल लाहौर के विद्यार्थियों में प्रचार हो रहा है। आज के दिन फ़िरोजपुर छावनी के सिपाहियों से जोड़-तोड़ हो रहा है। कलकत्ता हथियारों के लिए जा रहे हैं।

गदर की तैयारी के लिए उन्होंने जी-जान से काम किया।

रात-दिन एक कर दिये। थकान नाम की चीज तो उन्हें जैसे छू तक नहीं गई थी। गदर की योजना असफल रह जाने के बाद वह एक दिन सरगोधा के पास चक नं० ५ में पकड़े गए। गिरफ्तारी के समय वह बहुत खुश थे। वह प्रायः कहा करते थे—"साहस से मर जाने पर मुझे 'बागी' का खिताब देना। कोई याद करे तो 'बागी' करतारसिंह कहकर याद करे।"

अभियोग चला। फाँसी की सजा हुई। करतारसिंह फाँसी की कोठी में बन्द हैं। दादा ने आकर पूछा—"करतारसिंह, किनके लिए मर रहे हो? जो तुम्हें गालियाँ देते हैं! तुम्हारे मरने से देश का कुछ लाभ हो, सो भी नहीं दीखता।"

करतारसिंह ने धीरे से पूछा—"पितामह, अमुक व्यक्ति कहाँ है?"

"प्लेग से मर गया।"

"अमुक कहाँ है?"

"हैजे से मर गया।"

"तो क्या आप चाहते थे कि करतारसिंह भी बिस्तर पर महीनों पड़ा रहकर किसी रोग से मरता। क्या उस मृत्यु से यह मृत्यु अच्छी नहीं?" दादा चुप हो गए।

डेढ़ साल तक मुकदमा चला। १९१९ के नवम्बर महीने में उन्हें फाँसी पर लटका दिया गया। 'भारत माता की जय' बोलते हुए वह फाँसी पर झूल गए।

श्री वी० जी० पिंगले

पूना के पहाड़ी प्रदेश में जन्म पाकर अभी उनका जीवन बीतने भी नहीं पाया था कि गुलामी के थपेड़ों से वह भावुक-हृदय कराह

उठा । घर वालों ने इंजीनियरिंग की शिक्षा पाने के लिए उन्हें अमेरिका भेज दिया । वहीं पर उन्होंने विप्लव दल की दीक्षा ली और फिर भारत लौट आए । उस बेचैन-हृदय ने अब तक एक क्षण भी बेकार खोना न सीखा था । भारत लौट आने पर घर न जाकर पिंगले सीधे बंगाल पहुँचे और वहाँ के क्रान्तिकारियों को पंजाब के बलबे की सूचना देकर उनसे सम्बन्ध स्थापित किया ।

श्री रासबिहारी बोस के दल से मिलकर पिंगले बनारस पहुँचे । दो-तीन दिन वहाँ रहने के बाद कुछ लोगों ने उनसे पंजाब जाने का अनुरोध किया । अधिक-से-अधिक बम भेजने को कहकर पिंगले पंजाब पहुँचे और एक ही सप्ताह में वहाँ की सारी स्थिति जानकर फिर बनारस लौट आए । इस बार वह श्री रासबिहारी को पंजाब ले जाने के लिए ही आए थे किन्तु किसी कारणवश उनके स्थान पर पहले श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल को जाना पड़ा । बाद में श्री रासबिहारी बोस अमृतसर आए थे । एक साधारण-से हिन्दुस्तानी के वेश में शचीन्द्र को साथ लेकर पिंगले अमृतसर के एक गुरुद्वारे में आए । इन्हें पंजाबी बोलने का अच्छा अभ्यास था । उस समय पिंगले और करतारसिंह पंजाब के आन्दोलन की जान थे ।

श्री रासबिहारी बोस के साथ बनारस वापस जाते समय पिंगले गदर का प्रचार करने के लिए मेरठ छावनी में घुस पड़े । एक मुसलमान हवलदार ने उन्हें बहुत-कुछ आशा दिलाई और उनके साथ वह बनारस गया । श्री रासबिहारी बोस ने पिंगले को ऐसे समय में सिपाहियों के बीच जाने से बहुत मना किया, किन्तु वह फिर भी निराश न हुए । पिंगले को १० बड़े-बड़े बम देकर रवाना किया गया ।

श्री रासबिहारी बोस का अनुमान ठीक निकला। हवलदार ने उन्हें मेरठ छावनी में गिरफ्तार करवा दिया।

श्री रासबिहारी बोस ने बाद में अपनी डायरी में लिखा था: "यदि मैं जान पाता कि पिंगले अब मुझे फिर न मिल सकेगा तो उसके लाख आग्रह करने पर भी मैं उसे अपने पास से न जाने देता। उस सुदृढ़ गोरे शरीर वाले वीर के अभिमानभरे ये शब्द कि मैं एक वीर सैनिक की हैसियत से केवल कार्य करना जानता हूँ—अब भी कानों में गूंजते रहते हैं और उसकी तीव्र बुद्धि का परिचय देने वाली वे बड़ी-बड़ी आँखें भुलाने पर भी नहीं भूलतीं।"

अदालत ने उन्हें फाँसी की सजा दी।

पंडित काशीराम

पंडित काशीराम का जन्म अम्बाला जिले के बड़ी मड़ौली नामक गाँव में संवत् १९३८ में हुआ था। घर वालों ने १० वर्ष की आयु में आपकी शादी कर दी थी। पटियाला से मैट्रिक पास करने के बाद आप घर से इस तरह बाहर हुए कि फिर १९१४ में कुछ घंटों के लिए ही अपने गाँव में वापस आए। इसी बिछोह में आपकी पत्नी का शरीरान्त भी हो गया था।

पढ़ाई खत्म करके कुछ दिन तार का काम सीखने के बाद आप अम्बाला के जिला-दफ्तर में ३० रुपये मासिक पर नौकर हो गए। फिर कुछ दिन दिल्ली में नौकरी करके हांगकांग चले गए। और अन्त में अमेरिका जाकर एक बारूद के कारखाने में दो सौ मासिक पर नौकर हो गए। बाद में इसे गुलामी कहकर छोड़ दिया और एक टापू की सोने की खान का ठेका ले लिया।

इसी बीच अमेरिका में भारत लौटने की लहर चली। आप भी

एक जत्थे के साथ २५ नवम्बर, ९१४ को भारत आ गए। स्वदेश आने पर एक बार फिर उस स्थान को देखने की इच्छा से, जहाँ की धूल में खेलते हुए आपका बचपन बीता था, वह अपने गाँव पहुँचे। यह समाचार बिजली की भाँति सारे गाँव में फैल गया और आपसे मिलने के लिए एक अच्छी भीड़ जमा हो गई। आपने अवसर हाथ आया देखकर वहीं पर गदर के बारे में एक भाषण दे डाला। गाँव वालों के लिए आपका यह अन्तिम पूज्य दर्शन था। वह फिर लौट कर गाँव नहीं आए।

लाहौर से कुछ साथियों-सहित फिरोजपुर भेजे गए। वहाँ से मोगा आते हुए रास्ते में फिरोज शहर के पास पुलिस से मुठभेड़ हो गई। एक थानेदार और जेलदार मारा गया। बाद में अपने सात साथियों-सहित गिरफ्तार हो गए। मुकदमा चला और आपको फाँसी की सजा हो गई।

डा० मथुरासिंह

डा० मथुरासिंह का जन्म सन् १८८२ में ढुडियाल जिला जेहलम (पंजाब) में हुआ था। पहले आप अपने ही गाँव में पढ़े, तत्पश्चात् चकवाल के हाईस्कूल में पढ़ने लगे। आपकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। मैट्रिक पास करके आप प्राईवेट तौर पर डॉक्टरी का काम सीखने लगे। तीन-चार बरस में आप इस काम में प्रवीण हो गए। फिर विशेष शिक्षा के लिए अमेरिका जाने का विचार हुआ। पर अधिक धन न होने के कारण आपको शंघाई में ही रुक जाना पड़ा। वहीं पर आपने चिकित्सा कार्य शुरू कर दिया, जिसमें आपको बहुत सफलता मिली। परन्तु आपका इरादा कनाडा जाने का था, आप भारतीयों के साथ उधर गए। परन्तु वहाँ पर अनेक

कठिनाइयाँ सामने आईं। यहाँ तक कि आपको और अन्य भारतीय यात्रियों को वापस लौटा दिया गया। बहाना वही कि कनाडा में किसी जहाज द्वारा सीधे नहीं आए। आप शंघाई लौट आए और श्री बाबा गुरदितसिंह जी को अपना एक जहाज बनाने की सलाह दी, जो सीधा कनाडा जाए। इसी सलाह पर बाबा जी ने 'कामा गाटा मारु' जहाज किराए पर लिया था।

'कामा गाटा मारु' जहाज की घटना के बाद आपने अपना जीवन देश की स्वतंत्रता के लिए अर्पण कर दिया। आप गदर पार्टी में शामिल हो गए और इसी उद्देश्य को लेकर आप देश-विदेश में गदर पार्टी के काम से घूमते रहे। मिस्र, मैसोपोटेमिया और ईरान आदि देशों की आपने यात्रा की। उस समय कोई नीच पुरुष आपकी यात्रा की सब खबर अंग्रेजी सरकार को देता रहा। ताशकंद में आपको गिरफ्तार कर लिया गया। ईरान में लाकर शनाख्त की गई। अभियोग चला। बहुत से लोगों ने भरसक यत्न किया कि आपको भारत-सरकार के हवाले न किया जाए, परन्तु इसमें भी सफलता नहीं मिली।

लाहौर लाकर आपको २७ मार्च, १९१९ के दिन फांसी पर लटका दिया गया।

भाई भागसिंह

भाई भागसिंह का जन्म लाहौर जिले के भिक्खीपिण्ड नामक गाँव में सरदार नारायणसिंह जी के घर सन् १८७८ में हुआ था। माता का नाम मानकौर था। बीस वर्ष की आयु तक घर पर रहकर ही आप खेती-बाड़ी का काम देखते रहे। इसी बीच गुरुमुखी का भी थोड़ा-बहुत ज्ञान प्राप्त कर लिया था। बचपन से ही आप

सैनिक स्वभाव के थे। बीस वर्ष की उम्र में फौज में नौकर हो गए। आजाद तबीयत के तो थे ही, सेना में आज किसी से तो कल किसी झगड़ा चल रहा है। सभी लोग, विशेषकर अफसर, आपसे तंग आए रहते थे। यही कारण था कि पाँच साल तक नौकरी करने पर भी आप एक मामूली सिपाही से आगे न बढ़ सके।

बाद में सेना की नौकरी छोड़कर, घर वालों को बिना बताए ही हांगकांग चले गए और वहाँ पुलिस में भरती हो गए। ढाई साल काम करने के बाद वहाँ भी जमादार से अनबन हो गई। वहाँ से छोड़कर आप शंघाई आ गए। यहाँ ढाई साल तक म्युनिसिपल पुलिस में काम करने के बाद, भारतीयों को अमेरिका की ओर जाते देखकर आप भी कनाडा चले गए।

कनाडा पहुँचकर भाई बलवन्तसिंह, भाई सुन्दरसिंह, भाई हरनामसिंह आदि से आपकी घनिष्ठता हो गई। उस समय कनाडा-स्थित भारतीयों पर बड़े अत्याचार हो रहे थे। यहाँ तक कि बहुत प्रयत्न करने के बाद भी उन्हें कहीं कोई जगह नहीं मिलती थी। उनमें आपस में भी फूट थी। सभी अपनी-अपनी सोचते। ऐसे विकट समय में उक्त मित्र-मण्डली ने कदम बढ़ाया। प्रारम्भ करने-भर की देर थी, काम चल निकला। जहाँ पहले एक भी गुरुद्वारा न था, वहाँ प्रायः सभी स्थानों पर गुरुद्वारे स्थापित हो गए। सारी बिखरी हुई शक्ति को केन्द्रस्थ करके संगठन का काम प्रारम्भ कर दिया गया। कनाडा में भारतीयों को एक भारतीय की तरह जीवन व्यतीत करने तक की स्वतन्त्रता भी न थी। वे अपने सम्बन्धियों के मृत शरीर को जला नहीं सकते थे, उन्हें उसकी कब्र बनानी पड़ती थी। इन लोगों ने कुछ जमीन खरीदी और उसमें

श्मशान स्थापित किया ।

इमिग्रेशन वाले भारतीयों की इन बातों को कैसे सहन कर सकते थे ? एक ओर तो कनाडा के भारतीयों को हण्डूरास भेजने का प्रयत्न होने लगा और दूसरी ओर एक नया कानून बनाया गया । इस कानून के अनुसार कोई भी नया भारतीय कनाडा में नहीं उतर सकता था । आप और आपके मित्रों ने इस कानून के विरुद्ध आवाज उठाई । हण्डूरास देखने गए आदमियों ने आकर कहा कि वहाँ तो नरक से भी गया-बीता स्थान है । इमिग्रेशन वाले इस पर बड़े तिलमिलाए । उधर नये कानून के विरुद्ध यह निश्चय किया गया कि कनाडा में पहले से आबाद भारतीय भारत जाकर अपने परिवार ले आएँ । श्री भागसिंह अपने अन्य दो मित्रों सहित भारत लौट आए ।

भारत लौट तो आए, पर परिवार कहाँ से लाएँ ! पत्नी का स्वर्गवास हो चुका था और बाल-बच्चे थे नहीं । अतः आपने पेशावर की एक स्त्री से फिर से ब्याह किया और उसे लेकर वापस चल दिए । हांगकांग पहुँचकर पता चला कि कनाडा जाने के लिए टिकट न मिल सकेगा । बहुत-कुछ प्रयत्न करने पर भी आपको वहाँ काफी अरसा रुकना पड़ा । वहीं पर आपके पुत्र जोगिन्दरसिंह का जन्म हुआ । आखिर बहुत प्रयत्न के बाद वैनकोबर पहुँचने पर अनेक अड़चनों के बाद, आपको जहाज से उतरने दिया गया ।

अभी तक आप अधिकांशतः धार्मिक कार्यों में ही दिलचस्पी ले रहे थे, किन्तु इस यात्रा के अनुभव ने आपके विचारों में एक नया परिवर्तन ला दिया । आपको यह विश्वास हो गया कि गुलामों के लिए दुनिया के किसी भी कोने में स्थान नहीं है । जब तक भारत

स्वतन्त्र नहीं होता, हमें इसी प्रकार पग-पग पर अड़चनों का सामना करना पड़ेगा। इसी बीच अमेरिका से 'गदर' अखबार निकलना प्रारम्भ हुआ। उस समय श्री भागसिंह जी ने जी खोलकर रुपये-पैसे से इस पत्र की सहायता की। इतना ही नहीं, अमेरिका से निकलने पर भी 'गदर' अखबार तथा उसकी नीति का प्रचार अधिकतर कनाडा में ही हुआ था।

अभी इमिग्रेशन वालों से झगड़ा चल ही रहा था कि 'कामा गाटा मारू' जहाज कनाडा आ पहुँचा। इस जहाज वालों पर क्या-क्या अत्याचार हुए, उन्हें किन-किन मुसीबतों का सामना करना पड़ा और उन वीरों को सताने के लिए किन-किन घृणित उपायों का प्रयोग किया गया—ये सब रोंगटे खड़े कर देने वाली घटनाएँ हैं। जब इमिग्रेशन वालों ने इस जहाज को कहीं पर भी ठहरने की आज्ञा न दी, तो श्री भागसिंह जी के प्रबन्ध में एक नया घाट खरीदा गया और वहीं पर उस जहाज को ठहराया गया। इसी बीच एक दूसरी चाल चली गई। जहाज के मालिक को इमिग्रेशन वालों ने अपनी ओर मिलाकर इस बात पर राजी किया कि वह जहाज का किराया किश्त पर न लेकर, एक साथ ही पेशगी ले ले। जहाज वाले बड़ी मुसीबत में फँस गए। पास में इतना रुपया तो था नहीं। अभी कुछ सामान भी न बिक पाया था। किन्तु श्री भागसिंह तथा उनके मित्रों ने मिलकर किराया अदा कर दिया और जहाज का चार्टर अपने नाम लिखवा लिया।

यह सब प्रबन्ध कर चुकने के बाद साऊथ ब्रिटिश कोलम्बिया में आप अपने किन्हीं साथियों से इसी बात पर सलाह-मशविरा करने गए तो वहीं पर हरनामसिंह और बलवन्तसिंह जी के साथ

गिरफ्तार कर लिए गए। बाद में आपको तथा बलवन्तसिंह जी को छोड़ दिया गया। उस समय जहाज वापस जाने के लिए खड़ा था। बहुत से यात्रियों के पास खाने तक को पैसा नहीं रह गया था। आपने तुरन्त उन यात्रियों के लिए पैसे आदि का प्रबन्ध कर दिया।

'कामा गाटा मारू' जहाज की सहायता करने तथा स्वाधीनता का प्रचार करने के कारण आप इमिग्रेशन विभाग की आँखों में खटकने लगे थे। आपको गोली से मरवा देने की अफवाहें भी उड़ीं, पर उस समय आप इस बात को हँसकर टाल देते थे।

एक दिन गुरुद्वारे में दीवान शुरू हुआ और आप गुरुग्रन्थ साहब का पाठ करने बैठे। सब काम शांतिपूर्वक समाप्त हो गया और जब आप 'अरदास' के बाद माथा टेकने के लिए झुके तो पीछे बैठे बेलासिंह ने पिस्तौल चलाया। गोली पीठ को पार करके फेफड़ों में आ रुकी। घातक को पकड़ने के प्रयास में भाई वतनसिंह भी मारे गए।

श्री भागसिंह जी को अस्पताल ले जाया गया। आपरेशन होने पर भी आप पूर्णतः होश में रहे और बराबर लोगों को उत्साह देते रहे। जिस समय आपका लड़का आपके सामने लाया गया तो आपने कहा, "यह लड़का मेरा नहीं, कौम का है।" अन्त में आप यह कहते हुए अपनी इहलीला समाप्त कर गए कि मेरी तो इच्छा थी, आजादी की लड़ाई में आमने-सामने दो-चार हाथ करके प्राण देता, किन्तु भाग्य में बिस्तर पर पड़े-पड़े ही मरना लिखा था। मृत्यु के समय आपकी आयु ४४ वर्ष की थी।

अदालत में खूनी बेलासिंह को यह कहने पर छोड़ दिया गया कि मैंने तो सब-कुछ इमिग्रेशन विभाग के अधिकारियों के कहने पर

ही किया है। मैं सरकार का वफादार नौकर हूँ। यदि मुझे इस समय गिरफ्तार न किया जाता तो मैं लड़ाई के मोर्चे पर जाकर अपनी वफादारी दिखाता।

भाई वतनसिंह

आपके बाल-जीवन के सम्बन्ध में सिर्फ इतना ही पता चला है कि आपका जन्म पटियाला राज्य के 'बुब्बड़वाल' गाँव में हुआ था। २२-२३ वर्ष की आयु तक घर पर रहने के उपरान्त आप सेना में भरती होकर बर्मा चले गए। पाँच साल बाद नौकरी छोड़कर घर लौट आए और खेती-बाड़ी का काम करने लगे। घर से भी जब ऊब गए तो आप हांगकांग पहुँचे। वहाँ पाँच साल तक जेल-पुलिस में गार्ड का काम करने के बाद आप कनाडा पहुँच गए।

वैनकोबर पहुँच तो गए, पर जाएँ किसके पास? एक अपरिचित देश, कोई भी जान-पहचान नहीं। काफी खोज-खबर के बाद गुरुद्वारे का पता चला और आप वहीं ठहर गए। कुछ दिन वहाँ ठहरने के पश्चात् मुडीपोर्ट के लकड़ी के कारखाने में भरती हो गए। इसी कारखाने में श्री भागसिंह भी काम करते थे।

सन् १९११ में वतनसिंह फिर वैनकोबर आ गए। राईटपोर्ट पर काम करने के साथ-साथ सत्संग का अच्छा अवसर हाथ लगा देखकर आपने नित्य गुरुद्वारे में जाना आरम्भ कर दिया। एक साल तक आप गुरुद्वारा समिति के सदस्य भी रहे।

इसके बाद वही पुरानी कथा है—इमिग्रेशन विभाग से झगड़ा, वही अत्याचार, आन्दोलन और भाई भागसिंह और बलवन्तसिंह को मारने का षड्यन्त्र। उस समय सैकड़ों की संख्या में लोग भारत की ओर वापस आ रहे थे। कहते हैं यह षड्यन्त्र इसीलिए रचा गया था.

कि कोई भी पंजाबी नेता भारत लौटकर विद्रोह का प्रचार कर सके ।

उस दिन दीवान (कथा-कीर्तन) में जब बेलासिंह ने भाई भागसिंह जी पर गोली चलाई तो वतनसिंह जी भी उनके पास में ही बैठे थे । श्री भागसिंह जी को घायल होते देखकर, आपने खूनी को ललकारा । बस, फिर क्या था ! दूसरी गोली श्री बलवन्तसिंह की ओर न जाकर श्री वतनसिंह जी के वक्षस्थल में समा गई । आपके सात गोलियाँ लगीं पर आपने फिर भी खूनो की गर्दन को धर दबाया । लेकिन तभी शक्ति क्षीण हो जाने के कारण बेलासिंह छुड़ाकर भाग गया । आप सदैव के लिए गहरी नींद में सो गए । ५० वर्ष की आयु में एक सच्चे वीर की भाँति उन्होंने अपने साथी को बचाने के प्रयास में प्राण दे दिए ।

श्री मेवासिंह

श्री मेवासिंह का जन्म जिला अमृतसर के एक गाँव लोपोके में हुआ था । आप साधारण कृषक थे और खेती-बाड़ी करते थे । कनाडा आदि की ओर आए-दिन अनेकानेक लोगों को जाते देख आप भी वहीं चले गए । कनाडा में भारतवासियों पर किए गए अत्याचार, अन्याय और घृणित व्यवहार से आपके हृदय को चोट लगी ; भाई भागसिंह और वतनसिंह को आपने एक गद्दार के हाथों प्राण देते देखा था तभी मन-ही-मन आपने बदला लेने की ठान ली ।

उस दिन बेलासिंह के मुकदमे की पेशी थी । इमिग्रेशन विभाग के मुख्याधिकारी मि० हॉपकिन्स भी पेश होने आए थे । सब काम शांतिपूर्वक हो रहा था कि एकाएक गोली चली और इसके पहले कि फायर करने वाले की ओर कोई ध्यान दे सकता, हॉपकिन्स सदा

के लिए धराशायी हो गए। निशाना अचूक बैठा। हॉपकिन्स को गिरते देखकर आपने अपना रिवॉल्वर जज की मेज पर रखकर ऊँचे स्वर में कहा—"मैं भागना नहीं चाहता। आप लोग शान्त हो जाइए। मैं पागल नहीं हूँ। अन्य किसी पर गोली नहीं चलाऊँगा।" इसके बाद पुलिसवालों को पुकारकर चुपचाप आत्मसमर्पण कर दिया।

गिरफ्तारी के बाद बयान लेते समय जब आपसे हॉपकिन्स को मारने का कारण पूछा गया तो आपने प्रश्न किया—"क्या हापकिन्स सचमुच मर गया? उत्तर में 'हाँ' सुनकर आप बड़े जोरों से हँस दिए। कहा—"आज मुझे वास्तविक खुशी मिली हैं।" पूछने पर आपने बताया—"हॉपकिन्ज को मैंने जान-बूझकर मारा है। यह बदला है देश तथा धर्म के अपमान का; यह बदला है हमारे दो अमूल्य रत्नों की हत्या का। मैं तो मि० रीड (हॉपकिन्स के दूसरे साथी) को भी मारने का विचार लेकर आया था, परन्तु वह न होने के कारण बच गया।"

हॉपकिन्स की स्त्री ने अपने पति की हत्या का समाचार सुनकर कहा था कि मैं उस वीर के दर्शन करना चाहती हूँ, जिसने मेरे पति को भरी कचहरी में गोली से मारा है, और इस धैर्य के साथ आत्मसमर्पण किया है।

इस घटना के बाद कनाडा में भारतीयों को किसी ने घृणित शब्दों से सम्बोधित नहीं किया।

श्री मेवासिंह जी पर अभियोग चला। फाँसी पर झूलने से पहले आपने कहा था—

"बाहर जाकर सभी भारतवासियों और विशेषकर राष्ट्रीय

कार्यकर्त्ताओं से कह देना कि इस गुलामी के अभिशाप से बच निकलने के लिए जोरों से प्रयत्न करें। परन्तु कार्य तभी हो सकेगा, जब उनमें इलाकेबन्दी और धार्मिक असहनशोलता बिलकुल न रहे। न हिन्दू, मुस्लिम और सिक्ख विभिन्न धर्मों के प्रश्न उठें। मुझे जो प्यार करने वाले सम्बन्धा अथवा मित्र हैं, उनसे तो मेरा विशेष आग्रह है।"

श्री गन्धासिंह

श्री गन्धासिंह जी छोटी उम्र में ही अमेरिका चले गए थे। १९१४-१५ में अमेरिका की गदर-पार्टी के आप एक प्रमुख नेता थे। भारत में आकर पार्टी के ध्येय का प्रचार करन की बात निश्चित हुई, तो सबसे पहले अ प अपने मित्र को साथ लेकर भारत की ओर चल दिए। आपके भारत आने के कुछ ही दिनों के बाद बजबज घाट पर गोली चल गई और बाहर से आने वाले यात्रियों पर कड़ा पहरा लगा दिया गया। अमेरिका से भारत आने वाले यात्रियों को अपने ही देश में उतरना कठिन ही नहीं, बल्कि असम्भव-सा हो उठा। आप अपने मित्र के साथ हांगकांग आए और वहाँ से जो भारतीय कलकत्ता के टिकट पर भारत आने की तैयारी कर रहे थे, उनके टिकट बदलवाकर बम्बई और मद्रास के टिकट लेकर जाने को बाध्य किया।

भारत पहुँचकर आपने जोरों से गदर का प्रचार शुरू किया। उत्साह की आप एक जीती-जागती प्रतिमूर्ति थे और आप में असीम साहस था।

एक बार दस-पन्द्रह साथियों-सहित फिरोजपुर के 'कल्लखुर्द' नामक गाँव के पास मार्ग में जा रहे थे कि पुलिस ने आ घेरा।

थानेदार ने आपके एक साथी को गालियाँ देते हुए एक तमाचा लगा दिया। युवक इस चोट को सहन न कर सका और उसकी आँखों में आँसू आ गए। एक स्वाधीन देश की जलवायु में पला हुआ आत्माभिमानी, स्वाधीनता संग्राम का सिपाही भला इसे कब सहन कर सकता था? देखते-देखते गन्धासिंह की गोली का निशान बनकर थानेदार जमीन पर आ गिरा। साथ ही एक जियातदार (तहसील वसूल करने वाला) भी मारा गया। आप अपने साथियों के साथ वहाँ से भाग खड़े हुए। कुछ साथी मार्ग में पकड़े गए, पर आप बच निकले।

खन्ना जिला लुधियाना के पास एक गाँव में आपकी मुलाकात एक मास्टर ज्ञानी नत्थासिंह से हुई। वह लुधियाना खालसा हाई स्कूल में नौकर था। वह श्री गन्धासिंह को अपने साथ लिवा ले गया। मार्ग में एक स्थान पर बहुत से लोग खड़े थे। उनके बीच में पहुँचने पर देशद्रोही नत्थासिंह ने आपको पीछे से पकड़ लिया। इतने में और लोग भी आप पर टूट पड़े। अनायास ही कितने लोगों के बीच पड़ जाने के कारण आप कुछ भी न कर सके। उस समय मास्टर ने कहा—"अब तुम गिरफ्तार हो गए।" आपको गाँव में लाया गया और हाथ पीछे बाँधकर एक कोठरी में बन्द कर दिया गया। रात-भर इसी प्रकार पड़े रहने के बाद दूसरे दिन पुलिस-कप्तान ने आकर कोठरी का दरवाजा खुलवाया। इस रात के बारे में जेल के अन्दर और साथियों से गिरफ्तारी का हाल बयान करते समय आपने कहा था, "उस रात मेरे हाथ फूलकर जंघा के समान हो गए थे और उस कष्ट के सामने फाँसी मुझे बिलकुल आसान जान पड़ती थी।"

८ मार्च, १९१६ के दिन फांसी पर झुला दिए गए।

श्री बलवन्तसिंह

श्री बलवन्तसिंह का परिवार बड़ा समृद्धिशाली था। आपका जन्म खुर्दपुर जिला जालन्धर में हुआ था। आपको होश संभालते ही आदमपुर के मिडिल स्कूल में दाखिल करवा दिया गया। विद्यार्थी जीवन में आपका ब्याह हो गया, पर शीघ्र ही पत्नी की मृत्यु भी हो गई। मिडिल पास किए बिना ही आप स्कूल छोड़कर फौज में भरती हो गए। दस साल नौकरी की। इस दौरान में आपका दूसरा ब्याह हो गया था। १९०५ में आप कनाडा चले गए।

प्रवासी भारतीयों के परिवार कनाडा में लाने के हेतु जो संघर्ष चला उसमें आप ही अग्रणी थे। अंत में आपको सफलता प्राप्त हुई। इमिग्रेशन विभाग को झुकना पड़ा। इसी हेतु जो एक प्रतिनिधि-मंडल बनाया। वह इंगलैण्ड भी गया और भारत भी। उसके तीन सदस्यों में आप भी थे।

सर माईकेल ओडायर ने अपनी पुस्तक 'India as I Knew it' में लिखा था—

"At this stage I sent a warning to the delegates that if this continued, I would be compelled to take serious action...... .....The delegates on this asked for an interview with me. I had a long talk with them and repeated my warning. Two of them were...and spacious; the manner of the third seemed to be that of a dangerous revolutionary. They wished to see the Viceroy, and in sending them on to him, I particularly warned him about this man."

वह तीसरे सज्जन जिन पर हमारे लाट ने इतना कुछ कह डाला है, अन्य कोई नहीं, श्री बलवन्तसिंह ही थे । प्रतिनिधि-मंडल के सदस्य हताश-निराश होकर १९१४ के आरम्भ में वापस पहुँच गए । उन्हीं दिनों भाई भगवानसिंह तथा मौलवी बरकतुल्ला भी अमेरिका पहुँच चुके थे ।

१९१४ का महासमर छिड़ने पर श्री बलवन्तसिंह सपरिवार भारत के लिए रवाना हुए । शँघाई पहुँचे । वहीं आपके घर एक पुत्र भी उत्पन्न हुआ । वहाँ कार्य के सम्बन्ध में आपको अपना घर लौटने का इरादा बदलना पड़ा । परिवार तो करतारसिंह के साथ भारत को भेज दिया और वहीं ठहर गए । वहाँ का काम समाप्त कर आप बैंकाक पहुँचे ।

उन दिनों दूर पूर्व में जो विद्रोह के प्रयत्न हो रहे थे, उन्हीं के संगठन तथा नियन्त्रण में आपको कार्यवश ठहरना पड़ा था । बैंकाक में आप बीमार हो गए । दशा नाजुक हो गई, अस्पताल जाना पड़ा । नासमझ डॉक्टर ने आपरेशन कर डाला और वह भी बिना क्लोरोफार्म सुंघाए ही । आपका कष्ट और निर्बलता बढ़ गई । अभी चलने-फिरने योग्य भी न हुए थे कि अस्पताल वालों ने आपको चले जाने को कहा । इतना उतावलापन क्यों किया गया, उसका भी कारण था । बाहर पुलिस गिरफ्तार करने के लिए खड़ी थी । द्वार से बाहर निकलते ही आपको गिरफ्तार कर लिया गया । थाईलैण्ड की स्वतन्त्र सरकार ने श्री बलवन्तसिंह तथा आपके साथियों को चुपचाप अंग्रेज सरकार के सुपुर्द कर दिया ।

श्री बलवन्तसिंह को सिंगापुर लाया गया । १९१६ में आपको लाहौर-षड्यन्त्र के दूसरे अभियोग में शामिल किया गया । मृत्यु-दण्ड

की सजा मिली। इसी वर्ष की १८ मार्च को श्री बलवन्तसिंह की धर्मपत्नी अन्तिम मुलाकात के लिए गईं। उनकी पुस्तकें तथा कड़े आदि सामान देते हुए बताया गया कि कल उन्हें फाँसी दे दी गई। उनकी धर्मपत्नी कलेजा थामकर रह गईं।

इस महान् विप्लवी का नाम भारत कभी नहीं भूल सकेगा।

श्री बन्तासिंह

जिस तरह श्री यतीन्द्रनाथ मुकर्जी को बंगाल पुलिस का आतंक कहा जाता था उसी भाँति आपको पंजाब पुलिस का आतंक कहा जाता था।

जिला जालन्धर के मगवाल गाँव में आपका जन्म १८९० ई० में हुआ था। १९०४-५ में काँगड़ा में भारी भूकम्प आया था, जिससे बहुत हानि हुई थी। उन दिनों आप जालन्धर के डी० ए० वी० हाई स्कूल में पढ़ते थे। आप भी अपने सहपाठियों का एक जत्था लेकर धर्मशाला में पीड़ितों की सहायता के लिए गए थे। आपकी कार्य-कुशलता और तत्परता देखकर सभी आप पर मुग्ध हो गए थे।

स्कूल की शिक्षा समाप्त कर चुकने के बाद आपने विदेश के लिए प्रस्थान किया। पहले आप चीन गए और फिर वहाँ से अमेरिका चले गए।

पर अमेरिका से अपने गुलाम होने का कटु अनुभव लेकर स्वदेश लौट आए। देश को स्वतन्त्र कराने का दृढ़ निश्चय कर लिया। स्वदेश लौटते ही आपने अपने गाँव में एक स्कूल खोला और एक पंचायत बनाई। गाँव के लोग इस पंचायत द्वारा किए गए निर्णयों को सहर्ष शिरोधार्य करते थे। एक बार तो यहाँ तक नौबत आ

गई कि आपने चीफ-कोर्ट के फैसले तक को बदल डाला और दोनों पक्ष के लोगों ने आपके निर्णय के आगे सिर झुका दिया । उधर आपका घर अमेरिका से लौटे हुए भारतीयों का केन्द्र बना हुआ था । एक दिन पुलिस ने अचानक आपके घर पर छापा मारा । आप घर में मौजूद नहीं थे । आपके बहुत से कागजात पुलिस उठाकर ले गई । उनमें आपके लिखे हुए कई-एक पैम्फलेट भी थे । उन्हें देखकर आपके नाम का वारण्ट निकाला गया, परन्तु आप पकड़े नहीं जा सके ।

एक दिन आप अपने साथी श्री सज्जनसिंह फिरोजपुरी के साथ लाहौर के अनारकली बाजार में होने वाली एक गुप्त बैठक में भाग लेने के लिए जा रहे थे । अनारकली में जाते-जाते एक सब-इन्स्पेक्टर से मुठभेड़ हो गई । वह आपकी तलाशी लेने का आग्रह करने लगा । आपने बड़े सहज भाव से उसे समझाने की चेष्टा की कि शरीफ आदमी इस तरह व्यवहार नहीं किया करते । पर सब-इन्स्पेक्टर ने पीछा नहीं छोड़ा । जब उसने एक भी नहीं सुनी, तो आपने कहा—

"अच्छा तो ले, तलाशी ही ले ले ।"

वह तलाशी लेने के लिए जैसे ही आगे बढ़ा, तो आपने धीरे से अपना पिस्तौल निकालकर, यह कहते हुए कि तलाशी न लेता तो अच्छा था, मेरे पास तो यही है, सो ले—उस पर फायर कर दिया । सब-इन्स्पेक्टर वहीं पर धराशायी हो गया । आप भाग निकले । पैर में चोट आ जाने के कारण साथी तो भागने में सफल नहीं हुआ । आप मियाँमीर स्टेशन पर पहुँचे । वहाँ पुलिस पहले ही प्रतीक्षा में थी । परन्तु आप किसी तरह ट्रेन पर सवार हो गए । गाड़ी के उसी डिब्बे में बहुत से पुलिस के सिपाही सवार हो गए । आपने भी

ताड़ लिया। अटारी स्टेशन पर ट्रेन ठहरने ही वाली थी कि आप ट्रेन से कूद गए। पुलिसवाले हाथ मलते ही रह गए। वहाँ से आप जालन्धर पहुँचे।

उस समय गदर पार्टी के तत्कालीन प्रमुख कार्यकर्त्ता भाई प्यारासिंह को नंगल कलां जिला हुशियारपुर के जैलदार चन्दासिंह ने पकड़वा दिया था। आपने मिलकर फैसला किया कि अब इन देश-द्रोहियों को दण्ड देना चाहिए। आपने भाई बूरासिंह और जीवन्दसिंह को साथ लिया और चन्दासिंह को उसके घर में जाकर मार डाला। उसी सिलसिले में आपने अमृतसर जिले में एक पुल भी डाइनोमाइट से उड़ा दिया।

उसके बाद भी पुलिस से कई बार मुठभेड़ हुई, परन्तु आपका कुछ ऐसा रौब छा गया था कि पुलिसवाले आपसे कन्नी काट जाते थे। एक बार पुलिस के घुड़सवारों ने आपका पीछा किया। आप ६० मील तक उनके आगे-आगे भागते चले गए। वे बड़े सुदृढ़ तथा शक्तिशाली थे। एक बार बंगाल के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री नलिनी बागची भी गोहाटी में जब पुलिस से दो-दो हाथ करके बच गए थे, तो वह भी एक बार ही ८० मील तक चले थे।

श्री बन्तासिंह को कुछ ऐसा विश्वास-सा हो गया था कि वहं अपने किसी सम्बन्धी के विश्वासघात से ही पकड़े जाएँगे। परन्तु स्वास्थ्य के अधिक बिगड़ जाने के कारण आप कुछ न कर सके। लाहौर-षड्यन्त्र का मुख्य केस उन दिनों चल रहा था। गदर-पार्टी का संगठन तहस-नहस हो चुका था। ऐसी हालत में आत्मनिर्भरता के अतिरिक्त और कोई सहारा शेष नहीं था। इसलिए रुग्णावस्था में आपको अपने घर जाना पड़ा। बहुत दिनों तक वहीं सुरक्षित

रहे। परन्तु बाद में एक सम्बंन्धी उन्हें आग्रह करके अपने घर ले गया ताकि उनकी चिकित्सा पर अधिक ध्यान दिया जा सके। वह उसका आग्रह टाल न सके। उसी रिश्तेदार ने पुलिस को खबर दे दी।

पुलिस ने चारों ओर से घर को घेर लिया। उस छोटी कोठरी का द्वार खोलते ही सामने पुलिस खड़ी देखकर आप खिलखिलाकर हँस पड़े और अपने रिश्तेदार से कहने लगे—

"भाई! पुलिस को बुलाना था, तो मुझे एकदम निशस्त्र क्यों कर दिया था, पिस्तौल-रिवाल्वर नहीं तो एक लाठी या डण्डा ही रहने देते। एक वीर सैनिक की भाँति लड़ता-लड़ता प्राण तो दे सकता।"

इस पर पुलिस कप्तान ने कहा—"वाह जनाब! बड़े वीर बने फिरते हो! हम लोग क्या सभी कायर और बुजदिल ही हैं?"

आप मुस्कराए और कहा—"बहुत खूब! इस समय आप मुझे निशस्त्र एक कोठरी में बन्द देखकर गिरफ्तार करने के लिए आगे बढ़ने का साहस कर रहे हैं। जरा बाहर निकल जाने दो, तो फिर देखूं कौन पकड़ सकता है?"

उस वीर सैनिक की यह इच्छा कि सैनिक की भाँति लड़ता हुआ प्राण दे, पूर्ण न हुई। आप गिरफ्तार करके होशियारपुर लाए गए। सैकड़ों की संख्या में लोग आपके दर्शनों के लिए जमा होने लगे। कचहरी का हाता खचाखच भर गया था।

आपको होशियारपुर से लाहौर लाया गया। श्री बलवन्तसिंह के साथ आप पर भी अभियोग चला। फाँसी का हुक्म सुनकर आपको असीम आनन्द का अनुभव हुआ। इस तरह पंजाब का एक

और नर-रत्न स्वतन्त्रता की बलि-वेदी पर प्राणोत्सर्ग कर गया।

श्री रंगासिंह

जालन्धर के खुर्दपुर गांव में आपका जन्म हुआ। स्कूल की शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् सेना में नौकरी कर ली। १६०८ में आप सेना छोड़कर अमेरिका चले गए। वही पुरानी कथा—गदर-पार्टी बनी, अखबार निकला। प्रचार हुआ। आपके विचारों ने भी पलटा खाया। सन् १९१४ में, भारत को स्वतन्त्र कराने का संकल्प लेकर आप भी भारत लौट आए।

१९ फरवरी के गदर की निश्चित तारीख का पता लग जाने के कारण बहुत से नेता गिरफ्तार करके लाहौर-सैण्ट्रल जेल में बन्द कर दिए गए थे। उन नेताओं को छुड़वाने के लिए जब कपूरथला-राज्य की मैगजीन लूटने की योजना बनी, तो आप उसी दल के नेता थे। पर्याप्त शक्ति का अभाव होने के कारण निश्चय किया गया कि पहले बल्ले के पुल पर तैनात किए गए पुलिस के आदमियों को मारकर उनकी बन्दूकें आदि छीन ली जाएँ और उन्हें लेकर मैगजीन पर हमला किया जाए। आप भी उस अभियान में शामिल थे।

बाद में उसी पुल पर हमला करके ये लोग चार आदमियों को मारकर उनकी बन्दूकें आदि छीन ले गए थे।

२६ जून, १९१५ की रात को एक शरबतवाले की दूकान पर सो रहे थे। पुलिस को किसी भेदिए ने बता दिया। अचानक छापा मारकर पुलिस ने इन्हें गिरफ्तार कर लिया। सरकार के विरुद्ध षड्यन्त्र रचने के अपराध में अभियोग चला। आपको भी अपने अन्य साथियों की भाँति फाँसी की सजा दी गई।

बाबू हरनामसिंह

महाकवि टैगोर ने गुरु गोविन्दसिंह के जुझारू सिक्खों पर एक कविता लिखी थी, जिसका भाव कुछ इस प्रकार था—

"जिन लोगों ने किसी का कर्ज नहीं उठा रखा और मृत्यु जिनके चरणों की दासी है, ऐसे निर्भय और वीर सिक्ख उठे हैं।"

उन्हीं निर्भय नव-रत्नों में बाबू हरनामसिंह भी थे। आपका जन्म जिला होशियारपुर के सादरी गाँव में हुआ था। पढ़ने-लिखने में बड़े तेज थे किन्तु हाई स्कूल में पहुँचते ही एकदम स्कूल छोड़कर सेना में भरती हो गए। एक स्वाभिमानी सेना में कब तक रह सकता था? डेढ़ वर्ष पश्चात् नौकरी छोड़कर घर चले आए। सेना में श्री बलवन्तसिंह से आपका बहुत स्नेह था। विचार भी मिलते थे। दोनों ने नौकरी भी एक साथ छोड़ी थी।

तत्पश्चात् आप बर्मा गए। वहाँ से हांगकांग जाकर ट्राम-कम्पनी में नौकरी कर ली। उन दिनों जो भारतीय कनाडा और अमेरिका जाने के लिए घर से आते थे उन्हें इमिग्रेशन विभाग वाले निराश घर लौटा देते थे। उन बेचारों के पास खाने तक को कुछ नहीं बचता था। बाबू हरनामसिंह अपने पास से सहायता देकर उनका ढाढ़स बँधाते थे।

धीरे-धीरे उन्हें पता चला कि अमेरिका में लोग बड़े मजे में रहते हैं और वहाँ के वातावरण में रहकर साधारण-से-साधारण भारतीय भारत को स्वतन्त्र करवाने की चिन्ता करने लगता है। स्वतन्त्रता का पाठ सीखने का उपयुक्त स्थान समझकर आपने हांगकांग-स्थित भारतीयों को अमेरिका जाने के लिए प्रोत्साहित करना शुरू कर दिया।

सन् १६०६ को जब कि आपकी आयु २० साल से भी कम थी अमेरिका के लिए प्रस्थान किया। एक वर्ष तक विक्टोरिया (कनाडा) में रहे। फिर कनाडा से अमेरिका आ गए। वहाँ सीएटल नगर के ऐक स्कूल में पढ़ने लगे। तीन वर्ष तक बड़े यत्न से पढ़े।

कुछ समय अमेरिका में रहने के पश्चात् आप फिर कनाडा चले गए और वहाँ से एक 'दी हिन्दुस्तान' नामक अंग्रेजी पत्र निकालना शुरू कर दिया। आप बड़े ओजस्वो लेखक थे। कनाडा-वासी भारतीयों पर आपका विशेष प्रभाव था। सरकार को यह अच्छा न लगा और उन पर बम बनाने और सिखाने, विद्रोह का प्रचार करने आदि का दोष लगाकर ४८ घंटे के अन्दर कनाडा से निकल जाने की आज्ञा दी गई। बड़ी विकट परिस्थिति पैदा हो गई। तुरन्त उनके एक अंग्रेज मित्र मि० रैमिस्वर्ग ने तार दिया था। उन्होंने कनाडा की सरकार को तार द्वारा सूचित किया था कि हरनामसिंह को निर्वासित न किया जाय। मैं उन्हें साथ ले आने के लिए आ रहा हूँ। मि० रैमिस्वर्ग अपना प्राईवेट बोट लेकर उन्हें अपने साथ अमेरिका ले आए। कुछ समय तक आपने बर्कले यूनिवर्सिटो में विद्योपार्जन भी किया।

जब 'कामा गाटा मारू' जहाज बन्दरगाह पर पहुँचा तो हरिनाम सिंह अपने साथियों सहित बाबा गुरदित्तसिंह तथा अन्य साथियों से सलाह-मशविरा करने गए। वहीं पकड़े गए। बाकी साथियों को छोड़ दिया गया था, पर आपको नहीं छोड़ा गया। देश-निकाले की आज्ञा हुई। कुछ दिन के झगड़े के बाद यह जानकर कि इस बार कोई सफलता नहीं होगी, आप भारत आने वाले एक जहाज पर सवार हो गए। चीन, जापान तथा स्याम आदि में गदर पार्टी

का कार्य करते हुए बर्मा पहुँचे। १९१५ के दिन थे। सिंगापुर के विद्रोह-दमन के बाद बहुत-से गदरी नेता बर्मा पहुँच गए थे। इरादा था कि अक्तूबर, १९१५ को बकरीद के दिन विद्रोह खड़ा किया जाए और बकरों की जगह गोरे शासकों को कुर्बानी दी जाए। परन्तु बाद में २५ दिसम्बर का दिन निश्चित किया गया। इन्हीं सब चेष्टाओं में दिन-रात जुटे रहकर वे घोर परिश्रम कर रहे थे कि एक दिन एकाएक मांडले में गिरफ्तार कर लिए गए। अभियोग चला। मृत्यु-दण्ड दिया गया। इसी दौरान में आप जेल से भाग गए, किन्तु शीघ्र ही पकड़कर फांसी पर लटका दिए गए।

श्री सोहनलाल पाठक

१९१४ के दिन थे। अमेरिका की गदर पार्टी की ओर से प्राय: सभी देशों में गदर प्रचार के लिए आदमो भेजे जा रहे थे। पाठक जी को प्रचार-कार्य के लिए बर्मा भेजा गया। पहले बैंकाक आए। कुछ दिन वहाँ कार्य करने के बाद बर्मा आ गए। संगठित रूप से अपना केन्द्र बनाकर गदर की तयारी करने लगे।

गदर के लिए निश्चित तारीख़ २१ फरवरी आई और निकल गई। भेद खुल जाने से बलवा न हो सका और चारों ओर धड़-पकड़ होने लगी। एक दिन जब कि वे मेमियो के तोपखाने में गदर का प्रचार कर रहे थे, कि एक जमादार ने उन्हें गिरफ्तार करवा दिया। तीन पिस्तौलें तथा २७० कारतूस पास होते हुए भी न जाने सोहनलाल ने उस समय उनका प्रयोग क्यों नहीं किया।

पाठक जी जेल में बन्द थे। अधिकारियों के आने पर अन्य कैदियों ने तो झुक-झुककर सलाम करना प्रारम्भ कर दिया। किन्तु आप अपने स्थान से जरा भी नहीं हिले। बोले—"जब मैं अंग्रेजों

को, उनके राज्य को अन्यायी और अत्याचारी मानता हूँ, तो उनकी जेल के नियम ही क्यों मानूँ ?"

फाँसी के दिन एक अंग्रेज मैजिस्ट्रेट ने आकर माफी माँग लेने के लिए कहा। सोहनलाल ने मुस्कराते हुए कहा—

"क्षमा माँगनी हो तो अंग्रेज मुझसे माँगें। मैंने तो कोई अपराध नहीं किया। असली अपराधी तो वे ही हैं।"

अपने अन्य क्रान्तिकारी साथियों की भाँति स्वातन्त्र्य-संग्राम का यह सेनानी भी हँसते-हँसते कुर्बान हो गया।

फाँसी की रस्सी को चूमनेवाले यह गदर पार्टी के नेता थे, जिन्होंने गदर पार्टी की नींव डालने में अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया था। इनके अलावा क्रान्ति के जिन मूक कार्यकर्त्ताओं ने देश के लिए बलिदान दिया उनकी क्रान्तिकारी लगन तथा कुर्बानी के सम्मुख मस्तक झुक जाता है।

गदर पार्टी के प्रथम प्रधान बाबा सोहनसिंह तथा उनके प्रमुख साथी संत विसाखासिंह, श्री ज्वालासिंह ठट्टियाँ, केसरसिंह ठठगढ़ आदि को आजीवन कारावास का दण्ड दिया गया। अंडमान के नरक में इन्होंने जो ब्रिटिश अधिकारियों की यातनाएँ और अत्याचार झेले, उनकी कहानी सुनते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं। जेल की काल-कोठरी में भी ये जांबाज अपने अधिकारों के लिए जूझते रहे।

रूस की बोलशेविक क्रान्ति के पश्चात् गदर पार्टी का सीधा झुकाव साम्यवाद की ओर हो गया। और जैसे ही वे जेलों से छूटते गए—साम्यवादी आन्दोलन में शामिल होते गए।

गदर पार्टी के महामंत्री भाई संतोखसिंह रूस से भारत लौटते हुए सीमांत पर पकड़कर नजरबंद कर दिए गए। नजरबंदी से रिहा

होने के बाद उन्होंने पंजाब में समाजवाद का प्रचार करने के लिए 'किरती' (श्रमजीवी) मासिक पत्र आरम्भ किया। इस मासिक पत्र के सम्पादकीय विभाग में शहीद सरदार भगतसिंह ने भी कुछ समय तक काम किया था। इस पत्र ने पंजाब में समाजवादी विचारधारा की नींव डालने का काम किया। भाई संतोखसिंह ने बड़ी लगन तथा उमंग से इस काम को जारी रखा। पर दुर्भाग्यवश उनका स्वास्थ्य गिर गया। टी० बी० के भयंकर रोग से उनकी मृत्यु हो गई।

बाबा ज्वालासिंह पंजाब के किसान आन्दोलन के उन्नायक बने। जैसे स्वामी सहजानन्द सरस्वती ने बिहार में किसान आन्दोलन को नींव डाली थी वैसे हो पंजाब में किसान सभा का संगठन करके बाबा ज्वालासिंह ने किसानों के आन्दोलन चलाए। एक आकस्मिक मोटर-दुर्घटना ने इन्हें हमसे छीन लिया।

संत बाबा विसाखासिंह (जिनका गत वर्ष देहान्त हो गया) ने देशभक्त परिवार सहायक कमेटी कायम करके पीड़ित देशभक्तों की भरसक सहायता करने में ही अपना शेष जीवन लगा दिया।

गदर पार्टी के संस्थापकों में से अब कुछ महापुरुष हमारे बीच मौजूद हैं। ९० वर्ष की आयु में गदर पार्टी के प्रधान बाबा सोहन-सिंह भकना अपने गाँव में एक शिक्षण-संस्था का संचालन कर रहे हैं। सरदार पृथ्वीसिंह, भाई भगवानसिंह तथा बाबा गुरमुख-सिंह वयोवृद्ध होते हुए भी उत्साह में किसी से पीछे नहीं हैं। और अपने-अपने क्षेत्र में सक्रिय रूप से देश के भावी निर्माण-कार्य में जुटे हुए हैं।

आजादी के इतिहास के इस सुनहरी पृष्ठ को जब हमारी

भावी संतानें पलटकर देखा क़रेंगी, तो अनायास ही उनका हृदय देशभक्ति की भावनाओं से भर जाया करेगा। वे भी देश के लिए जीना और देश के लिए हँसते-हँसते मरना सीखेंगे...और हाँ देश पर मर मिटनेवाले माँ के लाड़ले वीरों को हम कभी न भूलेंगे।

परिशिष्ट

सिंगापुर का विद्रोह

[पं० परमानन्दजी की आत्मकथा का एक अंश]

सिंगापुर में मैं अपने मित्रों से मिला। गदर अखबार और कुछ दूसरी पुस्तकें, जो आश्रम से भेजी गई थीं, उन्हें बाँट दिया, खास-खास किताबें थीं—नोम हकीम खतराए जान, गदर की गूँज और लैण्ड एण्ड लिवर्टी इत्यादि। जब घूम-फिरकर हम लोग वापस आए तो मीटिंग की तैयारी हुई। वहाँ के अफसर मेरे पहले के दोस्त थे। उन्होंने करीब-करीब सब जिम्मेदार अफसर और सिपाही वहीं बुला लिए थे। मैं मित्रों से बातें कर रहा था कि सब तैयारी हो गई और लोग कहने लगे कि यहाँ पर किसको बोलने को कहें। पं० जगतरायजी से कहा गया तो उन्होंने इन्कार किया। पृथ्वीसिंह जी ने और भाई केशरसिंह जी ने मुझे कहा कि आप ही बोलिए। मैं तो रोज बोलता ही था इसलिए यह काम मुझको करना पड़ा। मेरे ३०० साथी थे और कुछ दूसरे मुसाफिर भी थे। सामने २०० के करीब फौज के सिपाही और देशी अफसर थे और कुछ शहर के लोग भी थे, जिनमें मेरे पुराने जान-पहचान के लोग भी थे जो मुझे बड़े प्रेम की दृष्टि से देख रहे थे। दो वर्ष पहले मैंने यहाँ पर तीन

लेक्चर भगवद् गीता पर दिए थे। उसकी याद बहुतों को अभी ताजी थी। आखिर पार्टी का आदेश मानकर मैंने अपना भाषण शुरू किया। बोलने के पहले यह बात अच्छी तरह समझ ली थी कि यह लेक्चर दूसरी तरह का लेक्चर नहीं है। फौज के सामने बोलने का अर्थ है फाँसी या गोली। ज्यों ही मैंने बोलना शुरू किया मेरे मन में तीन विचार चक्कर काट रहे थे। एक तरफ कर्त्तव्य, दूसरी तरफ पार्टी का आदेश और तीसरी तरफ देश के प्रति विश्वासघात। आखिर मेरी पार्टी के आदेश और कर्त्तव्य की विजय हुई। मैंने अपनी वह स्पीच शुरू की, जिसने सिंगापुर को रक्त-रंजित कर दिया। दो महीने और २१ दिन के लिए शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य को उखाड़ कर अलग फेंक दिया और सिंगापुर में भारतीय झण्डा फहरा दिया

भाइयो

आपको मालूम है कि हम सब गदर पार्टी के मेम्बर अमेरिका से आ रहे हैं। इस पार्टी ने अब यह कसम खाई है कि हम देश में पहुँचकर गदर करेंगे और साम्राज्यवादियों की जड़ों को उखाड़कर फेंक देंगे। हमारी पार्टी के कई हजार सिपाही हमसे पहले जहाजों देश में पहुँच चुके हैं। शायद आप लोगों को यह बात मालूम होगी कि ये गदर पार्टी अपने फौजी भाइयों को निमन्त्रण भेज चुकी है कि आजादी के जंग में वे हमारी सहायता करें।

आप लोग भारत के सिपाही हैं और भारत माता की मान

मर्यादा की रक्षा आप लोगों के हाथ में है। आप जानते हैं कि हिन्दुस्तान की आजादी का पहला युद्ध भी आप लोगों के बुजुर्गों ने ही शुरू किया था। साम्राज्यवादी उसे सिपाही-गदर कहते हैं। बतलाइये, आजादी का युद्ध तो वे ही करेंगे जो योद्धा है। मेरठ में जब पिछले गदर के वक्त सिपाहियों को मालूम हुआ कि फिरंगी हमारा धर्म बरबाद कर रहे हैं तो धर्म के नाम पर दो लाख सिपाहियों ने गदर कर दिया था। आप सिपाहियों ने ही गदर किया था। आप सिपाही हैं, माता के वीर पुत्र हैं, आपकी भुजाओं में बल है, पैरों में चलने और दौड़ने की शक्ति है,दिल में हिम्मत है और सिर में वीरों की शान सो रही है। क्या आप लोग नहीं देखते कि आपके वे बुजुर्ग, जिनको अंग्रेजों ने दिल्ली से पटना तक दरख्तों में टाँग-टाँगकर फाँसी दी थी, आज स्वर्ग में बैठे हुए आपको शुभ समय की सूचना दे रहे हैं···
············अगर तुम्हारी आँखों में प्रताप और शिवा जी की दृष्टि है, दिल्ली के बूढ़े बादशाह की दृष्टि है, तो आँखें खोलकर देखिये। अपना बदला लेने की वीर भावनाओं से ऊपर को नजर उठा कर देखिए। वे आकाश से आपको पुकार रहे हैं, ललकार रहे हैं। अगर आप सच्चे हिन्दुस्तानी हैं और उन्हीं वीरों की सन्तान हैं, जिन्होंने हजारों वर्ष तक देश की मान-मर्यादा की रक्षा के लिए देश के इंच-इंच स्थानों पर लाखों सिरों को चढ़ाया है और चढ़ाते रहे हैं, तो वे भावनाएं और देश-जाति की माँ-बहनों की मान-मर्यादा की वे सचोट बातें आज आपको कैसे नहीं जगायेंगी, जब एक ही वीर वंश का रक्त हमारी धमनियों से प्रवाहित हो रहा है? तो वे भावनाएं अब भी उस रक्त में उसी तरह विद्युत शक्ति को सोते से जगा देंगी, जैसे पहले जगाती रही हैं। हमारे धर्मशास्त्रियों ने हमारी माँ-बहनों

के नहीं जायगा। हम लोगों की कुछ समझ में न आया कि आखिर क्या बात है।

दो-तीन दिनों के पीछे जब इतवार के दिन हम पीनांग के गुरुद्वारे में पहुँचे तो वहाँ पर परिचित लोगों के द्वारा पता लगा कि सिंगापुर की तीन हजार फौज ने वहाँ के सब अंग्रेज सैनिकों को मारकर सिंगापुर के किले पर कब्जा कर लिया है।